भजन-सूची

अ

अयि नन्दतनूज	179	अक्रोध परमानन्द	39
अवतार सार	44	अनेक लोकेर	173
अनादि करम-फले	180	अपराध फले मम	184
अब तो माधव	199	अब तो हरिनाम	199
अब मैं शरण	200		

आ

आश्लिष्य वा	188	आत्मनिवेदन तुया	109
आरे भाई! भज मोर	42	आर केन माया जाले	113
आलि! म्हाँने लागे	199	आमार जीवन सदा पापे	117
आमि कृष्ण पद	188	आज अवधपुरी	212

उ

उदिल अरुण	64	उत्तम हञा आपनाके	175
उद्वेगे दिवस ना याय	186		

ए

एइबार करुणा कर वैष्णव	26	एइबार करुणा कर चैतन्य	62
एखन बुझिनु प्रभु	99	एमन दुर्मति संसार	52

ओ

ओहे! वैष्णव ठाकुर	30	ओहे! प्रेमेर ठाकुर	56
ओरे मन, भाल नाहि	100	ओ मन! प्रेम से	197
ओ मैया तेरे द्वारे	211		

औ

और कौन है	192		

क

कृष्ण हइते	12	कबे श्रीचैतन्य	43
कृपा कर वैष्णव	29	कबे मुई वैष्णव चिनिव	32
कि रूपे पाइव	37	कबे आहा गौरांग	51
कबे गौर-वने	51	कबे ह'बे हेन	55

कलिकुक्कुर कदन	66	कबे कृष्ण धन	94
कोथाय गो प्रेममयी	110	कृष्ण जिनका नाम है	221
कृष्ण नाम तू भज	196	कलियुग पावन	205
कृष्ण चैतन्य अद्वैत	206	कृष्ण गोविन्द हरे	207
कृष्ण कृष्ण कृष्ण	208	कभी कभी भगवान को	214
करो हरि का भजन	223	कृपा करो हम पर श्यामसुन्दर	223
करारविन्देन पदारविन्दं	169	कहाँ कृष्ण प्राणनाथ	210

ग

गुरुदेव ! कृपा बिन्दु	18	गुरुदेव ! कबे मोर	19
गुरुदेव ! कबे तव	20	गुरुदेव ! बड़ कृपा	21
गुरुदेव ! दयामय	22	गुरुदेवे ! व्रजजने	23
गौरांगेर दुटिपद	45	गोरा पँहु	46
गौरांग बलिते	47	गाय गोरा	54
गोविन्द हरे	207	गौर ना हइत	48
गोपीनाथ आमार	89	गोपीनाथ घुचाओ	88
गोपीनाथ मम	86	गाइते गाइते नाम	186
गौरांग तुमि मोरे	115	गोविन्द मेरी यह प्रार्थना	216

च

चेतोदर्पण मार्जनं	170	चारों ललवा प्रकट भए	213

छ

छाँड़ि मन	202		

ज

जय जय श्रीकृष्ण चैतन्य	53	जय जय राधाकृष्ण	78
जय जय गौराचाँदेर	76	जय गौरहरि	193
जनम सफल ता'र	107	जय राधे जय कृष्ण	72
जय जय राधे कृष्ण	193	जो सुख होत	201
जगत में कोई	203	जय गोद्रुमपति	206
जय मोर मुकुट	206	जय यशोदानन्दन	208
जय गोविन्द जय	208	जय राधा माधव कुंज बिहारी	119
जीव जाग, जीव जाग	65	जय माधव मदन मुरारी	222

जागो वंशीवारे ललना 215
जग में सुन्दर हैं 215
जय शचीनन्दन 210

ठ

ठाकुर वैष्णवगण 31
ठुमक चलत रामचन्द्र 214
ठाकुर वैष्णवपद 34

त

तृणादपि सुनीचेन 62
तुमि सर्वेश्वरेश्वर 97
तावुत्कौ लब्धसंगौ 189
तुहुँ दयासागर 173
तोमार नित्यदास मुञि 180

द

देखिया अरुणोदय 172
दुर्लभ मानव जनम 102
दामोदर वृन्दावन 205
दैनिक वन्दना 231
दयाल निताई चैतन्य 60
दुर्जन संग कबहूँ 203
देव! भवन्तं 182

ध

धन्य कलि तेरा 204
धन, जन नाहि मागों 177
धेनु सहचर 177

न

[नगर संकीर्तन के प्रारम्भ में जय ध्वनि इत्यादि] 224
न धनं न जनं 177
नाम्नामकारी 173
निताई गुणमणि 40
नमो नमः तुलसी महारानी 82
नित नहाने हरि मिले 204
निताई गौरांग 206
नारायण परावेदा 230
नन्द के आनंद 210
नयनं गलदश्रु 183
नदिया गोद्रुमे 39
निताई पद-कमल 41
नमो नमः तुलसी कृष्ण प्रेयसी 83
नमामीश्वरं 166
नादान समझ ले 204
नटवर गुहाचर 205

प

प्रार्थना 169
परम करुण पंहु 61
प्रभु! तव पदयुगे 178
प्रभु मैं हूँ तेरे चरणों 195
प्रेम धन बिना व्यर्थ 184
पूर्वाह्ने धेनुमित्रैर्विपिनमनुसृतं 176
पीतवरण कलिपावन 171
पार करेंगे नैया रे 221
प्रबल प्रेम के पाले 199

ब

ब्रज-जन मन 197
ब्रज के पद 219
बन्धु संगे यदि तव 116

भ

भज रे भज रे 70
भाले गोरा गदाधरेर 75
भूलिया तोमारे 98
भज मन दीन दयाल 195
भए प्रगट कृपाला 213
भावना भावना 69
भज भक्तवत्सल 79
भजहुं रे मन 120
भजो रे मन 202

म

मंगलाचरण 1
मध्याह्नेऽन्योऽन्य 178
मानस, देह, गेह 95
माधव! बहुत मिनति 104
मोहन प्यारे हो 195
महाप्रसादे गोविन्दे 85
मदन गोपाल शरण 194
मो सम कौन कुटिल 202
मेरे तो गिरिधर गोपाल 218

य

युगायितं निमेषेण 185
(यदि) गौर ना हइत 48
यशोमति स्तन्यपायी 205
ये प्रेम सदा भरपूर रहे 209
ये आनिल प्रेमधन 38
यशोमती-नन्दन 118
यशोदा मैया 208

र

राधाभजने यदि 91
राधाकृष्ण बल् बल् 106
राधाकुण्डतट 112
राधेकृष्ण गोविन्द 193

राधे राधे, राधे राधे	194	रात्र्यन्ते त्रस्त	172
राधां स्नातविभूषितां	174	राधां स्नात विभूषित	174
राधाकुण्डे सुमिलन	179	राम कृष्ण वासुदेव	207
राधे श्याम चरण	209	राधे श्याम भजो	209
राधे जय जय	182	राधां सालीगणां	187
राधा वृन्दा उपदेशे	188	राम नाराणानन्त	230
राधा वल्लभ माधव	207	रे मन, कृष्णनाम करि	201
राधे तेरे चरणों की	211	राधा नाम परम	212

व

विभावरी–शेष	67	वृन्दावनवासी यत	27
वृन्दा परिचर्या पात्रा	189		

श

शुनियाछि साधु मुखे	25	शुद्ध भकत	35
श्याम म्हाने चाकर	217	श्याम तुझे पाने का	218

स

संसार दावानल	15	सर्वस्व तोमार	107
संकीर्तन हैते	171	सायं राधां	184
सुन्दर लाला	192	सब तजि	201
सोइ रसना जो	200		

ह

हरि हे! प्रपन्चे पड़िया	95	हरि हरि कबे मोर	33
हरि हे! नीर धर्मगत	36	हरि बल, हरि बल	73
हरि हे दयाल	91	हरि हरि! विफले	106
हरि हरि! हेन दिन	93	हरि मैं दास तुम्हारो	196
हरिनाम सुमर सुख	198	हे गोविन्द राखो	200
हमारे व्रज के	207	हरि हरये नम:	114
हरि से लागि रहो	221	हरि बोल मेरी रसना	220
हरे मुरारे मधुकैटभारे	230	हे मेरे गुरुदेव करुणा	191
हरे कृष्ण हरे कृष्ण	230	हे कृष्ण हे यादव	216

श्री

[श्री नृसिंह भगवान के प्रकट दिवस पर कृपा प्रार्थना व जय ध्वनि इत्यादि] 226

श्रीगुरु परम्परा 12

श्रीगुरुचरण पद्म 17

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु दया 48

श्रीहरिवासरे हरिकीर्तन 58

श्रीगुरु-चरणकमल भज 191

श्रीशिक्षाष्टकम् 121

श्री श्रील माधवगोस्वामी-पादपद्मस्तवकैकादशकम् 128

श्रीप्रभुपादपद्मस्तवक: 131

श्रीषड्गोस्वाम्यष्टकम् 136

श्रीनित्यानन्दाष्टकम् 139

श्रीदशावतारस्तोत्रम् 144

श्रीचौराग्रगण्यपुरुषाष्टकम् 152

श्रीगोविन्दस्तोत्रम् 156

श्रीराधां प्रासगेहां 181

श्रीराधिका सायं काले 185

श्रीरूप मंजरी-पद 24

श्रीकृष्ण चैतन्य प्रभु जीवे 50

श्रीकृष्णकीर्तने यदि 176

श्रीराधा कृष्ण पद 85

श्रील तीर्थ गोस्वामी-द्वादशकम् 124

श्रीकृष्ण-विरह आर 186

श्रीगौर किशोराष्टकम् 134

श्रीगौर सुन्दर की शिक्षा 62

श्रीमंगलगीतम् 142

श्रीजगन्नाथाष्टकम् 149

श्रीचौराष्टकम् 154

श्री दामोदराष्टकम् 166

श्रीराधिका गृहे 181

श्रीनाम-ध्वनियाँ 229

श्री श्रीगुरु गौरांगौ जयतः

मंगलाचरण

सपरिकर–श्रीहरि–गुरु–वैष्णव वन्दना

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च,
श्रीरूपं साग्रजातं सहगण - रघुनाथान्वितं तं सजीवम्।
साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं कृष्णचैतन्यदेवं,
श्रीराधाकृष्णपादान् सहगण–ललिता श्रीविशाखान्वितांश्च॥ 1॥

श्रीगुरुदेव–प्रणाम

ॐ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ 2॥

मैं, अपने श्रीदीक्षा गुरुदेव के शोभायमान चरणकमलों की वन्दना करता हूँ, एवं शिक्षा गुरुओं की तथा वैष्णवों की वन्दना करता हूँ ; श्री रूप गोस्वामी की तथा श्रीसनातन गोस्वामी की एवं उनके परिकर श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी, श्रीरघुनाथभट्ट गोस्वामी, श्रीरघुनाथदास गोस्वामी एवं श्रीजीव गोस्वामी की वन्दना करता हूँ। श्रीअद्वैत आचार्य एवं श्रीनित्यानन्द प्रभु के परिकर सहित श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु की वन्दना करता हूँ, और अपने गण के सहित ललिता–विशाखा आदि सखियों से युक्त श्रीराधाकृष्ण के पदारविन्दों की वन्दना करता हूँ। (1)

अज्ञानरूपी अन्धकार को ज्ञान–अंजन रूपी शलाका से आँखों को खोलने वाले श्रीगुरु जी के चरणकमलों में प्रणाम है। (2)

नामश्रेष्ठं मनुमपि शचीपुत्रमत्र स्वरूपं,
रूपं तस्याग्रजमुरुपुरीं माथुरीं गोष्ठवाटीम्।
राधाकुण्डं गिरिवरमहो ! राधिकामाधवाशां,
प्राप्तो यस्य प्रथित-कृपया श्रीगुरुं तं नतोऽस्मि॥ 3 ॥

जिनकी अपार कृपा से मुझे इस जगत् में सब भगवन्नाम मन्त्रों में सर्वश्रेष्ठ श्रीहरिनाम और श्रीशचीनन्दन गौर हरि, श्रीस्वरूप दामोदर गोस्वामी, श्रीरूप गोस्वामी जी के बड़े भाई श्रीसनातन गोस्वामी, मथुरा धाम, श्रीगोकुल धाम एवं श्री वृन्दावन धाम, राधाकुण्ड, गोवर्धन पर्वत एवं श्रीराधामाधव जी की सेवा की आशा प्राप्त हुई, ऐसे श्रीगुरुदेव के चरणों में मैं नमस्कार करता हूँ।(3)

श्रील तीर्थ महाराज–प्रणाम

नमः ॐ विष्णुपादाय श्रीगौरप्रियमूर्तये।
श्रीमते भक्तिवल्लभ-तीर्थ-गोस्वामिनामिने॥
मायावाद विखण्डनं गुरावार्ण्यनुकीर्तनम्।
पश्चदेशोपदेशकं प्रसन्नवदनं सदा॥
शुद्ध-भक्ति प्रवाहकं शुद्ध-भक्ति-भगीरथम्।
भक्तिदयित माधवाभिन्न तनुं नमाम्यहम्॥
नामसंकीर्तनामृत रसास्वादविधायकम्।
कृष्णाम्नायकृपामूर्तिं आचार्यं तं नमाम्यहम्॥
गौर-नाम प्रचारार्दं भक्तसेवानुकांक्षिणम्।
सतीर्थ्यप्रीतिसद्भावं नौमि तीर्थ महाशयम्॥ 4॥

कलियुग पावनावतारी भगवान श्रीगौर सुन्दर जी के अत्यन्त प्रियतम् स्वरूप श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी को मैं नमस्कार करता हूँ। आप मायावाद रूपी असत् शास्त्रों को भक्ति के विशुद्ध सिद्धान्तों द्वारा खण्डन करने वाले हैं। आप हमेशा ही अपने गुरुजी से सुनी दिव्य वाणी का ही अनुकीर्तन करते रहते हैं। पश्चिमी देशों में अर्थात विदेशों में भी आप भगवद्–भक्ति का उपदेश देते रहते हैं, आपका चेहरा हमेशा प्रसन्नता से खिला रहता है।

आप शुद्ध–भक्ति की गंगा को प्रवाहित करने वाले हो, हे शुद्ध भक्ति के भगीरथ! आप श्री श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज जी के ही अभिन्न स्वरूप हो। आपको मेरा नमस्कार है। श्रीहरिनाम–संकीर्तन के द्वारा ही अखिल–रसामृत मूर्ति, नन्द–नन्दन, भगवान श्रीकृष्ण जी के नाम, रूप, गुण, लीला व धाम आदि के अमृत रस का महा–मधुर रसास्वादन करने एवं करवाने वाले, भगवान श्रीकृष्ण की कृपा के मूर्त–स्वरूप व उनकी दिव्य–ज्ञान–परम्परा में स्वयं आचरण करके शिक्षा देने वाले हे आचार्य! आपको मैं नमस्कार करता हूँ। भगवान श्रीगौरहरि के मधुर रसमय नाम का निरन्तर प्रचार करने से जिनका कोमल हृदय उस दिव्य नाम–रस से लबालब हो गया है, जो हर समय ही भगवान के भक्तों की सेवा करने की आकांक्षा करते रहते हैं तथा अपने गुरु–भाईयों में जिनका बहुत प्यार है, जो अपने प्रत्येक गुरु–भाई के प्रति सद्भाव रखते हैं, ऐसे श्रीभक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज रूपी महापुरुष को मैं प्रणाम करता हूँ।(4)

श्रील माधव गोस्वामी महाराज–प्रणाम

नम ॐ विष्णुपादाय रूपानुग प्रियाय च।
श्रीमते भक्तिदयितमाधवस्वामी - नामिने॥
कृष्णाभिन्न-प्रकाश-श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे।
क्षमागुणावताराय गुरवे प्रभवे नमः॥
सतीर्थप्रीतिसद्धर्म - गुरुप्रीति - प्रदर्शिने।
ईशोद्यान - प्रभावस्य प्रकाशकाय ते नमः॥
श्रीक्षेत्रे प्रभुपादस्य स्थानोद्धार - सुकीर्तये।
सारस्वत गणानन्द - सम्वर्धनाय ते नमः॥ 5 ॥

श्रीरूपगोस्वामी के अनुगत एवं उनके प्रियजन विष्णुपादपद्म–स्वरूप नित्यलीला प्रविष्ट 108 श्री श्रीमद्भक्ति दयित माधव महाराज नाम वाले गुरुदेव को नमस्कार है। श्रीकृष्ण की अभिन्न प्रकाशमूर्ति, दीनों को तारने वाले, क्षमागुण के अवतार और अकारण करुणावरुणालय–स्वरूप गुरुदेव को नमस्कार है।

अपने गुरु–भाइयों में प्रीतियुक्त, सद्धर्म परायण, गुरु–प्रीति के प्रदर्शक और श्रीधाम मायापुर में ईशोद्यान नामक स्थान के प्रभाव को प्रकाश करने वाले गुरुदेव को नमस्कार है। श्रीपुरीधाम स्थित प्रभुपाद जी के जन्मस्थान का उद्धार करने वाले, सुकीर्तिमान, सरस्वती ठाकुर प्रभुपाद जी के प्रिय पार्षदों के आनन्द–वर्धनकारी—गुरुदेव को नमस्कार है।(5)

श्रील प्रभुपाद–प्रणाम

नम ॐ विष्णुपादाय कृष्णप्रेष्ठाय भूतले।
श्रीमते भक्तिसिद्धान्त-सरस्वतीति नामिने॥
श्रीवार्षभानवीदेवीदयिताय कृपाब्धये।
कृष्णसम्बन्धविज्ञानदायिने प्रभवे नमः॥
माधुर्योज्ज्वलप्रेमाढ्य-श्रीरूपानुगभक्तिद।
श्रीगौरकरुणाशक्तिविग्रहाय नमोऽस्तुते ॥
नमस्ते गौरवाणी श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे।
रूपानुगविरुद्धापसिद्धान्त - ध्वान्तहारिणे ॥ 6 ॥

भूतल में अवतीर्ण एवं श्रीकृष्ण के अतिशय प्रिय, ॐ विष्णुपाद परमहंस 108 श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी नामक प्रभुपाद के लिये हमारा नमस्कार है। अकारण करुणावरुणालय–स्वरूप एवं वृषभानुनन्दिनी श्रीमती राधिकादेवी के प्रियभक्त, तथा श्रीकृष्ण के सम्बन्ध के विज्ञान को देने वाले प्रभुपाद के लिए हमारा नमस्कार है। मधुर रसाश्रित–उज्ज्वलप्रेम से युक्त श्रीरूप गोस्वामी की अनुगत भक्ति को देनेवाले, हे प्रभुपाद! आपके लिये हमारा नमस्कार है; क्योंकि आप श्रीगौरांगमहाप्रभु जी की कृपाशक्ति के विग्रहस्वरूप हो, एवं आप श्रीगौरांगदेव जी की वाणी के शोभायमान साकार रूप हो, दीनजनों का उद्धार करनेवाले हो, तथा श्रीरूप गोस्वामी के अनुगत भक्तों के विरुद्ध जो अपसिद्धान्तरूप–अन्धकार है, उसको हरने वाले हो, एवं गुणविशिष्ट शिष्टाग्रगण्य आपके लिये हमारा कोटिशः प्रणाम है। (6)

श्रील गौरकिशोर–प्रणाम

नमो गौरकिशोराय साक्षाद्वैराग्यमूर्त्तये ।
विप्रलम्भरसाम्भोधे! पादाम्बुजाय ते नमः ॥ 7 ॥

वैराग्यरस के साक्षात् मूर्तिस्वरूप ऊँ विष्णुपाद परमहंस 108श्री श्रीमद् गौरकिशोर दास बाबाजी महाराज के लिये हमारा नमस्कार है। हे विप्रलंभरस के समुद्र–स्वरूप प्रभो! आपके श्रीचरणारविन्दों में हमारा प्रणाम है।(7)

श्रीलभक्तिविनोद–प्रणाम

नमो भक्तिविनोदाय सच्चिदानन्द–नामिने।
गौरशक्तिस्वरूपाय रूपानुगवराय ते ॥ 8 ॥

ऊँ विष्णुपाद परमहंस 108श्री श्रीमत् सच्चिदानंद भक्तिविनोद ठाकुर नाम वाले एवं श्रीगौरांगदेव जी के शक्तिस्वरूप तथा श्रीरूप गोस्वामी के अनुगत भक्तों में श्रेष्ठ, आपके लिये हमारा कोटिशः प्रणाम है।(8)

श्रील जगन्नाथदास बाबाजी–प्रणाम

गौराविर्भावभूमेस्त्वं निर्देष्टा सज्जनप्रियः।
वैष्णवसार्वभौम–श्रीजगन्नाथाय ते नमः॥ 9 ॥

ऊँ विष्णुपाद परमहंस 108श्री श्रीमद्वैष्णव–सार्वभौम श्रील जगन्नाथदास बाबाजी महाराज आपके लिये हमारा प्रणाम है। आप श्रीगौरांगदेव जी के प्रादुर्भाव की भूमि नवद्वीपान्तर्गत श्रीअन्तर्दीप श्रीमायापुर–धाम का निर्देश करने वाले हो, सज्जनमात्र के ही प्रिय हो एवं वैष्णवों के तो आप मुकुटमणि हो।(9)

श्रीवैष्णव प्रणाम

वाञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः ॥ 10 ॥

अपने आश्रितजनों की अभिलाषा पूर्ति के लिये कल्पवृक्षस्वरूप एवं कृपा के सिन्धुस्वरूप, तथा पतितजनों को पावन बनाने वाले वैष्णवों के लिये हमारा बारम्बार नमस्कार है।(10)

श्रीगौरांगमहाप्रभु–प्रणाम

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः॥ 11॥

हे श्रीगौरांग महाप्रभो! आपके लिये हमारा कोटिशः प्रणाम है; क्योंकि आप बहुत समय से न दी गयी व्रजसंबंधिनी प्रेमलक्षणा भक्ति के दाता होने के कारण महावदान्य हो, अतः श्रीकृष्ण संबंधी प्रेम को देने वाले हो, आप साक्षात् श्रीकृष्ण स्वरूप हो। आप श्रीकृष्णचैतन्य नामवाले हो, तथा गौरकान्ति वाले हो। (11)

श्रीनित्यानन्द प्रणाम

संकर्षणः कारणतोयशायी गर्भोदशायी च पयोब्धिशायी।
शेषश्च यस्यांशकलाः स नित्यानन्दाख्यरामः शरणं ममास्तु॥ 12॥

संकर्षण, कारण–समुद्रशायी, गर्भोदशायी, क्षीरसमुद्रशायी तथा अनन्तदेव — ये सब जिनके अंश एवं कला (अंश के भी अंश) स्वरूप हैं, उन श्रीनित्यानन्द–नामक श्रीबलराम की मैं शरण ग्रहण करता हूँ। (12)

श्रीअद्वैत–प्रणाम

महाविष्णुर्जगत्कर्ता मायया यः सृजत्यदः।
तस्यावतार एवायमद्वैताचार्य ईश्वरः॥
अद्वैतं हरिणाद्वैताचार्यं भक्तिशंसनात्।
भक्तावतारमीशं तमद्वैताचार्यमाश्रये ॥ 13॥

जगत् की सृष्टि करने वाले महाविष्णु , जो माया के द्वारा इस ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति करते हैं— श्री अद्वैत–आचार्य जी उनके की अवतार हैं। श्री हरि से अभिन्न होने के कारण जिनका नाम अद्वैत है, एवं श्रीकृष्ण–भक्ति का उपदेश करने से जिन्हें आचार्य कहा गया है; उन भक्तावतार ईश्वर श्रीअद्वैताचार्य जी की मैं शरण ग्रहण करता हूँ।(13)

श्रीगदाधर प्रणाम

श्रीह्लादिनी - स्वरूपाय गौरांग–सुहृदे सते।
भक्तशक्ति–स्वरूपाय गदाधर! नमोऽस्तु ते॥ 14॥

आप भगवान श्रीकृष्ण जी की ह्लादिनी शक्ति राधाजी हो, आप श्रीगौरांग महाप्रभु जी के नित्य सुहृद हो। हे भक्त–शक्ति–स्वरूप, श्रीगदाधर जी! आपको नमस्कार है।(14)

श्रीवास प्रणाम

श्रीवास–पण्डितं नौमि गौरांगप्रियपार्षदम्।
यस्य कृपा–लवेनापि गौरांगे जायते रतिः ॥ 15 ॥

आप श्रीवास पंडित जी के नाम से प्रसिद्ध, श्रीगौरांग महाप्रभु जी के ऐसे प्रिय पार्षद हो कि जिनकी लव–मात्र कृपा से श्रीगौरांग महाप्रभु जी में प्रीति उत्पन्न हो जाती है। (15)

श्रीपंचतत्त्व प्रणाम

पंचतत्त्वात्मकं कृष्णं भक्तरूपस्वरूपकम्।
भक्तावतारं भक्ताख्यं नमामि भक्तशक्तिकम्॥ 16 ॥

भक्तरूप–(स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचैतन्य), भक्तस्वरूप–(श्रीनित्यानन्द), भक्तावतार–(श्रीअद्वैताचार्य), भक्त–(श्रीवासादि) एवं भत्तशक्ति–(श्रीगदाधर) इस पंचतत्वात्मक श्रीकृष्ण अर्थात श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु जी को मैं नमस्कार करता हूँ। (16)

श्रीबलदेव–प्रणाम

नमस्ते तु हलग्राम! नमस्ते मुषलायुध!।
नमस्ते रेवतीकान्त! नमस्ते भक्तवत्सल!॥
नमस्ते बलिनां श्रेष्ठ! नमस्ते धरणीधर!।
प्रलम्बारे! नमस्ते तु त्राहि मां कृष्ण–पूर्वज!॥ 17 ॥

कन्धे पर हल धारण करने वाले बलराम जी को मैं नमस्कार करता हूँ, अपने मूसल को हथियार की तरह प्रयोग करने वाले बलराम जी को नमस्कार है। हे रेवती के पति! हे भक्त वत्सल प्रभु! आपको नमस्कार है। हे ताकतवरों में सबसे ज्यादा बलशाली तथा पृथ्वी को धारण करने वाले आपको नमस्कार है। प्रलम्ब नामक असुर को मारने वाले, आपको नमस्कार है। हे श्रीकृष्ण के बड़े भाई! आप मेरी रक्षा कीजिए।(17)

प्रार्थना

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गो–ब्राह्मण हिताय च।
जगद्–हिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ 18 ॥

आप ब्रह्मण्य देव, गाय व ब्राह्मणों का हित करने वाले एवं जगत का मंगल करने वाले हो। हे कृष्ण–स्वरूप! हे गोविन्द–स्वरूप! आपको मैं नमस्कार करता हूँ।(18)

श्रीजगन्नाथदेव प्रणाम

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे।
दुकूलं नेत्रान्ते सहचर–कटाक्षं च विद्धते॥
सदा श्रीमद्वृन्दावन–वसति–लीला–परिचयो।
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥

महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे।
वसन् प्रसादान्तः सहज–बलभद्रेण बलिना॥
सुभद्रा - मध्यस्थः सकल–सुर–सेवावसरदो।
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 19 ॥

बायीं भुजा में वेणु, सिरपर मोरपंख, कमर में पीताम्बर एवं अपने नेत्रप्रान्त में सहचरों के कटाक्षों को धारण करनेवाले तथा श्रीवृन्दावन के निवास की लीलाओं से जो सदैव परिचित हैं, वे श्रीजगन्नाथदेव ही मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ।

महासमुद्र के किनारे सुवर्ण के समान सुन्दर नीलाचल के शिखर में, अपने बड़े भाई महाबलशाली बलदेवजी के साथ, अपने मन्दिर में निवास करनेवाले, एवं सुभद्रा जिनके बीच में विराजमान है तथा जो समस्त देवताओं को अपनी सेवा का अवसर देते रहते हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जाएँ।(19)

श्रीराधा प्रणाम

तप्तकाञ्चनगौरांगि! राधे! वृन्दावनेश्वरि!
वृषभानुसुते! देवि! प्रणमामि हरिप्रिये! ॥ 20 ॥

हे तप्तकाञ्चनगौरांगि! हे वृन्दावनेश्वरि! हे वृषभानुनन्दिनि! हे हरिप्रिये! हे देवि! श्रीमती राधिके! मैं आपको बारंबार प्रणाम करता हूँ॥ (20)

श्रीकृष्ण प्रणाम

हे कृष्ण! करुणासिन्धो! दीनबन्धो! जगत्पते!
गोपेश! गोपिकाकान्त! राधाकान्त! नमोऽस्तु ते॥ 21 ॥

हे करुणासिन्धो! हे दीनबन्धो! हे जगत्पते! हे गोपेश! हे गोपीकान्त! हे राधावल्लभ! श्रीकृष्ण! प्रभो! आपके लिये मेरा कोटिशः प्रणाम है॥ (21)

श्रीसम्बन्धाधिदेव प्रणामः

जयतां सुरतौ पंगोर्मम मन्दमतेर्गती।
मत्सर्वस्वपदाम्भोजौ राधामदनमोहनौ॥ 22 ॥

श्रीराधा-मदनमोहन की जय हो, अर्थात् वे दोनों सर्वदा सर्वोत्कर्ष से विद्यमान रहें; क्योंकि वे दोनों परमदयालु हैं, मुझ पंगु अर्थात् दूसरे स्थान में जाने की शक्ति से रहित एवं मन्दमति अर्थात् मन्दबुद्धि की भी गति हैं अर्थात् रक्षक हैं तथा जिन दोनों के चरणकमल मेरे सर्वस्वस्वरूप हैं। (22)

श्रीअभिधेयाधिदेव-प्रणाम

दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः, श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ।
श्रीश्रीराधा-श्रीलगोविन्ददेवौ, प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि॥ 23 ॥

परमशोभामय श्रीवृन्दावन में कल्पवृक्ष के नीचे, परमसुन्दर रत्नों के द्वारा बने हुए भवन में, मणिमय सिंहासन पर विराजमान, एवं अपनी अतिशय प्रिय श्रीललिता-विशाखा आदि सखियों के द्वारा प्रतिक्षण जिनकी सेवा होती रहती है; मैं उन श्रीमती राधिका एवं श्रीमान् गोविन्ददेव जी का स्मरण करता हूँ। (23)

श्रीप्रयोजनाधिदेव–प्रणाम

श्रीमान् रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः।
कर्षण् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥ 24 ॥

वे श्रीराधागोपीनाथ जी हमारी कुशलता के लिये विद्यमान रहें क्योंकि वे रास संबंधी रस का आरंभ करने वाले हैं, वे वंशीवट के नीचे विराजमान होकर, अपनी वंशीध्वनि के द्वारा गोपियों को अपनी ओर आकर्षित करते रहते हैं।(24)

श्रीतुलसी प्रणाम

भक्त्या विहीना अपराधलक्षैः, क्षिप्ताश्च कामादि तरंगमध्ये।
कृपामयि! त्वां शरणं प्रपन्ना, वृन्दे! नुमस्ते चरणारविन्दम् ॥ 25 ॥

वृन्दायै तुलसीदेव्यै प्रियायै केशवस्य च।
विष्णुभक्तिप्रदे देवि! सत्यवत्यै नमो नमः ॥ 26 ॥

हे कृपामयी देवी! हे वृन्दे! हम तुम्हारे चरणारविन्दों में भावपूर्वक प्रणाम करते हैं; क्योंकि हम सब श्रीहरिभक्ति से विहीन हैं, अतएव लाखों प्रकार के अपराधों से तथा काम व क्रोध आदि की दुस्तर समुद्रों की तरंगों के थपेड़े खा रहे हैं, अतः आपकी शरण में आ रहे हैं। (25)

वृन्दा एवं सत्यवती नामक तुलसीदेवी के लिये मेरा बारंबार प्रणाम है, तथा श्रीकृष्ण की प्रियतमा तुलसीदेवी के लिए मेरा बारंबार प्रणाम है। हे कृष्ण–भक्ति को देनेवाली तुलसीदेवी! आपके लिये मेरा बारंबार प्रणाम है।(26)

श्रीक्षेत्रपाल–शिव–प्रणाम

वृन्दावनावनिपते! जय सोम! सोममौले!
सनक - सनन्दन - सनातन - नारदेड्य
गोपीश्वर ! व्रजविलासि–युगांघ्रि–पद्मे
प्रीतिं प्रयच्छ नितरां निरूपाधिकां मे॥ 27 ॥

श्रीवृन्दावन धाम के रक्षक चन्द्रमौलि श्रीमहादेव जी की जय हो। आप सनक, सनन्दन, सनत कुमार व सनातन नामक चतु:सन के तथा श्रीनारद गोस्वामी जी के भी पूज्य हो। हे गोपीश्वर महादेव जी! आप कृपा करके मुझे भगवान श्रीकृष्ण जी के चरण कमलों में निरन्तर व अहैतुकी प्रीति प्रदान करें।(27)

श्रीधाम-नवद्वीप-वन्दना

श्रुतिश्छान्दोग्याख्या वदति परमं ब्रह्मपुरकं,
स्मृतिर्वैकुण्ठाख्यं वदति किल यद्विष्णुसदनम्।
सितद्वीपन्चान्ये विरलरसिकोऽयं ब्रजवनं,
नवद्वीपं वन्दे परम - सुखदं तं चिदुदितम्॥ 28॥

श्रुतियाँ तथा छान्दोग्य आदि उपनिषदें जिसे भगवान का सर्वोत्तम धाम कहती हैं, स्मृति शास्त्र जिसे वैकुण्ठ कहते हैं, जो कि भगवान विष्णु जी का निवास स्थान है। श्वेत आदि द्वीपों का ये भाग शान्त, दास्य व सख्यादि रसों से परिपूर्ण श्रीवृजमण्डल ही है, ऐसे दिव्य तथा परम सुख देने वाले श्रीनवद्वीप धाम की मैं वन्दना करता हूँ। (28)

श्रीधाम-मायापुर वन्दना

भूमिर्यत्र सुकोमला बहुविधप्रद्योतिरत्नच्छटा,
नानाचित्र मनोहरं खगमृगाद्याश्चर्यरागान्वितम्।
बल्लीभूरुहजातयोऽद्भुततमा यत्र प्रसूनादिभि-
स्तन्मे गौरकिशोर-केलि-भवनः मायापुरं जीवनम्॥ 29॥

जहाँ की भूमि सुकोमल है, जो कि विभिन्न प्रकार के रत्नों के प्रकाश से झलमल-झलमल करती रहती है, जहाँ के दृश्य बड़े ही मनोहर हैं, जहाँ के पक्षी व हिरण आदि पशु भी आश्चर्यमय दिव्य राग अलापते रहते हैं। जहाँ के वृक्ष व लतायें अपने दिव्य फलों और फूलों से हर समय सुसज्जित रहती हैं, ऐसे मायापुर धाम को मैं प्रणाम करता हूँ।(29)

श्रीगुरु–परम्परा

कृष्ण हैते चतुर्मुख, हय कृष्ण–सेवोन्मुख, ब्रह्मा हैते नारदेर मति।
नारद हइते व्यास, मध्व कहे व्यासदास, पूर्णप्रज्ञ पद्मनाभ–गति ॥
नृहरि माधव–वंशे, अक्षोभ्य परमहंसे, शिष्य बलि' अंगीकार करे।
अक्षोभ्येर शिष्य जय–तीर्थ नामे परिचय, ताँर दास्ये ज्ञानसिन्धु तरे॥
ताँहा हैते दयानिधि, ताँर दास विद्यानिधि, राजेन्द्र हइल ताँहा ह'ते।
ताँहार किंकर जय - धर्म नामे परिचय, परम्परा जान भालमते॥
जयधर्म–दास्ये ख्याति, श्रीपुरुषोत्तम यति, ताँ' ह' ते ब्रह्मण्यतीर्थ सूरि।
व्यासतीर्थ ताँर दास, लक्ष्मीपति व्यासदास, ताँहा ह' ते माधवेन्द्रपुरी॥
माधवेन्द्रपुरीवर, शिष्यवर श्रीईश्वर, नित्यानन्द, श्रीअद्वैत विभु।
ईश्वरपुरीके धन्य, करिलेन श्रीचैतन्य, जगद्गुरु गौरमहाप्रभु॥
महाप्रभु श्रीचैतन्य, राधा–कृष्ण नहे अन्य, रूपानुग जनेर जीवन।
विश्वम्भर प्रियंकर, श्रीस्वरूपदामोदर, श्रीगोस्वामी रूप–सनातन ॥
रूपप्रिय महाजन, जीव–रघुनाथ हन, ताँर प्रिय कवि कृष्णदास।
कृष्णदास प्रियवर, नरोत्तम सेवापर, याँर पद विश्वनाथ आश ॥
विश्वनाथ भक्तसाथ, बलदेव जगन्नाथ, ताँर प्रिय श्रीभक्तिविनोद।
महाभागवतवर, श्रीगौरकिशोरवर, हरिभजनेते याँर मोद ॥
श्रीवार्षभानवीवरा, सदा सेव्य–सेवापरा, ताँहार दयितदास नाम।
ताँहार परम प्रेष्ठ, रूपानुगजन श्रेष्ठ, माधव गोस्वामी गुणधाम ॥
श्रीभक्तिदयित ख्याति, सतीर्थ सज्जने प्रीति, दीन हीन अगतिर गति।
एइ सब हरिजन, गौरांगेर निज जन, ताँदेर उच्छिष्टे मोर मति ॥

श्रीमद् भगवद् गीता इत्यादि ग्रन्थों के अनुसार भगवद्–ज्ञान गुरु–परम्परा में आता है। प्रस्तुत गीति में हमारे श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ की गुरु–परम्परा दी गयी है, जिसका प्रारम्भ नित्य–ज्ञान और आनन्द के पूर्ण–विग्रह, तमाम कारणों के कारण, नन्दनन्दन, भगवान श्रीकृष्ण से हुआ है। स्मरण रहे कि जीव जब से उत्पन्न हुआ है, यह वैष्णव धर्म भी उसी समय से प्रकट हुआ है। चूँकि जीव का किसी जड़ीय काल में प्रारम्भ नहीं है, इसलिए जीव अनादि है और ये धर्म, जिसे जैव–धर्म या वैष्णव धर्म कहते हैं, वह भी अनादि है। वैसे तो अनादि काल से

चल रही इस सनातन गुरु–परम्परा में अनगिनत आचार्य हुए हैं परन्तु गुरु–परम्परा की निर्देशिका स्वरूप इस गीति में तो मुख्य–मुख्य आचार्यों के ही नाम दिये गये हैं।

भगवान श्रीकृष्ण ही मूल जगद्‌गुरु हैं, उन्होंने अपने तत्व का ज्ञान सबसे पहले सृष्टि के प्रथम जीव, चतुर्मुख ब्रह्मा जी को दिया, जिस ज्ञान को प्राप्त करके ब्रह्मा जी भगवान श्रीकृष्ण की सेवा में निमग्न हो गये। ब्रह्मा जी की कृपा से ऐसी भगवद्–भक्तिमयी मति फिर श्री नारद जी की हुई। गोस्वामी नारद जी से ये ज्ञान जगद्‌गुरु श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास जी को हुआ। गुरु–परम्परा में चलते हुए यह ज्ञान हमारे इस कलियुग में हुए चार प्रमुख वैष्णव–आचार्यों में से एक श्रीमध्वाचार्य जी को मिला। वे अपने आप को जगद्‌गुरु श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यास जी का दास कहते हैं। इसी प्रकार ये ज्ञान गुरु–परम्परा में श्रीपूर्णप्रज्ञ जी, श्रीपद्मनाभ जी, श्रीनरहरि जी, श्रीमाधव जी तथा श्रीअक्षोभ्य जी के पास आया। श्रीअक्षोभ्य जी के शिष्य, श्रीजयतीर्थ जी के नाम से परिचित हुए। इन्हीं श्रीजयतीर्थ जी की कृपा से श्रीज्ञानसिन्धु जी का उद्धार हुआ। श्रीज्ञानसिन्धु जी से श्रीदयानिधि जी को ज्ञान मिला। फिर श्रीदयानिधि जी से ये दिव्य ज्ञान उनके सेवक श्रीविद्यानिधि जी को तथा इनसे ज्ञान मिला श्रीराजेन्द्र जी को।

श्रीराजेन्द्र जी के सेवक, जो कि श्री जय धर्म जी के नाम से पहचाने जाते थे, उन्हें अपने गुरु श्रीराजेन्द्र जी से दिव्य ज्ञान मिला था। भगवद् ज्ञान की इस परम्परा को भलीभाँति समझ लेना चाहिए। आगे श्रीजयधर्म जी के सेवक के रूप में प्रसिद्ध हुए — श्री पुरुषोत्तम तीर्थ जी। इन्हीं श्रीपुरुषोत्तम तीर्थ जी से ज्ञान मिला श्रीब्रह्मण्य तीर्थ जी को। इसके बाद ये ज्ञान श्रीव्यास तीर्थ जी से श्रीलक्ष्मीपति जी को मिला तथा इन्हीं के शिष्य थे — श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी। श्रीमाधवेन्द्र पुरीपाद जी के विशेष कृपा पात्र हुए — श्रीईश्वर पुरी जी, श्रीनित्यानन्द प्रभु जी तथा श्रीअद्वैताचार्य प्रभु जी।

श्रीईश्वर पुरी पाद जी वे महान भाग्यशाली भगवद् पार्षद हैं जिनका

जगद्गुरु श्रीमन् चैतन्य महाप्रभु जी ने चरणाश्रय ग्रहण करके उन्हें धन्य–धन्य कर दिया। स्मरण रहे कि श्रीमन् चैतन्य महाप्रभु कोई साधारण या असाधारण आचार्य नहीं हैं, वे तो श्रीमती राधा जी एवं भगवान श्रीकृष्ण जी के सम्मिलित स्वरूप हैं तथा गौड़ीय–जगत के पथ–प्रदर्शक श्रीरूपगोस्वामी जी के अनुगत जनों के जीवन–स्वरूप हैं। महाप्रभु विश्वंभर जी के प्रिय पार्षदों में मुख्य हैं — श्रीस्वरूप दामोदर, श्रीरूप गोस्वामी तथा श्रीसनातन गोस्वामी। श्रीजीव गोस्वामी तथा श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी जी ने इन्हीं श्रीरूप गोस्वामी जी का चरणाश्रय ग्रहण किया था। इनके प्रिय भक्त हुए हैं — श्रीकृष्णदास कविराज गोस्वामी जी। श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी जी के प्रियतम व सर्वोत्तम सेवा–परायण भक्त थे श्रीनरोत्तम ठाकुर तथा इनके अनुगत भक्त थे श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर। श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर जी के विशेष घनिष्ठ थे — श्रीबलदेव विद्याभूषण जी, इनके प्रिय थे — वैष्णव सार्वभौम श्रीजगन्नाथ दास बाबाजी महाराज तथा इनके प्रिय हुए हैं, श्रील भक्ति विनोद ठाकुर। श्रील भक्ति विनोद ठाकुर जी के प्रिय हुए हैं — महाभागवत श्रील गौरकिशोर दास बाबाजी महाराज, जोकि हर समय परमानन्द के साथ एकान्त निर्जन भजन करते रहते थे।

श्रीवार्षभानवी दयित दास अर्थात जगद्गुरु श्री श्रीमद् भक्ति सिद्धांत सरस्वती गोस्वामी ठाकुर 'प्रभुपाद' जी इन्हीं श्रीगौरकिशोर दास बाबाजी महाराज जी के विशेष कृपा पात्र थे। इन 'प्रभुपाद' जी के परम प्रिय हुए हैं त्रिदण्डिस्वामी श्री श्रीमद् भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज जी, जो कि रूपानुग जनों में श्रेष्ठ थे तथा तमाम गुणों की खान थे। इनकी अपने गुरु–भाईयों के प्रति व सज्जन स्वभाव के व्यक्तियों से प्रीति एक आदर्श थी तथा जो लोग भगवान के विमुख, दीन–हीन व्यक्ति होते थे उनके आध्यात्मिक जीवन के आधार तो आप ही होते थे।

ऊपर कही गुरु–परम्परा के सभी आचार्य भगवान श्रीगौरहरि जी के निज–जन हैं व प्रिय–परिकर हैं। हम सब उन्हीं के उच्छिष्ट की (जूठन प्राप्त करने की) अर्थात् कृपा प्राप्त करने की कामना करते हैं।

श्रीगुरुदेवाष्टकम्

(श्रील विश्वनाथ–चक्रवर्ती ठाकुर विरचितम्)

संसारदावानललीढलोक – त्राणाय कारुण्यघनाघनत्वम्।
प्राप्तस्य कल्याणगुणार्णवस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 1॥
महाप्रभोः कीर्तन नृत्यगीत – वादित्रमाद्यन्मनसो रसेन।
रोमाञ्चकम्पाश्रुतरंगभाजो, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम् ॥ 2॥
श्रीविग्रहाराधननित्यनाना, श्रृंगारतन्मन्दिरमार्ज्जनादौ।
युक्तस्य भक्तांश्च नियुन्जतोऽपि, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 3॥
चतुर्विधश्रीभगवत्प्रसाद – स्वाद्वन्नतृप्तान् हरिभक्तसंघान।
कृत्वैव तृप्तिं भजतः सदैव, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 4॥
श्रीराधिकामाधवयोरपार – माधुर्यलीलागुणरूपनाम्नाम्।
प्रतिक्षणास्वादनलोलुपस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 5॥

संसाररूप दावालन से सन्तप्त जनमात्र की रक्षा करने के लिये, दया के भाव से बरसालु–मेघ के भाव को प्राप्त होनेवाले, एवं कल्याण–गुणों के भण्डार स्वरूप श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (1) महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्यदेव जी के नामसंकीर्तन, नृत्य, एवं गाने–बजाने से प्रेमोन्मत्त मानसिक–रस के द्वारा उत्पन्न रोमांच, कम्प, अश्रु आदिकों की तरंगों का सेवन करने वाले श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (2) अपने इष्टदेव श्रीराधाकृष्ण जी के श्रीविग्रह का आराधन, एवं नित्यप्रति अनेक प्रकार का श्रृंगार करना, एवं उनके मन्दिर को झाड़ना, बुहारना, धोना आदि की सेवा में स्वयं लगे रहनेवाले, तथा अधिकारी भक्तों को पूर्वोक्त सेवाओं में नियुक्त करनेवाले श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (3) श्रीकृष्णभक्तवृन्दों को चर्व्य–चोष्य–लेह्य–पेय— इन चारों प्रकार के श्रीभगवत्प्रसादमय सुस्वादु अन्न के द्वारा सदैव परितृप्त करके, स्वयं तृप्त होने वाले श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ।(4) अपने इष्टदेव श्रीराधाकृष्ण के अपार माधुर्य, अपार लीलाएँ, अपार गुण, अपार रूप, एवं अनन्त नामावलियों के प्रतिक्षण आस्वादन करने में लालायित रहनेवाले

निकुन्जयूनो रतिकेलिसिद्ध्यै, या यालिभिर्युक्तिरपेक्षणीया।
तत्रातिदाक्षादतिवल्लभस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 6॥
साक्षाद्धरित्वेन समस्तशास्त्रै – रुक्तस्तथा भाव्यत एव सद्भिः।
किन्तु प्रभोर्यः प्रिय एव तस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 7॥
यस्य प्रसादाद् भगवत्प्रसादो, यस्याप्रसादान्न गतिः कुतोऽपि।
ध्यायंस्तुवंस्तस्य यशस्त्रिसन्ध्यं, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 8॥
श्रीमद्गुरोरष्टकमेतदुच्चै -र्ब्राह्मे मुहूर्त्ते पठति प्रयत्नात्।
यस्तेन वृन्दावननाथसाक्षात्, सेवैव लभ्या जनुषोऽन्त एव ॥ 9॥

श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ।(5) निकुञ्जविहार–परायण श्रीराधाकृष्णरूप–युवक, युगलजोड़ी की रमणक्रीड़ा की सिद्धि के लिये, श्रीललिता–विशाखा आदि सखियों के द्वारा जो जो युक्ति अपेक्षित है, उस युक्ति में अनन्त–चातुर्य के कारण अपने इष्टदेव के अतिशय प्यारे श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की मैं वन्दना करता हूँ। (6) श्रीगुरुदेव का स्वरूप समस्त शास्त्रों के द्वारा साक्षात् श्रीहरि का स्वरूप ही बतलाया जाता है, तथा सज्जनों के द्वारा अनुभव में भी उसी प्रकार से लाया जाता है, किन्तु जो अपने प्रभु के अतिशय प्यारे हैं, उन्हीं श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्दकी मैं वन्दना करता हूँ। (7) जिनकी प्रसन्नता से ही भगवान् की प्रसन्नता होती है, एवं जिनकी अप्रसन्नता से कहीं भी सद्गति नहीं होती है, उन्हीं श्रीगुरुदेव का तीनों सन्ध्याओं में ध्यान करता हुआ, एवं उनके यश की स्तुति करता हुआ, मैं, पूर्वोक्त गुणगणविशिष्ट उन्हीं श्रीगुरुदेव के शोभायमान चरणारविन्द की वन्दना करता हूँ।(8) जो व्यक्ति ब्रह्म–मुहुर्त में इस श्रीगुरुदेवाष्टक को प्रयत्नपूर्वक ऊँचे स्वर से ताल–लयपूर्वक पढ़ता है, वह व्यक्ति अपने देहावसान के बाद वृन्दावनाधीश्वर नन्दनन्दन भगवान श्रीकृष्ण की साक्षात् सेवा को प्राप्त कर लेता है। (9)

श्रीगुरु–महिमा

श्रीगुरुचरणपद्म, केवल भक्तिसद्म,
वन्दों मुञि सावधान मते।
याँहार प्रसादे भाई, ए भव तरिया याइ,
कृष्ण प्राप्ति हय याँहा ह'ते॥1॥
गुरुमुखपद्मवाक्य, चित्तेते करिया ऐक्य,
आर ना करिह मने आशा।
श्रीगुरुचरणे रति, एइ से उत्तम गति,
ये प्रसादे पूरे सर्व आशा॥2॥
चक्षुदान दिला येइ, जन्मे–जन्मे प्रभु सेइ,
दिव्यज्ञान हृदे प्रकाशित।
प्रेमभक्ति याँहा हैते, अविद्या-विनाश याते,
वेदे गाय याँहार चरित ॥3॥
श्रीगुरु करुणासिन्धु, अधम जनार बन्धु,
लोकनाथ लोकेर जीवन।
हा हा प्रभो! कर दया, देह मोरे पदछाया,
एबे यश घुषुक त्रिभुवन ॥4॥

श्रीनरोत्तम दास ठाकुर महाशय जी कहते हैं कि श्रीगुरुदेव जी के चरण कमल शुद्ध–भक्ति की खान हैं, अत: मैं सावधानीपूर्वक उनकी वन्दना करता हूँ। इन चरणों की कृपा से भव–सागर से पार हुआ जाता है तथा इन्हीं की कृपा से श्रीकृष्ण की प्राप्ति होती है। गुरुदेव जी के मुखारविन्द से नि:सृत वाक्यों को एक चित्त से धारण करना, इसके इलावा और कोई भी आशा या इच्छा मन में मत रखना। गुरुदेव जी के चरणों में यदि प्रीति हो जाये तो उत्तम गति प्राप्त होती है तथा इन श्रीचरणों की कृपा से जितनी भी आशायें हैं, वे सब पूर्ण हो जाती हैं।

दिव्य नेत्र जिन्होंने प्रदान किये हैं, वे ही मेरे जन्म–जन्म के प्रभु हैं। उन्हीं की कृपा से ही हृदय में दिव्य ज्ञान प्रकाशित होता है। इन्हीं से प्रेम–भक्ति की प्राप्ति होती है व अविद्या का विनाश होता है। वेद भी इनकी महिमा बखान

करते हैं। श्रीगुरुदेव करुणा के सागर हैं, अधम जनों के बन्धु हैं तथा मेरे गुरुदेव श्रीलोकनाथ जी तमाम मनुष्यों के जीवन स्वरूप हैं। हा! हा!! प्रभु!! मुझ पर दया कीजिये। मुझे अपने पादपद्मों की छाया प्रदान कीजिये ताकि इनका (अर्थात् इन पादपद्मों का) यश सारे त्रिभुवन में फैल जाये।

श्रीगुरु–कृपा–प्रार्थना

गुरुदेव!
कृपाबिन्दु दिया, कर एइ दासे, तृणापेक्षा अति हीन।
सकल–सहने, बल दिया कर, निज–माने स्पृहाहीन ॥ 1 ॥
सकले–सम्मान, करिते शकति, देह नाथ! यथायथ।
तबे त' गाइब, हरिनाम सुखे, अपराध ह'बे हत ॥ 2 ॥
कबे हेन कृपा, लभिया ए जन, कृतार्थ हइबे, नाथ।
शक्तिबुद्धि हीन, आमि अति दीन, कर मोरे आत्मसाथ ॥ 3 ॥
योग्यता - विचारे, किछु नाहि पाइ, तोमार करुणा सार।
करुणा न ह' ले, काँदिया काँदिया, प्राण ना राखिब आर ॥ 4 ॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

गुरुदेव, आप तो कृपा के सागर हैं, आप अपनी कृपा का एक बिन्दु देकर इस दास को तृण से भी अधिक दीन बना दीजिए। मुझे सब कुछ सहन करने की ताकत दीजिये व ऐसा कर दीजिये जैसे मैं अपने सम्मान के लिये स्पृहाहीन हो सकूँ।(1)

हे नाथ, मुझे शक्ति दीजिये ताकि मैं सभी का यथायोग्य सम्मान कर सकूँ। तब ही तो सुखपूर्वक हरिनाम गान कर पाऊँगा व मेरे अपराध खत्म हो जायेंगे।(2)

हे नाथ, कब ऐसी कृपा प्राप्त करके मैं कृतार्थ होऊँगा। मैं शक्ति बुद्धिहीन हूँ, अति दीन हूँ , कृपा करके मुझे आत्मसात् कीजिये।(3)

मैंने अपनी योग्यता विचार करके देखा तो कुछ भी नहीं पाया, अत: आपकी करुणा ही मेरा सर्वस्व है। यदि करुणा नहीं होगी तो मैं रो–रोकर अपने प्राणों को और धारण नहीं करूँगा अर्थात रो–रोकर मर जाऊँगा।(4)

गुरुदेव!

कबे मोर सेइ दिन हबे?

मन स्थिर करि, निर्जने बसिया, कृष्णनाम गाव यबे।
संसार–फुकार, काणे ना पशिबे, देह–रोग दूरे रबे॥ 1॥

'हरे कृष्ण' बलि, गाहिते गाहिते, नयने बहिवे लोर।
देहेते पुलक, उदित हइबे, प्रेमेते करिबे भोर॥ 2॥

गद–गद वाणी, मुखे बाहिरिबे, काँपिबे शरीर मम।
घर्म मुहुर्मुहुः, विवर्ण हइबे, स्तम्भित प्रलय सम॥ 3॥

निष्कपटे हेन, दशा कबे हबे, निरन्तर नाम गा'व।
आवेशे रहिया, देहयात्रा करि, तोमार करुणा पा'व॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

गुरुदेव! कब मेरा वह दिन होगा जब मैं अपने मन को स्थिर करके एकान्त में बैठकर कृष्ण नाम गाऊँगा, संसार की आवाज़ मेरे कान में नहीं घुसेगी और मेरे देह रोग दूर रहेंगे।(1)

'हरे कृष्ण' कीर्तन गाते–गाते मेरी आँखों में आसुँओं की धारायें बहेंगी, शरीर पुलकित होगा और मुझे प्रेम में मस्त कर देगा।(2)

मुख से गदगद् वाणी निकलेगी और मेरा शरीर कम्पित होगा। शरीर से बार–बार पसीना निकलेगा व शरीर का रंग भी बदल सा जाएगा और कभी–कभी मृत शरीर की तरह निःश्चेष्ट हो जायेगा। मेरी इस प्रकार की दशा कब होगी, जब मैं निष्कपट रूप से निरन्तर कृष्ण नाम गाऊँगा। भजन के आवेश में रहकर किसी प्रकार ये देहयात्रा करूँगा तथा आपकी करुणा प्राप्त करूँगा? (3–4)

गुरुदेव!
कबे तव करुणा प्रकाशे।
श्रीगौरांग लीला, हय नित्यतत्त्व, एइ दृढ़ विश्वासे।
'हरि हरि' बलि, गोद्रुम कानने, भ्रमिव दर्शन-आशे॥ 1॥

निताई, गौरांग, अद्वैत, श्रीवास, गदाधर पंचजन।
कृष्णनाम - रसे, भासाबे जगत्, करि महासंकीर्तन॥ 2॥

नर्तन-विलास, मृदंग - वादन, शुनिब आपन-काणे।
देखिया देखिया, से लीला माधुरी, भासिब प्रेमेर वाने॥ 3॥

ना देखि आबार, से लीला-रतन, काँदि हा गौरांग! बलि।
आमारे विषयी, पागल बलिया, अंगेते दिवेक धूलि॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

गुरुदेव! आप कब अपनी करुणा प्रकाशित करेंगे। श्रीगौरांगलीला नित्य–तत्त्व है, ऐसा कब मुझे विश्वास होगा तथा कब हरि–हरि कहकर मैं गोद्रुम वन में उनके दर्शनों की आशा से भ्रमण करूँगा? (1)

हे गुरुदेव! मुझे कब ऐसा अनुभव होगा कि विशाल संकीर्तन के द्वारा श्रीमन् नित्यानन्द प्रभुजी, श्रीगौरांग महाप्रभुजी, श्रीअद्वैताचार्य जी, श्रीगदाधर जी तथा श्रीवास पण्डित जी —ये पांचों परमानन्दमय कृष्ण नाम रस में सारे जगत्–वासियों को डुबो रहे हैं। (2)

नर्तन–विलास, मृदंग–वादन मैं कब अपने कानों से सुनूँगा, कब मैं उस लीला माधुरी का बार–बार दर्शन करूँगा और प्रेम की बाढ़ में बह जाऊँगा। कुछ देर बार फिर उस लीला–रतन को न देखकर कब मैं हा गौरांग! बोलकर रोऊँगा। कब लोग मुझको विषयी, पागल समझकर मेरे ऊपर मिट्टी फैंकेंगे? (3–4)

गुरुदेव!
बड़ कृपा करि, गौड़वन माझे, गोद्रुमे* दियाछ स्थान।
आज्ञा दिला मोरे, एइ व्रजे बसि, हरिनाम कर गान॥ 1॥

किन्तु कबे प्रभो, योग्यता अर्पिवे, ए दासेरे दया करि।
चित्त स्थिर हवे, सकल सहिव, एकान्ते भजिव हरि॥ 2॥

शैशव-यौवने, जड़-सुख संगे, अभ्यास हइल मन्द।
निजकर्म-दोषे, ए देह हइल, भजनेर प्रतिबन्ध॥ 3॥

वार्द्धक्ये एखन, पंचरोगे हत, केमने भजिव बल।**
काँदिया काँदिया, तोमार चरणे, पड़ियाछि सुविह्वल॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

गुरुदेव! आपने बहुत कृपा करके गौड़वन के बीच गोद्रुम* में मुझे स्थान दिया तथा मुझे आज्ञा दी कि इस व्रज में रह कर मैं हरिनाम कीर्तन करूँ।(1)

परन्तु हे प्रभु! कब आप दया करके इस दास को योग्यता अर्पण करेंगे जिससे मेरा चित्त स्थिर हो जाये, सब कुछ सहन करूँ व एकान्त भाव से हरिभजन कर सकूँ।(2)

बचपन व जवानी में दुनियावी भोगों में व्यस्त रहने के कारण मेरी आदतें खराब हो गयी हैं, मेरे अपने दोषों के कारण ये शरीर ही भजन का बाधक हो गया है, अब बुढ़ापा आ गया है व पंच रोगों** से ग्रसित हूँ। अब आप ही बताइये कि मैं कैसे भजन करूँ? मैं रोते-रोते आपके चरणों में विह्वल होकर पड़ा हूँ। (3-4)

** नवद्वीप धाम के नौ द्वीपों में से एक द्वीप।*
*** पंचरोगः-अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष तथा अभिनिवेश।*

गुरुदेव! दयामय!
प्राणेर यातना, जानाब कि तोमा, ह'येछे जीवन यन्त्रणामय॥ 1॥
श्रीकृष्णे भजिते नाहि चाहे मति, विषय-भोगेते प्रबला आसक्ति,
विषयेर आशा नाहि छाड़े मन, विषयेते सदा धाय ॥ 2॥
कृष्ण दास्य भूलि' मायारे भजिनु, आपन स्वरूप कभुना चिन्तिनु।
विरूपे स्वरूप भावि मूढ़मन, मायाते आकृष्ट हय ॥ 3॥
दुष्ट-संगफल ना बुझिनु हाय, साधुकाछे येते चित्त नाहि चाय,
असतेर संगे थाकिया सतत, चित्त ह'ल वज्र प्राय ॥ 4॥
कनक-कामिनी-लाभ-पूजा-आशा, चाहे मोर चित्त आर प्रतिष्ठाशा,
किरूपे शोधित ह'वे मोर चित्त, एइ चिन्ता सदा हय ॥ 5॥
तव कृपाकण आमार सम्बल, तव कृपा बिना नाहि अन्य बल,
कृपा कर प्रभु दिया चिद्बल, दास तोमा प्रणमय ॥ 6॥
साधु-संगे थाकि' छय वेगदमि', श्रीकृष्ण चरण सेवि येन आमि,
हेन मति याचे तव दासाधम, वन्दि तव रांगा पाय ॥ 7॥
ओहे गुरुदेव! तव श्रीचरण, सेवि येन आमि जन्म-जन्म,
एइ आशीर्वाद याचि' अभाजन, तव पदे स्थान चाय ॥ 8॥

(पूज्यपाद त्रिदण्डि स्वामी श्रीमद् भक्ति कुमुद सन्त महाराज जी द्वारा रचित)

हे दयामय गुरुदेव! इन प्राणों को मिलने वाले कष्टों के बारे में मैं आपको क्या बताऊँ, मेरा तो सारा जीवन ही यन्त्रणामय हो गया है।(1) श्रीकृष्ण-भजन करने के लिये ज़रा सा भी मन नहीं करता और दूसरी ओर विषय भोगों में मेरी प्रबल आसक्ति है। मेरा मन ऐसा हो गया है कि विषय-भोगों की आशा को परित्याग नहीं करता, हर समय विषयों की तरफ ही भागता रहता है।(2) मेरा जो अपना स्वरूप है उस 'कृष्ण-दास्य' स्वरूप को मैं भूल गया हूँ और माया का भजन कर रहा हूँ। अपने स्वरूप का मैंने कभी चिन्तन नहीं किया। जो मेरा स्वरूप नहीं है, उस विरूप को ही अपना स्वरूप समझ कर ये मूढ़ मन माया की तरफ आकृष्ट होता है।(3) दुष्टों की संगति का फल हाय! हाय! मेरी समझ में आया नहीं और अब साधु के पास जाने को भी चित्त नहीं चाहता। निरन्तर असत्-संग में रहने के कारण मेरा चित्त वज्र की

तरह कठोर हो गया है।(4) मेरा चित्त कनक, कामिनी, लाभ, पूजा तथा प्रतिष्ठा की चाह करता है। हे गुरुदेव! मेरे इस चित्त का किस प्रकार से शोधन होगा, हर समय मुझे यही चिन्ता लगी रहती है।(5) आपकी कृपा का कण ही मेरा सहारा है। आपकी कृपा के बिना मेरा और कोई बल नहीं है। हे प्रभु! आप कृपा करके मुझे चिद्–बल प्रदान कीजिये। ये दास आपके शरणागत होता है।(6) साधु संग में रहूँ, छः प्रकार के वेगों का दमन कर सकूँ तथा श्रीकृष्ण के चरणों की जैसे मैं सेवा कर सकूँ—इस प्रकार की बुद्धि ये दासाधम चाहता है। इसलिए आपके अरुण–वर्ण चरणों की मैं वन्दना करता हूँ।(7) ओहे गुरुदेव! ये अभाजन (अपात्र) आपके श्रीचरणों में स्थान चाहता है तथा ये आशीर्वाद मांगता है कि आप मुझ पर ऐसी कृपा करो जैसे मैं जन्म–जन्मान्तर में आपके चरणों की सेवा करता रहूँ।(8)

▲ ▲ ▲ ▲

गुरुदेवे, व्रजवने, व्रजभूमिवासी जने,
शुद्ध भक्ते, आर विप्रगणे।
इष्ट - मन्त्रे, हरिनामे, युगल-भजन-कामे,
कर रति अपूर्व यतने॥ 1॥
धरि, मन, चरणे तोमार।
जानियाछि एवे सार, कृष्णभक्ति बिना आर,
नाहि घुचे जीवेर संसार॥ 2॥
कर्म, ज्ञान, तपः, योग, सकलइ त' कर्मभोग,
कर्म छाड़ाइते केह नारे।
सकल छाड़िया भाइ, श्रद्धादेवीर गुण गाइ,
याँ'र कृपा भक्ति दिते पारे॥ 3॥
छाड़ि' दम्भ अनुक्षण, स्मर अष्टतत्त्व मन,
कर ताहे निष्कपट रति।
सेइ रति प्रार्थनाय, श्रीदास गोस्वामी पाय,
ए भक्ति विनोद करे नति॥ 4॥

गुरुदेव, व्रज के द्वादश वन, व्रजवासी लोग, शुद्ध–भक्त, ब्राह्मण, इष्ट मन्त्र व हरिनाम तथा श्रीराधा–कृष्ण जी के युगल भजन की इच्छा में खूब यत्न

के साथ प्रीति करो।(1)मैंने अपना मन आपके श्रीचरणों में सौंप दिया है। अब सार बात समझ में आयी कि श्रीकृष्ण भक्ति के बिना जीव का आवागमन रूप संसार–चक्कर कभी भी खत्म नहीं होता।(2)कर्म, ज्ञान, तपस्या तथा योग—ये सभी कर्मों के भोग भुगवायेंगे। कोई भी कर्म–चक्र से छुड़ा नहीं सकता। इसलिए भाई! सब छोड़कर तुम श्रद्धा देवी के गुणगान गाओ, जिनकी कृपा तुम्हें भक्ति दे सकती है।(3) अत: हर समय दम्भ का परित्याग करके अष्ट–तत्त्व* का स्मरण करो और उन्हीं में निष्कपट रूप से प्रीति करो। उसी प्रीति के लिये ही श्रील भक्ति विनोद ठाकुर जी श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी जी के चरणों में प्रार्थना करते हैं।(4)

**अष्टतत्त्व:– इसी भजन के प्रारम्भ में लिखे आठ तत्व– (1) गुरुदेव (2) व्रजमण्डल के बारह वन (3) व्रजवासी लोग (4) शुद्ध भक्त (5) ब्राह्मण (6) कृष्ण–मन्त्र (7) हरिनाम (8)श्रीराधा–कृष्ण जी।*

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीरूपमंजरी–पद, सेई मोर सम्पद,
सेइ मोर भजन–पूजन।
सेइ मोर प्राण–धन, सेइ मोर आभरण,
सेइ मोर जीवनेर जीवन॥ 1॥
सेइ मोर रसनिधि, सेइ मोर वाञ्छासिद्धि,
सेइ मोर वेदेर धरम।
सेइ व्रत, सेइ तप, सेइ मोर मन्त्र जप,
सेइ मोर धरम–करम॥ 2॥
अनुकूल हबे विधि, से–पदे हइबे सिद्धि,
निरखिब ए दुइ नयने।
से रूप–माधुरीराशि, प्राण–कुलवय–शशी,
प्रफुल्लित हबे निशि–दिने॥ 3॥
तुया–अदर्शन–अहि, गरले जारल देहि,
चिर दिन तापित जीवन।
हा हा प्रभु! कर दया, देह मोरे पदछाया,
नरोत्तम लइल शरण॥ 4॥

श्रीरूप मंजरी* के श्रीचरण ही मेरी सम्पत्ति हैं, वे ही मेरा भजन–पूजन हैं। वे ही मेरे प्राण–धन हैं, वे ही मेरे आभरण हैं। वे ही मेरे जीवन के जीवन हैं। (1) वे ही मेरी रस–निधि हैं, वे ही मेरी वान्छा–सिद्धि हैं, वे ही मेरे वेद–धर्म स्वरूप हैं। वे ही मेरा व्रत हैं। वे ही मेरी तपस्या हैं, वे ही मेरे मन्त्र जप हैं, वे ही मेरे धर्म–कर्म हैं। (2) जब कभी विधि अनुकूल होगा, तब ही मेरी उन चरणों में सिद्धि होगी और तब मैं उनका इन दोनों नेत्रों से दर्शन करूँगा अर्थात् नयन भर कर दर्शन करूँगा। उस अपार रूप–माधुरी को देख कर मेरे प्राण रूप कुमुद रात–दिन प्रफुल्लित होंगे। (3) आपके अदर्शन रूप सर्प के विष से यह शरीर जला जा रहा है जिससे मेरा ये जीवन चिरकाल से तापित है। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी कहते हैं **—हा! हा! प्रभो!! मुझ पर दया कीजिये,** मुझे अपने श्रीचरणों की छाया प्रदान कीजिये। मैंने आपकी शरण ग्रहण की है। (4)

** चूंकि श्रीरूप गोस्वामी जी भगवान श्रीकृष्ण की लीला की श्रीरूप मंजरी हैं इसलिए यहाँ पर श्रीरूप मंजरी पद का अर्थ श्रीरूप गोस्वामी जी के चरण कमल हैं अथवा श्रीरूप गोस्वामी जी से अभिन्न श्रीगुरुदेव के चरण कमल हैं।*

▲ ▲ ▲ ▲

शुनियाछि साधु मुखे बले सर्वजन।
श्रीरूप - कृपाय मिले युगल-चरण ॥ 1 ॥
हा हा प्रभु सनातन गौर-परिवार।
सबे मिलि' वाञ्छा पूर्ण करह आमार॥ 2 ॥
श्रीरूपेर कृपा येन आमा प्रति हय।
से पद आश्रय यार, सेई महाशय॥ 3 ॥
प्रभु लोकनाथ कबे संगे लइया याबे।
श्रीरूपेर पादपद्मे मोरे समर्पिवे॥ 4 ॥
हेन कि हइबे मोर — नर्मसखीगणे।
अनुगत नरोत्तमे करिबे शासने ॥ 5 ॥

मैंने साधुओं के मुख से सुना है, और सब लोग भी कहते हैं कि **श्रीरूप गोस्वामी** जी की कृपा से उन युगल चरणों की प्राप्ति होती है। (1) हा!

हा ! प्रभो सनातन ! हे गौर परिवार ! आप सभी मिल कर मेरी अभिलाषा को पूर्ण कीजिये। (2) आप सब ऐसी कृपा कीजिये, जैसे श्रीरूप गोस्वामी जी की मेरे प्रति कृपा हो जाये। उनके चरणों का जिसने आश्रय लिया है, वही महापुरुष है। (3) **श्रीलोकनाथ प्रभु कब मुझे अपने साथ ले जायेंगे** और श्रीरूप गोस्वामी जी के पादपद्मों में समर्पित कर देंगे ? (4) श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी कहते हैं कि क्या मेरे साथ कभी ऐसा भी होगा कि नर्मसखीगण मुझे शासन करके अपने अनुगत कर लें ? (5)

▲ ▲ ▲ ▲

एइ बार करुणा कर वैष्णव गोसाञि।
पतित–पावन तोमा बिने केह नाइ ॥ 1 ॥
काहार निकटे गेले पाप दूरे याय।
एमन दयाल प्रभु केबा कोथा पाय ? ॥ 2 ॥
गंगार परश हइले पश्चाते पावन।
दर्शने पवित्र कर एइ तोमार गुण ॥ 3 ॥
हरिस्थाने अपराधे तारे' हरिनाम।
तोमा–स्थाने अपराधे नाहिक एड़ान ॥ 4 ॥
तोमार हृदये सदा गोविन्द–विश्राम।
गोविन्द कहेन मम वैष्णव प्राण ॥ 5 ॥
प्रति जन्मे करि आशा चरणेर धूलि।
नरोत्तमे कर दया आपनार बलि' ॥ 6 ॥

हे वैष्णव गोसाईं! आप इस बार मुझ पर करुणा कीजिये, आपको छोड़ कर और कोई भी पतित–पावन नहीं है। (1) किसके पास जाने से मेरे पाप दूर होंगे ? ऐसा, अर्थात् आप जैसा, दयालु प्रभु किसको और कहाँ मिलेगा ? (2) गंगा जी का स्पर्श करने के बाद पावन हुआ जाता है परन्तु आप तो दर्शन से ही पवित्र कर देते हैं। (3) भगवान् श्रीहरि के प्रति यदि कोई अपराध हो जाये तो हरि से अभिन्न हरिनाम उद्धार कर देता है परन्तु हे वैष्णव ठाकुर ! यदि आपके प्रति अपराध हो जाए तो उसका और कोई परित्राण नहीं है। (4) हे

वैष्णव ठाकुर! आपके हृदय में हमेशा गोविन्द जी का अवस्थान रहता है। साक्षात् गोविन्द जी भी कहते हैं कि वैष्णव मेरे प्राण हैं। (5) श्रीनरोत्तम दास जी कहते हैं कि मैं प्रत्येक जन्म में आपके चरणों की धूलि की आशा करता हूँ। आप अपना जन जानकर मुझ पर कृपा कीजिये। (6)

▲ ▲ ▲ ▲

श्री श्रीवैष्णव-शरण

वृन्दावनवासी यत वैष्णवेर गण।
प्रथमे वन्दना करि सबार चरण॥ 1॥
नीलाचलवासी यत महाप्रभुर गण।
भूमिते पड़िया वन्दों सभार चरण॥ 2॥
नवद्वीपवासी यत महाप्रभुर भक्त।
सभार चरण वन्दों हैया अनुरक्त॥ 3॥
महाप्रभुर भक्त यत गौड़ देशे स्थिति।
सभार चरण वन्दों करिया प्रणति॥ 4॥
ये-देशे ये-देशे वैसे गौरांगेर गण।
ऊर्ध्वबाहु करि' वन्दों सबार चरण॥ 5॥
हइयाछेन हइबेन प्रभुर यत दास।
सभार चरण वन्दों दन्ते करि घास॥ 6॥
ब्रह्माण्ड तारिते शक्ति धरे जने-जने।
ए वेद-पुराणे गुण गाय येबा शुने॥ 7॥
महाप्रभुर गण सब पतितपावन।
ताइ लोभे मुइँ पापी लइनु शरण॥ 8॥
वन्दना करिते मुइँ कत शक्ति धरि।
तमो-बुद्धि दोषे मुइँ दम्भ मात्र करि॥ 9॥
तथापि मूकेर भाग्य मनेर उल्लास।
दोष क्षमि मो-अधमे कर निज दास॥ 10॥

सर्ववान्छासिद्धि हय, यमबन्ध छुटे।
जगते दुर्लभ हैया प्रेमधन लुटे॥ 11॥
मनेर वासना पूर्ण अचिराते हय।
देवकीनन्दन दास एइ लोभे कय॥ 12॥

वृन्दावनवासी जितने भी वैष्णव हैं, सर्वप्रथम मैं उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।(1) नीलाचलवासी जितने भी महाप्रभु के गण हैं, पृथ्वी पर लेटकर मैं सबके चरणों की वन्दना करता हूँ।(2) नवद्वीपवासी जितने भी महाप्रभु जी के भक्त हैं, दण्डवत् प्रणाम करता हुआ सभी के चरणों की मैं वन्दना करता हूँ। (3) गौड़ देश वासी महाप्रभु जी के जितने भी भक्त हैं, सभी के चरणों में शरणागत होकर मैं उनकी वन्दना करता हूँ। इसके इलावा जिस-जिस स्थान पर भी गौरांग महाप्रभु जी के गण हैं, अपने दोनों हाथ उठाकर मैं उनके चरणों की वन्दना करता हूँ।(4-5) भगवान के जितने भी भक्त हो चुके हैं या होंगे, मैं दान्तों में घास का तिनका लेकर अर्थात् दीनता के साथ सभी के चरणों की वन्दना करता हूँ।(6) एक-एक भक्त पूरे के पूरे ब्रह्माण्ड को उद्धार करने की सामर्थ्य रखता है — ऐसा सुना जाता है कि वेद व पुराण इनका इस प्रकार से बखान करते हैं। (7) श्रीचैतन्य महाप्रभु जी के सभी भक्त पतितों को पावन करने वाले हैं, इसी लोभ से मुझ जैसे पापी ने भी उनकी शरण ग्रहण की है। (8) वन्दना करने की मैं भला कितनी शक्ति रखता हूँ। तमोगुणी बुद्धि के इस दोष के कारण मैं तो वैष्णवों की वन्दना करने का मात्र दम्भ ही करता हूँ। (9) तब भी इस गूँगे के ये सुन्दर भाग्य हैं कि इसके मन में उल्लास है। आप कृपा करके मेरे दोषों को क्षमा करके इस अधम को अपना दास बना लीजिये।(10) आपका दासत्त्व मिल जाने से, जितनी भी इच्छायें हैं, सब पूर्ण हो जाती है। यमराज जी का बन्धन छूट जाता है तथा इस जगत् में जो दुर्लभ वस्तु है — 'प्रेमधन' वह उसे लूटता रहता है।(11) मन की वासना बहुत जल्दी पूर्ण हो जाती है। देवकीनन्दन दास जी कहते हैं कि मैं इसी लोभ से वैष्णव महिमा कहता हूँ।(12)

कृपा कर वैष्णव ठाकुर।
सम्बन्ध जानिया, भजिते-भजिते, अभिमान हउ दूर॥
'आमि त वैष्णव', ए बुद्धि इहले,अमानी न ह' ब आमि।
प्रतिष्ठाशा आसि, हृदय दूषिबे, हइब निरयगामी॥
तोमार किंकर, आपने जानिब,'गुरु' अभिमान त्यजि।
तोमार उच्छिष्ट, पदजलरेणु , सदा निष्कपटे भजि॥
निजे श्रेष्ठ जानि, उच्छिष्टादि दाने, हबे अभिमान भार।
ताइ शिष्य तव, थाकिया सर्वदा, ना लइब पूजा का'र॥
अमानी मानद, हइले कीर्तने, अधिकार दिबे तुमि।
तोमार चरणे, निष्कपटे आमि, काँदिया लुटिब भूमि॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

हे वैष्णव ठाकुर! आप मुझ पर कृपा कीजिये जैसे भगवान से अपने सम्बन्ध को जानकर, सम्बन्ध–ज्ञान के साथ भजन करते–करते मेरे अन्दर जो अभिमान है, वह दूर हो जाये। मैं वैष्णव हूँ — इस प्रकार की बुद्धि होने से मैं अमानी नहीं हो पाऊँगा, प्रतिष्ठा की आशा आकर मेरे हृदय को दूषित कर देगी और मैं नरकगामी हो जाऊँगा। हे वैष्णव ठाकुर! आप मुझ पर ऐसी कृपा करें जैसे मैं अपने बड़प्पन के अभिमान को त्यागकर अपने आपको आपके दासों का दास समझूँ तथा आपका जूठा प्रसाद व आपके चरणों की धूलि का मैं सेवन कर सकूँ। अपने आपको श्रेष्ठ समझने से, दूसरों को अपना जूठा देने से अभिमान का भार सिर पर आ पड़ेगा। इसलिए हर समय अपने–आपको आपका शिष्य मानकर व उसी प्रकार रह कर किसी की भी पूजा को ग्रहण नहीं करूँगा। अमानी–मानद होने से ही तो आप कीर्त्तन का अधिकार देंगे। निष्कपटतापूर्वक आपके चरणों की रज को मैं रोते हुए लूटूँगा।

श्रीवैष्णव कृपा-प्रार्थना

ओहे!

वैष्णव ठाकुर, दयार सागर, ए दासे करुणा करि।
दिया पदछाया, शोध हे आमाय, तोमार चरण धरि॥ 1॥

छय वेग दमि', छय दोष शोधि', छय गुण देह दासे।
छय सत्संग, देह हे आमारे, बसेछि संगेर आशे ॥ 2॥

एकाकी आमार, नाहि पाय बल, हरिनाम संकीर्तने।
तुमि कृपा करि', श्रद्धाबिन्दु दिया, देह' कृष्ण-नाम-धने॥ 3॥

कृष्ण से तोमार, कृष्ण दिते पार, तोमार शकति आछे।
आमि त कांगाल, 'कृष्ण' 'कृष्ण' बलि, धाइ तव पाछे पाछे॥ 4॥

हे वैष्णव ठाकुर! दया के सागर! इस दास पर करुणा करो। अपनी पदछाया देकर मेरा शोधन करो, मैं आपके चरण पकड़ता हूँ। (1) कृपा करके ऐसी शक्ति प्रदान करो कि मैं छः वेगों[1] का दमन कर सकूँ, छः दोषों[2] का शोधन कर सकूँ तथा छः गुण[3] इस दास को दीजिये एवं छः प्रकार का सत्संग[4] मुझे दीजिये — मैं संग की ही आशा से बैठा हुआ हूँ। (2) अकेले रहकर हरिनाम संकीर्तन में मुझे ताकत नहीं मिलती, आप ही कृपा करके श्रद्धा का बिन्दु मात्र प्रदान करके मुझे श्रद्धा भी दीजिये एवं कृष्णनाम धन भी दीजिये। (3) कृष्ण आपके हैं। आप कृष्ण को दे सकते हैं। आपके पास ताकत है। मैं तो कंगाल हूँ, कृष्ण-कृष्ण कहकर आपके पीछे-पीछे दौड़ रहा हूँ। (4)

*1- **छय वेग:**- वाक्य वेग, मनोवेग, क्रोध वेग, जिह्वा वेग, उदर वेग, और उपस्थ वेग।*

*2- **छय दोष:**- अत्याहार, जड़ विषय के लिए प्रयास, ग्राम्य-कथा, असत्-जनसंग, अस्थिर सिद्धान्त या इन्द्रियतर्पण में रुचि।*

*3- **छय गुण:**- भजन में उत्साह, भक्ति में दृढ़ विश्वास, प्रेम लाभ में धैर्य, भक्ति अनुकूल कर्मप्रवृत्ति, असत्संग त्याग और भक्ति सदाचार।*

*4- **छय सत्संग:**- शुद्ध-भक्तों को देना, भक्त यदि कृपा करके कुछ देने लगे तो प्रीतिपूर्वक उसे लेना, शुद्ध-भक्तों से हरि-चर्चा करना तथा उनसे हरि-कथा सुनना, भक्तों को भोजन करवाना तथा उनके पवित्र हाथों से भगवान का प्रसाद लेकर ग्रहण करना।*

▲ ▲ ▲ ▲

ठाकुर वैष्णवगण! करि एइ निवेदन,
मो बड़ अधम दुराचार।
दारुण–संसार निधि, ताहे डुबाइल विधि,
केशे धरि मोरे कर पार॥
विधि बड़ बलवान, ना शुने धरम–ज्ञान,
सदाइ करम पाशे बान्धे।
ना देखि तारण लेश, यत देखि सब क्लेश,
अनाथ, कातर तेञि कान्दे॥
काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद,अभिमान सह,
आपन–आपन स्थाने टाने।
ऐछन आमार मन, फिरे येन अन्धजन,
सुपथ विपथ नाहि जाने॥
ना लइनु सत मत, असते मजिल चित्त,
तुया पाये ना करिनु आश।
नरोत्तमदासे कय, देखि' शुनि लागे भय,
तराइया लह जिन पाश॥

हे ठाकुर वैष्णवगण! मैं एक निवेदन करता हूँ — वह ये कि मैं बड़ा अधम व दुराचारी हूँ। ये संसार रूपी समुद्र बड़ा भयंकर है और विधि ने मुझे इस दारुण संसार–सागर में डुबो दिया है। आप ही मेरे केश पकड़ कर मुझे पार कीजिये। ये विधि बहुत बलवान है, किसी भी प्रकार के धर्म की व ज्ञान की बात ये नहीं सुनता, जीवों को सदा ही कर्मपाश में बाँध कर रखता है। मेरी तो ऐसी अवस्था हो गयी है कि मैं किसी तरफ भी पार होने का लेशमात्र उपाय भी नहीं देखता हूँ। जिधर भी देखता हूँ उधर क्लेश ही क्लेश मुझे दीखते हैं। इसलिए मैं अपने–आपको अनाथ सा महसूस करता हूँ और कातरता से रो रहा हूँ। ये काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अभिमान भी इनके साथ हैं — ये सभी मुझे अपनी–अपनी ओर खींच रहे हैं और मेरा मन ऐसा है, जैसे कोई अन्धा व्यक्ति हो और अपना सुपथ–विपथ भी न जानता हो। मैंने कोई सत्पथ नहीं लिया,

हमेशा ही असत् में मेरा चित्त रमा रहा, आपके चरणों का भी मैंने आश्रय नहीं लिया। श्रील नरोत्तम ठाकुर जी कहते हैं कि हे वैष्णवगण! इस संसार की दारुण अवस्था देख–सुन कर मुझे डर लग रहा है, अब आप ही मुझे पार करके अपने पास रख लीजिये।

▲ ▲ ▲ ▲

कबे मुई वैष्णव चिनिव हरि – हरि ।
वैष्णव–चरण, कल्याणेर खनि, मातिब हृदये धरि'॥

वैष्णव ठाकुर, अप्राकृत सदा, निर्दोष, आनन्दमय।
कृष्णनामे प्रीत, जड़े उदासीन, जीवेते दयार्द्र हय॥

अभिमानहीन, भजने प्रवीण, विषयेते अनासक्त।
अन्तर–बाहिरे, निष्कपट सदा, नित्यलीला अनुरक्त॥

कनिष्ठ, मध्यम, उत्तम प्रभेदे, वैष्णव त्रिविध गणि।
कनिष्ठे आदर, मध्यमे प्रणति, उत्तमे शुश्रूषा शुनि॥

ये येन वैष्णव, चिनिया लइया, आदर करिब यबे।
वैष्णवेर कृपा, याहे सर्वसिद्धि, अवश्य पाइब तबे॥

वैष्णव चरित्र, सर्वदा पवित्र, येइ निन्दे हिंसा करि'।
भक्तिविनोद, ना सम्भाषे तारे, थाके सदा मौन धरि॥

हे हरि! कब मैं वैष्णवों को पहचानूँगा। वैष्णवों के चरण जो कल्याण की खान हैं, को हृदय में धारण करके मैं मतवाला होऊँगा। जो वैष्णव होते हैं, वे निर्दोष अप्राकृत एवं हमेशा आनन्द में विभोर रहते हैं, उनकी कृष्ण–नाम में प्रीति होती है। संसार की जड़ीय वस्तुओं के प्रति उनकी उदासीनता रहती है तथा जीवों के प्रति उनका दयार्द्र भाव रहता है। वे जागतिक–अभिमानों से शून्य रहते हैं परन्तु हरि–भजन में पारंगत होते हैं तथा विषयों के प्रति वे अनासक्त रहते हैं। वे अन्दर से व बाहर से हमेशा निष्कपट होते हैं तथा भगवान् की नित्य लीला में उनकी अनुरक्ति होती है। कनिष्ठ, मध्यम, व उत्तम के भेद से उनकी (वैष्णवों की) तीन प्रकार की श्रेणियाँ गिनी जाती हैं। ऐसा सुनने में आता है कि

कनिष्ठ वैष्णव के प्रति आदर भाव रखना चाहिये, मध्यम वैष्णव के प्रति प्रणम्य का भाव अर्थात पूज्य का भाव तथा उत्तम वैष्णव की सेवा-शुश्रुषा करनी चाहिए। वैष्णव कृपा, जिससे सर्वसिद्धि होती है — ये अवश्य ही आपको तब प्राप्त होगी जब आप, जो जिस श्रेणी का वैष्णव है, उसे पहचान कर उसके मुताबिक ही उसका आदर करेंगे। वैष्णव चरित्र सर्वदा ही पवित्र है। जो वैष्णवों की निन्दा करते हैं या उनके प्रति ईर्ष्या का भाव रखते हैं, श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि वे उनसे बात भी नहीं करते हैं, चुपचाप रहते हैं।

▲ ▲ ▲ ▲

हरि हरि कबे मोर ह'बे हेन दिन।
विमल वैष्णवे, रति उपजिवे, वासना हइबे क्षीण॥

अन्तर-बाहिरे, सम व्यवहार, अमानी मानद ह'ब।
कृष्ण-संकीर्तने, श्रीकृष्ण-स्मरणे, सतत मजिया र'ब॥

ए देहेर क्रिया, अभ्यासे करिब, जीवन यापन लागि।
श्रीकृष्ण भजने, अनुकूल याहा, ताहे ह'ब अनुरागी॥

भजनेर याहा, प्रतिकूल ताहा, दृढ़भावे तेयागिव।
भजिते-भजिते, समय आसिले, ए देह छाड़िया दिब॥

भकतिविनोद, एइ आशा करि', बसिया गोद्रुमवने।
प्रभु-कृपा लागि, व्याकुल अन्तरे, सदा काँदे संगोपने॥

हे हरि! कब मेरा वह दिन होगा जब निर्मल-वैष्णवों में मेरी प्रीति उपजेगी और सांसारिक-विषयों की वासना क्षीण होगी। मेरा अन्दर का व बाहर का व्यवहार समान होगा। मैं अमानी-मानद होऊँगा तथा हमेशा ही श्रीकृष्ण-संकीर्तन व श्रीकृष्ण-स्मरण में व्यस्त रहूँगा। जीवन यापन के लिए अभ्यास से ही इस देह की क्रियाएँ करूँगा। श्रीकृष्ण-भजन में जो-जो भी अनुकूल होगा, उसके प्रति अनुराग रखूँगा तथा जो-जो भजन में प्रतिकूल होगा, उसे दृढ़ता से त्याग दूँगा। इस प्रकार भजन करते-करते जब समय आयेगा तो इस देह को छोड़ दूँगा। भक्ति विनोद ठाकुर जी कहते हैं कि इसी आशा से मैं

गोद्रुम वन में बैठा हुआ हूँ तथा व्याकुल हृदय से प्रभु की कृपा प्राप्त करने के लिए एकान्त में रोता रहता हूँ।

▲ ▲ ▲ ▲

ठाकुर वैष्णव पद, अवनीर सुसम्पद,
शनु भाई, हञा एक मन।
आश्रय लइया भजे, तारे कृष्ण नाहि त्यजे,
आर सब मरे अकारण॥

वैष्णवचरणजल, प्रेम–भक्ति दिते बल,
आर केह नहे बलवन्त।
वैष्णवचरणरेणु, मस्तके भूषण बिनु,
आर नाहि भूषणेर अन्त॥

तीर्थजल पवित्र गुणे, लिखियाछे पुराणे,
से सब भक्तिर प्रवन्चन।
वैष्णवेर पादोदक, सम नहे एइ सब,
जाते हय वान्छित पूरण॥

वैष्णव–संगेते मन, आनन्दित अनुक्षण,
सदा हय कृष्णपरसंग।
दीन नरोत्तम कान्दे, हिया धैर्य नाहि बान्धे,
मोर दशा केन हैल भंग॥

वैष्णव ठाकुरों के श्रीचरण ही पृथ्वी की सम्पदा हैं। हे भाई! एकाग्र मन से सुनो — जो वैष्णवों का आश्रय लेकर भजन करता है — उन्हें श्रीकृष्ण परित्याग नहीं करते, बाकी सब तो व्यर्थ में ही जीवन गँवा देते हैं। वैष्णवों के चरणों का जल प्रेम–भक्ति में शक्ति प्रदान करता है। इसके समान और कोई शक्तिशाली नहीं है। वैष्णवों के चरणों की रज ही मस्तक का आभूषण है। इसके समान और कोई आभूषण भी नहीं है। तीर्थजल की पवित्रता की बातें पुराणों में लिखी गयी हैं परन्तु वह सब भक्ति की प्रवन्चनामात्र हैं। वैष्णवों का

जो चरण–धौत जल है उसके समान प्रेम–भक्ति प्रदान करने में कोई भी समर्थ नहीं है क्योंकि यह सभी प्रकार के मनोभीष्टों को पूरा करने वाला है। वैष्णवों के संग में मन हमेशा आनन्दित रहता है क्योंकि उनके साथ रहने से हमेशा कृष्ण–प्रसंग चलता रहता है। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी रोते–रोते कहते हैं कि मैं अब और धैर्य धारण नहीं कर पा रहा हूँ — मेरी ये स्थिति क्यों भंग हो गयी?

▲ ▲ ▲ ▲

शुद्ध - भकत चरण - रेणु, भजन अनुकूल ।
भकत - सेवा, परम सिद्धि, प्रेमलतिकार मूल ॥ 1 ॥
माधव - तिथि, भक्ति - जननी, यतने पालन करि।
कृष्ण वसति, वसति बलि, परम आदरे वरि॥ 2 ॥
गौर आमार, ये सब स्थाने, करल भ्रमण रंगे।
से सब स्थान, हेरिब आमि, प्रणयि-भकत-संगे॥ ३ ॥
मृदंगवाद्य, शुनिते मन, अवसर सदा याचे।
गौर - विहित, कीर्तन शुनि, आनन्दे हृदय नाचे॥ ४ ॥
युगलमूर्ति, देखिया मोर, परम आनन्द हय ।
प्रसाद - सेवा, करिते हय, सकल प्रपन्च - जय॥ ५ ॥
ये-दिन गृहे, भजन देखि, गृहेते गोलोक भाय।
चरण-सीधु , देखिया गंगा, सुख ना सीमा पाय॥ ६ ॥
तुलसी देखि, जुड़ाय प्राण, माधवतोषणी जानि'।
गौर-प्रिय, शाक-सेवने, जीवन सार्थक मानि॥ 7 ॥
भकतिविनोद, कृष्ण भजने, अनुकूल पाय याहा।
प्रति-दिवसे, परम सुखे, स्वीकार करये ताहा॥ 8 ॥

शुद्ध भक्तों की चरण–रेणु भजन के अनुकूल है। भक्त–सेवा ही सर्वोच्च सिद्धि है व प्रेम–भक्ति लता का मूल है।(1) माधव तिथि (एकादशी तिथि) भक्ति की जननी है। इसे यत्न के साथ पालन करना चाहिए। इसमें निश्चित रूप से कृष्ण का वास है — ऐसा समझ कर इसका खूब आदर करना

चाहिए। (2) मेरे गौरहरि जी ने जिन–जिन स्थानों पर आनन्द के साथ भ्रमण किया, उन सभी स्थानों का मैं प्रेमी–भक्तों के साथ दर्शन करूँगा। (3) मृदंग की ध्वनि को सुनने के लिए मेरा मन हमेशा लालायित रहता है तथा गौर–विहित कीर्तनों को सुनकर हृदय आनन्द से नाचने लगता है। (4) युगलमूर्ति देखकर मुझे बहुत आनन्द होता है। प्रसाद–सेवा करने से जन्म–मृत्यु का चक्कर खत्म हो जाता है। (5) जिस दिन घर में भजन होता देखता हूँ तो घर ही गोलोक लगने लगता है। (6) हरि–चरणों से निकली गंगा को देखकर तो आनन्द की सीमा ही नहीं रहती। तुलसी को माधव–तोषणी जानकर देखने से ही प्राण भर आते हैं। गौर–प्रिय शाक को सेवन करने में अपने जीवन को सार्थक समझता हूँ। (7) श्रील भक्ति विनोद ठाकुर जी कहते हैं कि मैं श्रीकृष्ण–भजन के अनुकूल जो–जो भी प्राप्त करता हूँ, प्रतिदिन उन सब को परम आनन्द के साथ स्वीकार करता हूँ। (8)

▲ ▲ ▲ ▲

हरि हे!
नीरधर्मगत', जाह्नवी–सलिले, पंक फेन दृष्ट हय।
तथापि कखन, ब्रह्मद्रव धर्म, से सलिल ना छाड़य॥ 1॥
वैष्णव–शरीर, अप्राकृत सदा, स्वभाव–वपुर धर्मे।
कभु नहे जड़, तथापि ये निन्दे, पड़े से विषमाधर्मे॥ 2॥
सेइ अपराधे, यमेर यातना, पाय जीव अविरत।
हे नन्दनन्दन, सेइ अपराधे, येन नाहि हइ हत ॥ 3॥
तोमार वैष्णव, वैभव तोमार, आमारे करुन दया।
तवे मोर गति, हबे तव प्रति, पाब तव पदछाया॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

हे हरि! जल धर्म के कारण गंगा के पवित्र जल में भी कीचड़ व झाग दिखायी देता है तब भी वह जल गंगात्त्व धर्म (पवित्रता) को नहीं छोड़ता। (1) इसी प्रकार वैष्णव शरीर हमेशा अप्राकृत होता है। स्वभाव व शरीर के धर्म के कारण वह कभी प्राकृत नहीं होता। इतना होने पर भी जो वैष्णवों की निन्दा

करता है, वह भयंकर अधर्म में फंस जाता है। (2) इसी भयंकर अपराध के कारण जीव निरन्तर यम–यन्त्रणायें भोगता है। हे नन्दनन्दन! ऐसी कृपा कीजिए कि इन अपराधों के कारण जैसे मेरा पतन न हो। (3) आपके वैष्णव आपका वैभव हैं। हे हरि! मुझ पर करुणा करो। तभी उनके प्रति मेरी मति होगी और मैं आपकी पद छाया प्राप्त करूँगा। (4)

▲ ▲ ▲ ▲

कि रूपे पाइव सेवा मुइ दुराचार।
श्रीगुरु–वैष्णवे रति ना हैल आमार॥
अशेष मायाते मन मगन हइल।
वैष्णवेते लेश मात्र रति ना जन्मिल॥
विषये भुलिया अन्ध हैनु दिवानिशि।
गले फँास दिते फिरे माया से पिशाची॥
इहारे करिया जय छाड़ान ना याय।
साधुकृपा बिना आर नाहिक उपाय॥
अदोषदरशि प्रभो पतित उद्धार।
एइबार नरोत्तमे करह निस्तार॥

मैं दुराचारी भला कैसे आपकी सेवा प्राप्त कर सकता हूँ? श्रीगुरुदेव जी में व वैष्णवों में मेरी प्रीति नहीं हुई। अशेष माया में मेरा मन मग्न हो गया है। वैष्णवों में लेशमात्र भी अनुराग नहीं हुआ। मैं दिन–रात विषय भोगों में सब कुछ भूल कर अन्धा हुआ पड़ा हूँ और यह मायारूप पिशाची मेरे गले में फँासी का फन्दा डालने के लिए डोल रही है। मैं इस माया को जय करके इससे छुटकारा नहीं पा सकता, साधु की कृपा के इलावा और कोई उपाय नहीं है, इससे बचने का। श्रीनरोत्तम ठाकुर जी कहते हैं कि हे अदोषदर्शी प्रभो! आप ही इस पतित का उद्धार कीजिये और इसी जन्म में मेरा निस्तार कर दीजिये।

▲ ▲ ▲ ▲

'सपार्षद भगवद्-विरहजनित-विलाप'

ये आनिल प्रेमधन करुणा प्रचुर।
हेन प्रभु कोथा गेला आचार्य ठाकुर? ॥ 1 ॥

काँहा मोर स्वरूप-रूप, काँहा सनातन?
काँहा दास - रघुनाथ पतितपावन? ॥ 2 ॥

काँहा मोर भट्टयुग, काँहा कविराज?
एककाले कोथा गेला गोरा नटराज? ॥ 3 ॥

पाषाणे कुटिब माथा अनले पशिब?
गौरांग गुणेर निधि कोथा गेले पाब? ॥ 4 ॥

से सब संगीर संगे ये कैल विलास।
से-संग ना पाञा कान्दे नरोत्तमदास॥ 5 ॥

अतिशय करुणा करके जो प्रेमधन को लाये थे, वे आचार्य ठाकुर कहाँ चले गये? कहाँ मेरे वे स्वरूप दामोदर हैं, कहाँ वे रूप गोस्वामी जी हैं, कहाँ सनातन गोस्वामी जी हैं तथा कहाँ वे पतित–पावन रघुनाथ दास गोस्वामी जी हैं? कहाँ मेरे गोपाल भट्ट गोस्वामी जी हैं, कहाँ मेरे रघुनाथ भट्ट गोस्वामी जी हैं तथा कहाँ मेरे वे कृष्णदास कविराज गोस्वामी जी हैं? ये सभी के सभी गौरजन एक साथ कहाँ चले गये? मैं पत्थर पर अपना सिर पटक दूँ या आग में कूद जाऊँ —मैं कहाँ जाऊँ — वे गौरांग गुणनिधि मुझे कहाँ जाने से मिलेंगे। उन महाप्रभु जी के संगियों के संग जिन्होंने लीला विलास की, उन सब को न पाकर श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी हर समय रोते रहते हैं।

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु जी की महिमा

अक्रोध परमानन्द नित्यानन्दराय।
अभिमान-शून्य निताइ नगरे बेड़ाय॥
अधम पतित जीवेर द्वारे-द्वारे गिया।
हरिनाम महामन्त्र देन बिलाइया॥
यारे देखे तारे कहे दन्ते तृण धरि'।
आमारे किनिया लह भज गौरहरि॥
एत बलि नित्यानन्द भूमे गड़ि याय।
सोनार पर्वत येन धूलाते लोटाय॥
हेन अवतारे यार रति ना जन्मिल।
लोचन बले सेइ पापी एल आर गेल॥

क्रोध रहित एवं परमानन्द पूर्ण नित्यानन्द प्रभु अभिमान शून्य होकर नगर में भ्रमण कर रहे हैं। वे पतित जीवों के द्वार–द्वार पर जाकर हरिनाम महामन्त्र बांटते फिर रहे हैं। वे जिसको भी देखते हैं उससे दान्तों में तिनका लेकर अर्थात् अत्यन्त दीनता से कहते हैं कि आप गौरहरि का भजन करो और मुझे खरीद लो। इतना ही नहीं, ऐसा कहकर नित्यानन्द प्रभु प्रेमानन्द में विभोर हो जाते हैं तथा ज़मीन पर लोट–पोट होने लगते हैं। तब ऐसा लगता है मानो सोने का पर्वत ज़मीन पर लोट–पोट हो रहा हो। इस प्रकार के अवतार में जिसकी प्रीति उदित नहीं हुई, लोचन दास ठाकुर जी कहते हैं कि उसकी ज़िन्दगी बेकार है। वह पापी तो समझो आया और गया।

▲ ▲ ▲ ▲

नदीया - गोद्रुमे नित्यानन्द महाजन ।
पातियाछे नामहट्ट जीवेर कारण॥ 1॥
(श्रद्धावान् जन हे, श्रद्धावान् जन हे)
प्रभुर आज्ञाय भाइ, मागि एइ भिक्षा।
बल 'कृष्ण',भज 'कृष्ण', कर कृष्ण-शिक्षा॥ 2॥

अपराध - शून्य ह'ये लह कृष्णनाम।
कृष्ण माता, कृष्ण पिता, कृष्ण धन-प्राण॥ 3॥
कृष्णेर संसार कर, छाड़ि, अनाचार।
जीवे दया, कृष्णनाम - सर्वधर्मसार॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

ज़िला नदिया के गोद्रुम धाम में महाजन श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु जी ने हरिनाम का बाज़ार खोल दिया है। वे जीवों को पुकार–पुकार कर कहते हैं — हे श्रद्धावान जन! हे श्रद्धावान जन!! भाईयो! मैं महाप्रभु जी की आज्ञा से आपके पास भीख माँगता हूँ — आप कृपा करके कृष्ण–कृष्ण कहिये, कृष्ण–भजन कीजिये तथा श्रीकृष्ण की जो शिक्षा है, उसे ग्रहण कीजिये।(1–2) अपराध शून्य होकर आप कृष्ण नाम लीजिये। कृष्ण ही माता हैं, कृष्ण ही पिता हैं तथा कृष्ण ही धन व प्राण–स्वरूप हैं।(3) आप तमाम प्रकार के अत्याचारों को छोड़कर कृष्ण–संसार कीजिये। जीवों पर दया करना व कृष्ण नाम करना — यही सभी धर्मों का सार है।(4)

▲ ▲ ▲ ▲

निताइ गुणमणि आमार निताइ गुणमणि।
आनिया प्रेमेर वन्या भासाल अवनी॥ 1॥
प्रेमेर वन्या लइया निताइ आइला गौड़ देशे।
डुबिल भक्तगण दीन - हीन भासे॥ 2॥
दीन - हीन पतित पामर नाहि बाछे।
ब्रह्मार दुर्लभ प्रेम सबाकारे याचे॥ 3॥
आबद्ध करुणा-सिन्धु निताइ काटिया मोहान।
घरे - घरे बुले प्रेम - अमियार वान॥ 4॥
लोचन बले मोर निताइ येबा ना भजिल।
जानिया शुनिया सेइ आत्मघाती हैल॥ 5॥

निताई गुणमणि मेरे हैं, निताई गुणमणि मेरे हैं। इन्होंने कृष्ण–प्रेम की बाढ़ लाकर सारी पृथ्वी को उसमें डुबो दिया।(1) कृष्ण–प्रेम की बाढ़ लेकर

नित्यानन्द प्रभु गौड़ देश में आये, जिस आनन्द में सारे भक्त डूब गये तथा जो दीन–हीन थे, वे भी उस प्रेम की बाढ़ में बह चले।(2) ब्रह्मा जी के लिए जो 'कृष्ण–प्रेम' दुर्लभ है वह प्रेम सभी को बाँट दिया। इन्होंने उससे दीन–हीन या पतितों को भी वन्चित नहीं रखा।(3) असीम करुणा–सागर नित्यानन्द प्रभु ने उस प्रेम के बाँध को तोड़ दिया जिससे वह कृष्ण–प्रेमामृत घर–घर में घुस गया।(4) लोचन दास जी कहते हैं कि इस प्रकार के दयालु–कृपालु जो मेरे नित्यानन्द प्रभु हैं, उनका जिसने भजन नहीं किया तो समझना होगा कि जानबूझ कर वह आत्म–हत्यारा बना।(5)

▲ ▲ ▲ ▲

निताइ–पद–कमल, कोटि चन्द्र सुशीतल,
ये छायाय जगत जुड़ाय।
हेन निताइ बिने भाई, राधा कृष्ण पाइते नाइ,
दृढ़ करि धर निताइर पाय॥

से सम्बन्ध नाहि यार, वृथा जन्म गेल तार,
सेइ पशु बड़ दुराचार।
निताइ ना बलिल मुखे, मजिल संसार सुखे,
विद्याकुले कि करिबे तार॥

अहंकारे मत्त हइया, निताइ - पद पासरिया,
असत्येरे सत्य करि' मानि।
निताइयेर करुणा हबे, ब्रजे राधा - कृष्ण पाबे,
धर निताइर चरण दु'खानि॥

निताइयेर चरण सत्य, ताँहार सेवक नित्य,
निताइ–पद सदा कर आश।
नरोत्तम बड़ दुःखी, निताइ मोरे कर सुखी,
राख रांगा–चरणेर पाश।।

श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु जी के चरण–कमल करोड़ों चन्द्रमाओं के समान सुशीतल हैं। उनकी छाया में सारा संसार शीतलता प्राप्त करता है। ऐसे

नित्यानन्द प्रभु के बिना, अरे भाई! श्रीराधा–कृष्ण की प्राप्ति नहीं हो सकती। अतः दृढ़तापूर्वक नित्यानन्द प्रभु के पादपद्मों का अवलम्बन करो। उन पादपद्मों से जिसका सम्बन्ध नहीं है, उसका जीवन तो व्यर्थ ही चला गया। वह तो पशु है, बड़ा दुराचारी है। मुख से 'निताइ' उच्चारण नहीं किया और सांसारिक सुखों में ही मशगूल रहा तो उसकी विद्या व उसका कुल उसका क्या करेगा? अहंकार में मत्त होकर नित्यानन्द प्रभु के पादपद्मों को भुला बैठा और असत्य को ही सत्य समझे बैठा है। नित्यानन्द प्रभु की करुणा होगी तो ब्रज में श्रीराधा–कृष्ण की प्राप्ति होगी, इसलिये नित्यानन्द प्रभु के श्रीचरणों को भली–भाँति पकड़ लो। नित्यानन्द प्रभु के श्रीचरण सत्य वस्तु हैं, उनके सेवक भी नित्य हैं। इसलिये नित्यानन्द प्रभु जी के पादपद्मों की ही सदा अभिलाषा करो। श्रीनरोत्तम ठाकुर जी कहते हैं कि मैं अति दुःखी हूँ। हे नित्यानन्द प्रभु! मुझे अपने अरुणवर्ण के श्रीचरणों के पास रख कर सुखी कर दीजिये।

▲ ▲ ▲ ▲

आरे भाई! भज मोर गौरांग चरण।
ना भजिया मैनु दुखे, डुबि' गृह-विष-कूपे,
दग्ध कैल ए पाँच पराण॥
तापत्रय-विषानले, अहर्निशि हियाज्वले,
देह सदा हय अचेतन।
रिपुवश इन्द्रिय हैल, गौरापद पाशरिल,
विमुख हइल हेन धन॥
हेन गौर दयामय, छाड़ि' सब लाज-भय,
कायमने लह रे शरण।
परम दुर्मति छिल, तारे गोरा उद्धारिल,
तारा हैल पतितपावन॥
गोरा द्विज-नटराजे, बान्धह हृदय-माझे,
कि करिबे संसार-शमन।
नरोत्तमदासे कहे, गोरा-सम केह नहे,
ना भजिते देय प्रेमधन॥

अरे भाई! मेरे गौरांग महाप्रभु जी के चरणों का भजन करो। दु:ख की बात यह है कि मैंने उनका भजन नहीं किया और ज़हर के समान शरीर व शरीर सम्बन्धी भोगों में पड़ा रहा, जिसने मेरे पाँचों प्राणों को जला डाला। त्रिताप रूपी विषाग्नि में दिन–रात मेरा हृदय जलता रहता है, शरीर हमेशा अचेतन सा रहता है, सारी इन्द्रियाँ शत्रुओं के वश में हो गयीं हैं चूँकि श्रीगौर पादपद्मों को मैंने भुला दिया, इसलिये परम धन से वन्चित भी हो गया हूँ। श्रीगौरांग महाप्रभु जी ऐसे दयामय हैं कि जो परम दुर्मति थे, उनका भी इन्होंने उद्धार कर दिया और वे भी पतित–पावन बन गये। इसलिये सब लाज–भय छोड़ कर शरीर और मन से इनकी शरण ग्रहण करो। द्विज नटराज श्रीगौरांग महाप्रभु को अपने हृदय के मध्य बाँध लो तो फिर सांसारिक काल तुम्हारा क्या कर लेगा। श्रीनरोत्तम दास जी कहते हैं कि गौरांग महाप्रभु के समान और कोई नहीं है। ये तो भजन न करने वाले को भी प्रेमधन प्रदान कर देते हैं।

▲ ▲ ▲ ▲

उच्छ्वास

कबे श्रीचैतन्य मोरे करिबेन दया।
कबे आमि पाइब वैष्णव–पद छाया॥ 1॥
कबे आमि छाड़िब ए विषयाभिमान।
कबे विष्णुजने आमि करिब सम्मान॥ 2॥
गलवस्त्र कृतान्जलि वैष्णव–निकटे।
दन्ते तृण करि' दाँड़ाइब निष्कपटे॥ 3॥
काँदिया काँदिया जानाइब दु:खग्राम।
संसार अनल हैते मागिब विश्राम॥ 4॥
शुनिया आमार दु:ख वैष्णव ठाकुर।
आमा लागि' कृष्णे आवेदिबेन प्रचुर॥ 5॥
वैष्णवेर आवेदने कृष्ण दयामय।
ए हेन पामर प्रति हबेन सदय॥ 6॥
विनोदेर निवेदन वैष्णवचरणे।
कृपा करि संगे लह एइ अकिन्चने॥ 7॥

श्रीचैतन्य महाप्रभु जी ! आप मुझ पर कब कृपा करेंगे ? कब मैं वैष्णव पदाश्रय ग्रहण करूँगा ? कब मैं अपने विषयाभिमान को छोड़ूँगा तथा कब मैं विष्णु–जन अर्थात् वैष्णवों का सम्मान करूँगा ? कब मैं गले में वस्त्र लेकर, हाथ जोड़कर व दान्तों में तृण लेकर अर्थात् अत्यन्त दीनता से वैष्णवों के पास उपस्थित होऊँगा ? मैं रो–रोकर अपना दुःख उनके समक्ष ज्ञापन करूँगा और संसार रूपी आग से मुक्ति के लिए प्रार्थना करूँगा ? वैष्णव ठाकुर मेरे दुःख को सुनकर मेरे लिये कृष्ण से आवेदन करेंगे और वैष्णवों के द्वारा आवेदन करने से श्रीकृष्ण इस प्रकार के पामर के प्रति अर्थात् मेरे प्रति सदय हो जायेंगे। श्रील भक्तिविनोद जी वैष्णवों के चरणों में निवेदन करते हैं कि कृपा कर इस अकिन्चन को साथ ही ले लीजिये।

▲ ▲ ▲ ▲

अवतार–सार, गोरा अवतार, केन ना भजिलि ताँरे।
करि' नीरे वास, गेल ना पियास, आपन करम फेरे॥ 1॥

कन्टकेर तरु, सदाइ सेविलि (मन), अमृत पाइवार आशे।
प्रेमकल्पतरु, श्रीगौरांग आमार, ताहारे भाविलि विषे ॥ 2॥

सौरभेर आशे, पलाश शुँकिलि (मन), नासाते पशिल कीट।
इक्षुदण्ड' भावि, काठ चुषिलि (मन), केमने पाइबि मिठ॥ 3॥

हार' बलिया, गलाय परिलि (मन), शमन–किंकर साप।
शीतल' बलिया, आगुन पोहालि (मन), पाइलि वजर ताप॥ 4॥

संसार–भजिलि, श्रीगौरांग भुलिलि, ना शुनिलि साधुर कथा।
इह–परकाल, दुकाल खोयालि (मन), खाइलि आपन माथा॥ 5॥

(श्री लोचन दास ठाकुर)

अवतारों के भी अवतारी हैं महाप्रभु गौरांगदेव जी, उनका भजन तूने क्यों नहीं किया ? पानी में रहा पर तेरी प्यास न बुझी, ये तेरे अपने कर्मों का फेर है। अमृत पाने की इच्छा से काँटे वाले पेड़ की हमेशा सेवा की परन्तु प्रेम कल्पतरु जो मेरे गौरांग महाप्रभु जी हैं उनके प्रति तो तू ज़हर की सी भावना रखता था। सुगन्ध की आशा में पलाश फूल को सूंघ लिया और नाक में कीड़े

घुस गये। गन्ना समझ कर लकड़ी को चूसने लगा तो भला उसने कैसे मीठा लगना था। हार समझ कर काल-सर्प को गले में पहन लिया तथा हे मन तूने शीतल समझ कर आग सेकी, जिससे भीषण ताप मिला। संसार का तो खूब भजन किया परन्तु श्रीगौरांग महाप्रभु जी को भूल गया। साधु की बात को सुना नहीं जिससे अपने वर्तमान को व भविष्य — दोनों को, तूने खो दिया और अपनी किस्मत को स्वयं ही खराब कर बैठा।

▲ ▲ ▲ ▲

सावरण-श्रीगौरमहिमा

गौरांगेर दुटिपद, यार धन सम्पद,
से जाने भक्ति-रस-सार।
गौरांगेर मधुर लीला, यार कर्णे प्रवेशिला।
हृदय निर्मल भेल तार॥
जे गौरांगेर नाम लय, तार हय प्रेमोदय,
तारे मुञि याइ बलिहारी।
गौरांग-गुणेते झुरे, नित्यलीला तारे स्फुरे,
से जन भकति-अधिकारी॥
गौरांगेर संगि-गणे, नित्यसिद्ध करि' माने,
से याय व्रजेन्द्र-सुत पाश।
श्रीगौड़मण्डल भूमि, येवा जाने चिन्तामणि,
तार हय ब्रजभूमे वास॥
गौरप्रेमसरसार्णवे, से तरंगे येवा डुबे,
से राधामाधव अन्तरंग।
गृहे वा वनेते थाके, हा गौरांग ब'ले डाके,
नरोत्तम मांगे तार संग॥

श्रीगौरांग महाप्रभु जी के श्रीचरण युगल ही जिसकी धन-सम्पत्ति हैं, वह ही भक्तिरस के सार को जानता है। श्रीगौरांग महाप्रभु की मधुर लीला ने

जिसके कानों में प्रवेश किया है, उसी का हृदय निर्मल हो गया। जो श्रीगौरांग महाप्रभु जी का नाम लेता है, उसके हृदय में प्रेमोदय हो उठता है, मैं उसके बलिहारी जाता हूँ। जो श्रीगौरांग महाप्रभु जी के गुणों से द्रवित हो उठता है, उसी के अन्त:करण में भगवान की नित्यलीला का स्फुरण हो उठता है और वास्तव में वही भक्ति का अधिकारी है। श्रीगौरांग महाप्रभु के संगी–गणों को जो नित्य मानता है, वह व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण के पास पहुँच जाता है। श्रीगौड़मण्डल भूमि को जो चिन्तामणि की तरह समझता है,उसका ब्रजभूमि में वास होता है। गौर–प्रेमरस सागर की तरंगों में जो डूबता है, वह राधा–माधव जी का अन्तरंग जन होता है। चाहे कोई घर में रहे या वन में रहे, श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी कहते हैं कि यदि वह 'हा गौरांग' कह कर उच्च स्वर से पुकारता है तो मैं उसका संग चाहता हूँ।

▲ ▲ ▲ ▲

आक्षेप

गोरा पँहु ना भजिया मैनु।
प्रेम - रतन - धन हेलाय हाराइनु॥

अधने यतन करि धन तेयागिनु।
आपन करम दोषे आपनि डुबिनु॥

सत्संग छाड़ि कैनु असते विलास।
ते–कारणे लागिल ये कर्मबन्ध–फाँस॥

विषय विषम विष सतत खाइनु।
गौर कीर्त्तन - रसे मगन ना हैनु॥

केन वा आछये प्राण कि सुख पाइया।
नरोत्तमदास केन ना गेल मरिया॥

श्रीगौरांग जी के चरणों का मैंने भजन नहीं किया, प्रेम–रत्न–धन को लापरवाही में ही खो डाला। जो धन नहीं है उसके लिए मैंने प्रयत्न किया परन्तु असली धन को त्याग दिया। अपने कर्मों के दोष से अपने आप ही डूब गया हूँ। मैंने सत्संग को छोड़ कर असत् में विचरण किया, इसलिये मुझे कर्मबन्धन रूप

फाँसी लग गयी। विषय रूप विष को मैंने निरन्तर खाया परन्तु गौर-कीर्त्तन रस में कभी मग्न नहीं हुआ। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी कहते हैं कि मेरी समझ में नहीं आता है कि मुझमे प्राण क्यों बचे हुये हैं, इन्हें क्या सुख मिल रहा है? मैं मर क्यों नहीं गया?

▲ ▲ ▲ ▲

लालसामयी-प्रार्थना

'गौरांग' बलिते हबे पुलक शरीर।
'हरि-हरि' बलिते नयने ब'बे नीर॥

आर कबे निताइचाँदेर करुणा हइबे।
संसार वासना मोर कबे तुच्छ हबे॥

विषय छाड़िया कबे शुद्ध हबे मन।
कबे हाम हेरब श्रीवृन्दावन॥

रूप - रघनाथ - पदे हइबे आकुति।
कबे हाम बुझव से युगल-पीरिति॥

रूप - रघुनाथ - पदे रहु मोर आश।
प्रार्थना करये सदा नरोत्तम दास॥

हे प्रभो! 'गौरांग' उच्चारण करने मात्र से कब मेरा शरीर पुलकायमान होगा, हरि-हरि कहते-कहते कब मेरे नेत्रों से अश्रु-धारायें प्रवाहित होंगी तथा कब नित्यानन्द प्रभु की मुझ पर करुणा होगी, जिस करुणा से मेरी तमाम सांसारिक वासनायें तुच्छ हो जाएँगी? विषयों को त्याग कर कब मेरा मन शुद्ध होगा तथा कब मैं वृन्दावन का दर्शन कर पाऊँगा? श्रीरूप गोस्वामी व श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी के चरण-कमलों में, मैं कब व्याकुलता लाभ करूँगा तथा कब मैं उन श्रीराधा-कृष्ण की युगल प्राप्ति के तत्त्व को समझ पाऊँगा? श्रील नरोत्तम दास ठाकुर जी हमेशा यही प्रार्थना करते रहते हैं कि श्रीरूप गोस्वामी जी व श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी जी के श्रीचरणों में मेरी आशा बनी रहे अर्थात श्रीरूप गोस्वामी जी व श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी जी की कृपा से ही व श्रीगुरु-वैष्णव कृपा से ही मेरी उपरोक्त सभी इच्छाएँ पूर्ण हो पायेंगी।

▲ ▲ ▲ ▲

(यदि) गौर ना हइत, तबे कि हइत, केमने धरिताम दे'।
राधार महिमा प्रेमरस – सीमा, जगते जानात के ? ॥

मधुर वृन्दा – विपिन माधुरी , प्रवेश चातुरी सार।
वरज युवती, भावेर भकति, शकति हइत का'र? ॥

गाओ – गाओ पुनः, गौरांगेर गुण, सरल करिया मन।
ए भव सागरे एमन दयाल, ना देखिये एकजन।।

(आमि) गौरांग बलिया, ना गेनु गलिया, केमने धरिनु दे'।
वासुर – हिया, पाषाण दिया, (विधि) केमने गड़ियाछे॥

यदि गौरांग महाप्रभु जी न होते तो तब क्या होता? मैं किस प्रकार अपने इस शरीर को धारण करता? राधा जी की महिमा व उन्नत उज्ज्वल रस की बात जगत् को कौन बताता? मधुर वृन्दावन की जो माधुरी है, उसमें प्रवेश पाने का चातुर्य ही सार है तथा व्रज–गोपियों की जो परकीया भाव की भक्ति है, किसकी शक्ति थी जो वहाँ तक पहुँच पाता? इसलिये बार–बार गौरांग महाप्रभु जी के गुणों का सरल मन से, निष्कपट मन से कीर्त्तन करो। इस भव–सागर में इस प्रकार का दयालु और कोई नहीं दिखायी देता। श्रीवासुदेव घोष जी दीनता से अपने बारे में कहते हैं कि मैंने भी न जाने कैसे इस शरीर को धारण किया हुआ है? कारण गौरांग नाम करने के बावजूद भी चित्त द्रवित नहीं हो रहा है। मुझे लगता है कि विधि ने शायद मेरे इस हृदय को पाषाण से निर्मित किया है।

▲ ▲ ▲ ▲

पुनः प्रार्थना

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु दया कर मोरे।
तोमा बिना के दयालु जगत्-संसारे॥

पतितपावन – हेतु तव अवतार।
मो सम पतित प्रभु ना पाइबे आर॥

हा हा प्रभु नित्यानन्द! प्रेमानन्द सुखी!
कृपावलोकन कर आमि बड़ दुःखी॥

दया कर सीतापति अद्वैत गोसाईं।
तव कृपा बले पाइ चैतन्य - निताई॥
दया कर गौर शक्ति पण्डित गदाधर।
श्रीवासादि भक्तवृन्द मोरे दया कर॥
हा हा स्वरूप, सनातन, रूप, रघुनाथ।
भट्टयुग, श्रीजीव, हा प्रभु लोकनाथ॥
दया कर श्रीआचार्य, प्रभु श्रीनिवास।
रामचन्द्र संग माँगे नरोत्तमदास॥
दया कर प्रभुपाद श्रीदयित दास।
तव पद छाया माँगे ए अधम दास॥
दया कर गुरुदेव पतितपावन।
तव पद कृपा माँगे दीन अकिंचन॥

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु जी! मुझ पर दया कीजिए। आपको छोड़ और दयालु है ही कौन इस जगत् में। पतितों को पावन करने के लिये ही आपका अवतार हुआ है और मेरे जैसा पतित, प्रभु! आपको और कोई नहीं मिलेगा। **हा! हा! नित्यानन्द प्रभो! आप तो हमेशा ही प्रेमानन्द में विभोर रहते हैं,** मेरी ओर कृपा अवलोकन कीजिये। हे प्रभु! मैं बहुत दुःखी हूँ। हे सीतापति श्रीअद्वैत गोस्वामी! मुझ पर दया कीजिये। आपके कृपाबल से ही श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभु की प्राप्ति होती है। हे गौर-शक्ति पण्डित गदाधर जी! मुझ पर दया करो। हे श्रीवासादि भक्तवृन्द! आप भी सभी मुझ पर दया करो। हा हा स्वरूप दामोदर प्रभु! हे सनातन गोस्वामी! हे श्रीरूप गोस्वामी ! हे रघुनाथ दास गोस्वामी! हे रघुनाथ भट्ट गोस्वामी! हे गोपाल भट्ट गोस्वामी! हे श्रीजीव गोस्वामी! हा लोकनाथ प्रभु! मुझ पर कृपा कीजिये। हे श्रीनिवास आचार्य प्रभु! आप मुझ पर दया कीजिये, ये नरोत्तम दास श्रीरामचन्द्र कविराज जी के संग की प्रार्थना करता है। **[श्रीदयित दास प्रभुपाद जी! आप मुझ पर दया करें, ये अधमदास आपकी चरण-छाया की प्रार्थना करता है। पतित पावन श्रील गुरुदेव जी! मुझ पर दया कीजिए, ये दीन अकिंचन आपकी कृपा प्रार्थना करता है।]**

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु जीवे दया करि ।
स्वपार्षद स्वीय धाम सह अवतरि ॥ 1 ॥

अत्यन्त दुर्लभ प्रेम करिवारे दान ।
शिखाय शरणागति भकतेर प्राण ॥ 2 ॥

दैन्य, आत्मनिवेदन, गोमृत्वे वरण।
'अवश्य रक्षिबे कृष्ण'— विश्वास पालन ॥ 3 ॥

भक्ति - अनुकूलमात्र कार्येर स्वीकार।
भक्ति-प्रतिकूल-भाव वर्जन-अंगीकार ॥ 4 ॥

षड़ंग शरणागति हइबे याँहार।
ताँहार प्रार्थना शुने श्रीनन्दकुमार ॥ 5 ॥

रूप - सनातन - पदे दन्ते तृण करि'।
भक्तिविनोद पड़े दुई पद धरि' ॥ 6 ॥

काँदिया काँदिया बले आमि त'अधम।
शिखाये शरणागति करहे उत्तम ॥ 7 ॥

श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु जी जीवों पर दया परवश होकर अपने पार्षदों एवं अपने धाम के साथ अवतीर्ण हुए।(1) श्रीचैतन्य महाप्रभु जी जीवों को अत्यन्त दुर्लभ प्रेम का दान करने के लिये ही अवतीर्ण हुए, इसलिये वे, भक्ति की जो प्राण है — शरणागति, उसकी शिक्षा देते हैं।(2) दीनता, आत्मनिवेदन करना, भगवान को अपने पालन–कर्ता के रूप में वरण करना, श्रीकृष्ण मेरी अवश्य रक्षा करेंगे, ऐसा दृढ़ विश्वास रखना, एवं भगवद्–भक्ति के जो अनुकूल कार्य हैं, उन्हें स्वीकार करना तथा भक्ति के प्रतिकूल भावों को छोड़ना।(3–4) छः अंगों वाली शरणागति जिनकी होगी, उनकी प्रार्थना को ही श्रीनन्दनन्दन भगवान सुनेंगे।(5) श्रीभक्तिविनोद ठाकुर जी श्रीरूप गोस्वामी प्रभु जी व श्रीसनातन गोस्वामी जी के चरणों में दाँतों में तिनका लेकर अर्थात् अत्यन्त दीनता के साथ गिर जाते हैं और रोते–रोते प्रार्थना करते हैं कि मैं तो अधम हूँ, शरणागति की शिक्षा देकर मुझे उत्तम बना दीजिये।(6–7)

▲ ▲ ▲ ▲

कबे आहा गौरांग बलिया।
भोजन शयने, देहेर यतने, छाड़िब विरक्त हइया॥

नवद्वीप - धामे, नगरे - नगरे, अभिमान परिहरि'।
धामवसि - घरे, माधुकरी ल'व, खाइब उदर भरि॥

नदीतटे गिया, अन्जली - अन्जली, पिव प्रभु-पदजल।
तरुतले पड़ि', आलस्य त्यजिव, पाइब शरीरे बल॥

काकुति करिया, 'गौर-गदाधर' 'श्रीराधामाधव' नाम।
काँदिया-काँदिया, डाकि' उच्चरवे, भ्रमिव सकल धाम॥

वैष्णव देखिया, पड़िव चरणे, हृदयेर बन्धु जानि।
वैष्णव ठाकुर, प्रभुर कीर्तन, देखाइवे दास मानि'॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

अहो! कब ऐसा होगा, जब मैं भोजन के समय व शयनादि के समय अर्थात् हर समय गौरांग महाप्रभु जी का नाम उच्चारण करता रहूँगा और विरक्त होकर इस देह का यत्न छोड़ दूँगा। नवद्वीपधाम में, नगर–नगर में सारे जड़ीय अभिमानों को छोड़ कर धामवासियों के घर से माधुकरी लेकर पेट भर कर खाऊँगा। नदी के किनारे जाकर अन्जलि भर–भर कर प्रभु–पद–जल अर्थात् गंगा–जल का पान करूँगा तथा वृक्ष के नीचे निरालस्य भाव से रह कर शारीरिक बल भी पाऊँगा। अति–आर्ति के साथ 'श्रीगौर–गदाधर', 'श्रीराधा–माधव' आदि नामों को रोते–रोते उच्च स्वर से पुकारूँगा और सभी धामों का भ्रमण करूँगा। वैष्णवों का दर्शन करते ही उन्हें अपना हृदय–बन्धु समझ कर उनके चरणों में पड़ जाऊँगा। श्रीभक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि वैष्णव लोग ही मुझे अपना दास समझ कर श्रीमन् महाप्रभु जी के कीर्तन में अधिकार प्रदान करेंगे।

▲ ▲ ▲ ▲

कबे गौर-वने, सुरधुनी-तटे, हा राधे हा कृष्ण, बले।
काँदिया बेड़ाव, देह-सुख छाड़ि, नाना लता-तरुतले ॥ 1॥

श्वपच - गृहेते, मागिया खाइब, पिव सरस्वती-जल।
पुलिने-पुलिने, गड़ागड़ि दिव, करि कृष्ण-कोलाहल॥ 2॥

धामवासि जने, प्रणति करिया, मागिव कृपार लेश।
वैष्णव-चरण-रेणु गाय माखि, धरि अवधूत-वेश॥ 3॥

गौड़-व्रज-जने, भेद ना देखिव, हइब वरजवासी।
धामेर स्वरूप, स्फुरिवे नयने, हइब राधार दासी॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

कब गौर वन में, गंगा के किनारे नाना प्रकार के वृक्ष लताओं के नीचे, देह सुख की परवाह छोड़कर हा राधे! हा कृष्ण! उच्चारण करके रोता हुआ भ्रमण करूँगा। (1) चाण्डाल के घर से मांगकर खाऊँगा, सरस्वती जल पान करूँगा तथा पुलिन–पुलिन में कृष्ण–कृष्ण कह कर लोटपोट होऊँगा? (2) धामवासियों को प्रणाम करके उनसे कृपा का लेश माँगूंगा तथा वैष्णव चरण–रेणु को अपने शरीर में मलकर अवधूत वेश धारण करूँगा। (3) गौड़ धाम तथा व्रज धाम में भेद नहीं देखूँगा, व्रजवासी होऊँगा तथा धाम का स्वरूप मेरे नयनों में स्फुरित होगा एवं राधा की दासी होऊँगा। (4)

▲ ▲ ▲ ▲

एमन दुर्मति, संसार भितरे, पड़िया आछिनु आमि।
तव निज - जन, कोन महाजने, पाठाइया दिले तुमि॥ 1॥

दया करि मोरे, पतित देखिया, कहिल आमारे गिया।
ओहे दीनजन, शुन भाल कथा, उल्लसित हबे हिया॥ 2॥

तोमारे तारिते, श्रीकृष्णचैतन्य, नवद्वीपे अवतार।
तोमा हेन कत, दीन हीन जने, करिलेन भवपार॥ 3॥

वेदेर प्रतिज्ञा, राखिवार तरे, रुक्मवर्ण विप्रसुत।
महाप्रभु नामे, नदीया माताय, संगे भाई अवधूत॥ 4॥

नन्दसुत यिनि, चैतन्य गोसाईं, निज–नाम करि दान।
तारिल जगत्, तुमिओ याइया, लह निज–परित्राण॥ 5॥

से कथा शुनिया, आसियाछि, नाथ! तोमार चरणतले।
भक्तिविनोद, काँदिया–काँदिया, आपन काहिनी बले॥ 6॥

मैं ऐसा दुर्मति, संसार में गिरा पड़ा था, तब आपने अहैतुकी कृपा करके

अपने किसी निज–जन, किसी महापुरुष को मेरे पास भेज दिया। (1) उन्होंने मुझे पतित देखकर, दया करके मेरे पास आकर कहा — हे दीनजन! सुनो, मैं तुमको एक अच्छी बात सुनाता हूँ जिसको सुनने से तुम्हारा हृदय उल्लास से भर जायेगा। (2) उन्होंने कहा कि आप सभी का उद्धार करने के लिये श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु जी श्रीनवद्वीप धाम में अवतरित हुए हैं। उन्होंने तुम जैसे न जाने कितने दीन–हीन लोगों को भवसागर से पार कर दिया है। (3) वेद की प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिये ब्राह्मण के पुत्र रूप से रुक्म वर्ण धारण करके श्रीमहाप्रभु नाम से प्रकट हुए हैं। उन्होंने सारे नदिया नगर को प्रेम में पागल कर दिया है, उनके साथ उनके अवधूत भाई श्रीनित्यानन्द प्रभु भी हैं। (4) जो नन्दनन्दन हैं, वे ही श्रीचैतन्य गोसाईं हैं। वे अपना ही नाम वितरण कर रहे हैं। सारे जगत् का उन्होंने उद्धार कर दिया है। इसलिये तुम भी उनकी शरण में जाओ और अपना उद्धार करवा लो। (5) हे प्रभो! ये बात सुनकर ही मैं आपके पाद–पद्मों में आया हूँ। इस प्रकार भक्तिविनोद ठाकुर जी रोते–रोते अपनी कहानी कहते हैं। (6)

▲ ▲ ▲ ▲

जय जय श्रीकृष्णचैतन्य नित्यानन्द।
जयाद्वैतचन्द्र जय गौरभक्तवृन्द॥

कृपा करि' सबे मिलि करह करुणा।
अधम पतित जने ना करिह घृणा॥

ए तिन संसार–माझे तुया पद सार।
भाविया देखिनु मने—गति नाहि आर॥

से पद पावार आशे खेद उठे मने।
व्याकुल हृदय सदा करिये क्रन्दने॥

कि रूपे पाइव किछु ना पाइ सन्धान।
प्रभु–लोकनाथ पद नाहिक स्मरण॥

तुमि त दयाल प्रभु! चाह एकबार।
नरोत्तम हृदयेर घुचाओ अन्धकार॥

हे श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु! आपकी जय हो। हे श्रीनित्यानन्द प्रभु! आपकी जय हो। हे श्रीअद्वैतचन्द्र प्रभु! आपकी जय हो? हे गौर भक्तवृन्द! आपकी जय हो। आप सभी कृपा करके मुझ पर करुणा कीजिये। मुझ अधम–पतित से घृणा न करना। बहुत सोच–विचार कर मैंने यह अनुभव किया है कि इस त्रिभुवन में आपके श्रीचरण ही सार–वस्तु हैं, इनके इलावा मेरी और कोई गति नहीं है। इन चरणों को पाने के लिये ही मेरे मन में व्यथा होती है और इन्हीं के लिये ये हृदय व्याकुल होकर क्रन्दन करता रहता है। इन चरणों की प्राप्ति कैसे होगी, इसका कोई अनुसन्धान नहीं मिलता। लोकनाथ प्रभु के चरणों का भी स्मरण नहीं होता। श्रीनरोत्तम दास ठाकुर जी कहते हैं कि हे प्रभु! आप तो दयालु हैं, एक बार आप मेरी ओर निहारिये और मेरे हृदय का तमाम अन्धकार दूर कर दीजिये।

▲ ▲ ▲ ▲

गाय गोरा मधुर स्वरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥ 1॥

गृहे थाक, वने थाक, सदा 'हरि' ब'ले डाक,
सुखे-दुःखे भुल ना'क, वदने हरिनाम कर रे॥ 2॥

मायाजाले बद्ध ह'ये, आछ मिछे काज ल'ये,
एखनेओ चेतन पे'ये, 'राधा–माधव' नाम बल रे॥ 3॥

जीवन हइल शेष, ना भजिले हृषीकेश,
भक्तिविनोद उपदेश, एक बार नाम–रसे मात रे॥ 4॥

कलियुग प्रेमावतारी युगधर्म–प्रवर्तक श्रीचैतन्य महाप्रभु जी मधुर स्वर में गाते हैं — 'हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥' आप घर में रहो, चाहे जंगल में रहो — हमेशा हरि को पुकारते रहो। सुख में हो या दुःख में हो, कभी भी उन्हें मत भूलो, मुख से हरिनाम करते रहो। तुम मायाजाल में आबद्ध होकर फिजूल के कार्यों में व्यस्त हो — अभी भी चेत जाओ और राधा–माधव नाम का कीर्त्तन करो। श्रील भक्ति

विनोद ठाकुर जी उपदेश देते हुए कहते हैं कि तुम्हारा जीवन खत्म हो गया तब भी तुमने हृषीकेश (इन्द्रियों के स्वामी) भगवान् श्रीकृष्ण का भजन नहीं किया, अरे कम–से–कम एक बार तो नाम रस में मत्त हो जाओ।

▲ ▲ ▲ ▲

कबे ह'बे हेन दशा मोर।
त्यजि' जड़ आशा, विविध बन्धन, छाड़िव संसार घोर॥ 1॥
वृन्दावनाभेदे, नवद्वीप - धामे, बाँधिव कुटीरखानि।
शचीर नन्दन, चरण - आश्रय, करिब सम्बन्ध मानि'॥ 2॥
जाह्ववी - पुलिने, चिन्मय कानने, बसिया विजन स्थले।
कृष्णनामामृत, निरन्तर पिब, डाकिब 'गौरांग' ब'ले॥ 3॥
हा गौर निताई, तोरा दु'टी भाइ, पतितजनेर बन्धु।
अधम पतित, आमि हे दुर्जन, हओ मोरे कृपासिन्धु॥ 4॥
काँदिते-काँदिते, षोलक्रोश-धाम, जाह्ववी-उभयकूले।
भ्रमिते-भ्रमिते, कभु भाग्यफले, देखि किछु तरुमूले॥ 5॥
'हा हा' मनोहर, कि देखिनु आमि, बलिया मूर्च्छित ह' ब।
सम्वित पाइया, काँदिब गोपने, स्मरि दुहुँ कृपालव॥ 6॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

कब मेरी ऐसा दशा होगी जब मैं तमाम जड़ीय आशाओं को छोड़कर, नाना प्रकार के बन्धनों वाले इस घोर संसार को छोड़ दूँगा। (1) वृन्दावन से अभेद जो नवद्वीप धाम है, वहाँ पर एक कुटिया का निर्माण करके शचीनन्दन श्रीगौरहरि जी के श्रीचरणों के आश्रय में रहूँगा तथा उन्हीं से अपना सभी प्रकार का सम्बन्ध जानूंगा। (2) जाह्ववी पुलिन के चिन्मय कानन में एकान्त स्थान पर बैठ कर निरन्तर कृष्ण–नामामृत का पान करूँगा तथा गौरांग नाम लेकर उन्हें उच्च स्वर से पुकारूँगा। (3) हे गौरहरि! हे नित्यानन्द प्रभु! आप दोनों भाई तो पतितों के बन्धु हैं और मैं अधम हूँ, पतित हूँ, दुर्जन हूँ, इसलिये मेरे प्रति आप अपना कृपा–सिन्धु रूप प्रकाशित कीजिये अर्थात् मुझ अधम–पतित व दुर्जन व्यक्ति पर कृपा कीजिये। (4) आपकी कृपा पाकर मैं प्रेम–विह्वल होकर

सोलह कोसमय जो धाम है, वहाँ गंगा जी के दोनों ओर प्रेम में क्रन्दन करते–करते भ्रमण करूँगा और इस प्रकार भ्रमण करते–करते कभी भाग्य–फल से, यदि किसी वृक्ष के नीचे आपकी मनोहर लीला की एक झलक भी मिल जायेगी तो हा! हा! क्या मनोहर मैंने देखा — ऐसा कहकर मूर्च्छित हो जाऊँगा और जब मेरी मूर्च्छा हटेगी, मुझे ज्ञान होगा, तब मैं आप दोनों की कृपा को स्मरण कर–करके एकान्त में रोता रहूँगा। (5–6)

▲ ▲ ▲ ▲

ओहे! प्रमेर ठाकुर गोरा!
प्राणेर यातना, किबा कब नाथ!
ह'येछि आपन हारा।
कि आर बलिब, ये काजेर तरे,
एनेछिले नाथ! जगते आमारे,
एत दिन परे, कहिते से कथा,
खेदे दुःखे हइ सारा।
तोमार भजने, ना जन्मिल रति,
जड़ मोहे मत्त, सदा दुरमति,
विषयीर काछे, थेके–थेके आमि,
हइनु विषयी पारा।
के आमि केन ये, एसेछि एखाने,
से कथा कखनो, नाहि भाबि मने,
कखनो भोगेर, कखनो त्यागेर,
छलनाय मन नाचे।
कि गति हइबे, कखनो भाबिना,
हरि भक्तेर, काछेओ याइना,
हरि विमुखेर, कु–लक्षण यत,
आमातेइ सब आछे।

श्रीगुरु कृपाय, भेंगेछे स्वपन,
बुझेछि एखन, तुमिइ आपन,
तव निज-जन, परम बान्धव,
संसार कारागारे।
आर ना भजिब भक्त पद बिनु,
(ऐ) रातुल चरणे, शरण लइनु,
उद्धार' हे नाथ! मायाजाल ह'ते,
ए दासेरे केशे धरे'।
पातकीरे तुमि, कृपा कर नाकि?
जगाइ माधाइ, छिल ये पातकी,
ताहाते जेनेछि, प्रेमेर ठाकुर!
पापीकेओ ता'र तुमि।
आमि भक्तिहीन, दीन अकिन्चन,
अपराधी शिरे दाओ दु'चरण,
तोमार अभय, श्रीचरणे चिर,
शरण लइनु आमि।

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

प्रेम के ठाकुर हे गौरहरि। इस दुनियाँ में मिलने वाली यातनाओं के बारे में मैं क्या बताऊं, मैंने तो अपने आपको ही खो दिया। और क्या बताऊँ नाथ! जिस कार्य के लिये आप मुझे जगत् में लाये थे, इतने दिन बाद उसके बारे में कहते हुये मुझे अत्यन्त खेद हो रहा है — आपके भजन में ज़रा सी भी रति उदित नहीं हुई। मैं दुर्गति हमेशा ही जड़ीय मोह में मत्त रहा। विषयी लोगों के पास रहते-रहते मैं घोर विषयी हो गया हूँ। मैं कौन हूँ तथा किसलिए मैं यहाँ आया हूँ ? — इस बारे में मैंने कभी भी मन में सोचा ही नहीं। मेरा मन तो बस कभी भोग, तो कभी त्याग की छलना में नाचता रहता है। मेरी क्या गति होगी — इस बारे में भी मैंने कभी सोचा नहीं, न कभी मैं हरि-भक्तों के पास ही जाता हूँ। हरि के विमुख व्यक्ति के जो-जो कु-लक्षण होते हैं, वे सब के सब मुझमें ही घर किये बैठे हैं। श्रीगुरु कृपा से अब मेरा स्वप्न भंग हुआ और अब समझ में आया कि सिर्फ आप ही मेरे अपने हो तथा आपके निज-जन ही इस संसार

कारागार में परम– बान्धव हैं। मैंने संकल्प लिया है कि अब मैं भक्तों के चरणों को छोड़ कर और किसी की भी सेवा नहीं करूँगा। इन रातुल चरणों में अब मैंने शरण ले ली है। इसलिए हे नाथ! अब आप मुझे केशों से पकड़ कर इस मायाजाल से मेरा उद्धार कीजिये। पापी व्यक्ति पर आप कृपा नहीं करते क्या? लेकिन जगाई–माधाई भी तो पापी ही थे। उन पर हुई कृपा से ही मालूम हुआ कि हे प्रेम के ठाकुर! आप पापियों का भी उद्धार करते हो। मैं भक्तिहीन, दीन, अकिंचन हूँ। आप कृपा करके इस अपराधी के सिर पर अपने दोनों श्रीचरण रख दो, आपके अभय श्रीचरणों में मैंने चिरकाल के लिये शरण ले ली है।

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीहरिवासरे हरिकीर्तन विधान।
नृत्य आरम्भिला प्रभु जगतेर प्राण॥
पुण्यवन्त श्रीवास-अंगने शुभारम्भ।
उठिल कीर्त्तन ध्वनि गोपाल गोविन्द॥
मृदंग मन्दिरा बाजे शंख करताल।
संकीर्त्तन संगे सब हइल मिशाल॥
ब्रह्माण्डे भेदिल ध्वनि पूरिया आकाश।
चौदिकेर अमंगल जाय सर्वनाश॥
चतुर्दिके श्रीहरि मंगल संकीर्त्तन।
मध्ये नाचे जगन्नाथ मिश्रेर नन्दन॥
सबार अंगेते शोभे श्रीचन्दन माला।
आनन्दे गायेन कृष्णरसे हइ' भोला॥
निजानन्दे नाचे महाप्रभु विश्वम्भर।
चरणेर ताल शुनि अति मनोहर॥
भावावेशे माला नाहि रहये गलाय।
छिण्डिया पड़ये गिया भक्तेर गाय॥
याँर नामानन्दे शिव वसन ना जाने।
याँर रसे, नाचे शिव से नाचे आपने॥

याँर नामे वाल्मीकि हइला तपोधन।
याँर नामे अजामिल पाइल मोचन॥
याँर नाम श्रवणे संसार–बन्ध घुचे।
हेन प्रभु अवतरि कलियुगे नाचे॥
याँर नाम गाई शुक नारद बेड़ाय।
सहस्त्र वदन – प्रभु यार गुण गाय॥
सर्वमहाप्रायश्चित ये प्रभुर नाम।
से प्रभु नाचये देखे यत भाग्यवान्॥
श्रीकृष्ण चैतन्य नित्यानन्द चाँद जान।
वृन्दावन दास प्रभु पदयुगे गान॥

हरिवासर तिथि को अर्थात् एकादशी तिथि को श्रीहरि–संकीर्तन का ही विधान है, इसलिये जगत् के प्रभु श्रीगौरहरि ने पुण्यवन्त श्रीवास के आंगन में नृत्य आरम्भ किया। जब श्रीवास आंगन में कीर्त्तन आरम्भ हुआ तो 'गोपाल–गोविन्द' ध्वनि दसों–दिशाओं में मुखरित हो उठी। संकीर्तन में मृदंग बज रहे हैं, मन्दिरा (छोटे छोटे करताल) बज रहे हैं तो शंख व करतालों की भी ध्वनियाँ हो रही हैं। जब कीर्त्तन आरम्भ हुआ तो उस संकीर्त्तन में सभी आकर सम्मिलित हो गये तथा संकीर्त्तन ध्वनि से सारा आकाश गूँज उठा। लगता था ध्वनि, ब्रह्माण्ड भेद कर जा रही हो। संकीर्त्तन से चारों दिशाओं में अमंगल समूल नष्ट हो रहा था। चारों ओर जो श्रीहरि का मंगलमय संकीर्त्तन हो रहा था उसमें अनेकों भक्तों के बीच श्रीजगन्नाथमिश्र नन्दन श्रीगौरहरि नृत्य कर रहे हैं।

सभी के अंगों पर चन्दन व मालायें सुशोभित हो रही हैं तथा सभी परमानन्द में निमग्न होकर गा रहे हैं। अपने ही आनन्द में महाप्रभु विश्वम्भर नाच रहे हैं, जिनके चरणों की ताल सुनने में अति मनोहर लग रही थी। भावावेश में उनके गले में माला नहीं टिक रही थी, वह टूट–टूट कर भक्तों के ऊपर गिर रही थी। जिनके नामानन्द में नृत्य करते हुए शिवजी महाराज को अपने वस्त्रों की होश नहीं रहती, वे स्वयं गौरहरि जी ही अपने नाम के आनन्द में नृत्य कर रहे हैं। जिनके नाम के प्रभाव से वाल्मीकि जी महातपस्वी बन गये, जिनके नाम से अजामिल का उद्धार हो गया, जिनका नाम श्रवण करने से

संसार–बन्धन खत्म हो जाता है — वही प्रभु इस कलियुग में अवतरित होकर नृत्य कर रहे हैं।

जिनका नाम गाते हुये शुकदेव जी व नारद जी भ्रमण करते रहते हैं, सहस्र मुख वाले शेष जी जिनका गुणगान गाते रहते हैं, जिनका नाम तमाम पापों का महा–प्रायश्चित है, वे प्रभु आज स्वयं ही नृत्य कर रहे हैं और तमाम भाग्यवान लोग उसका दर्शन कर रहे हैं। श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु तथा श्रीनित्यानन्द प्रभु ही जिनके जीवन प्राण हैं, वही वृन्दावन दास ठाकुर जी अपने दोनों प्रभुओं के युगल–चरणों के सान्निध्य में उनकी लीलायें गान करते हैं।

▲ ▲ ▲ ▲

दयाल निताई चैतन्य ब'ले नाचरे आमार मन।
(एक बार) नाचरे आमार मन, नाचरे आमार मन॥
(एमन दयाल तो नाइ हे, मार खेये प्रेम देय)।
(ओरे) अपराध दूरे यावे पावे प्रेमधन॥
(ओ नामे अपराध विचार तो नाइ हे)।
(तखन) कृष्णनामे रुचि ह'वे घुचिबे बन्धन॥
(कृष्ण नामे अनुराग तो ह'बे हे)।
(तखन) अनायासे सफल हबे जीवेर जीवन॥
(कृष्णरति — बिना जीवन तो मिछे हे)।
(शेषे) वृन्दावने राधा श्यामेर पावे दरशन॥
(गौर कृपा हले हे)

(श्री लोचन दास ठाकुर)

दयालु नित्यानन्द प्रभु व श्रीचैतन्य महाप्रभु जी का नाम उच्चारण करके हे मेरे मन! तू नृत्य कर। ऐ मेरे मन! तू नृत्य कर, तू नृत्य कर। सारी दुनियाँ में ऐसा दयालु और कोई नहीं है जो स्वयं मार खाकर भी प्रेम प्रदान करे। ऐसा करने से तेरे पिछले सारे अपराध खत्म हो जायेंगे और तुझे भी उस कृष्ण–प्रेम धन की प्राप्ति हो जायेगी। एक और विशेषता इन नामों की है — वह ये कि इनमें अपराध का भी विचार नहीं है। तब तुम्हारी कृष्ण नाम में रुचि होगी और

सारे बन्धन खत्म हो जायेंगे। कृष्ण नाम में अनुराग भी होगा और तब अनायास में ही जीवन सफल हो जायेगा। श्रीकृष्ण में यदि रति-मति न हो तो इसके बिना जीवन तो बेकार है जबकि दूसरी ओर यदि तुम गौर-नित्यानन्द नाम का कीर्त्तन करोगे तो गौर-कृपा होने से परिणाम में तुम्हें वृन्दावन में श्रीराधा-श्यामसुन्दर जी के दर्शन होंगे।

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीगौर-नित्यानन्देर दया

परम करुण, पँहु दुइजन, निताइ गौरचन्द्र।
सब अवतार-सार-शिरोमणि, केवल आनन्द-कन्द॥ 1॥
भज भज भाई, चैतन्य निताइ, सुदृढ़ विश्वास करि।
विषय छाड़िया, से रसे मजिया, मुखे बल हरि हरि॥ 2॥
देख ओरे भाइ, त्रिभुवने नाइ, एमन दयाल दाता।
पशु पाखी झुरे, पाषाण विदरे, शुनि' यार गुणगाथा॥ 3॥
संसारे मजिया, रहिलि पड़िया, से पदे नहिल आश।
आपन करम, भुञ्जाये शमन, कहये लोचनदास॥ 4॥

श्रीनित्यानन्द प्रभु व श्रीगौरचन्द्र जी दोनों ही परम करुणामय हैं। वे सभी अवतारों के मूल शिरोमणि व केवल आनन्दकन्द हैं। (1) हे भाई! तुम अवश्य ही सुदृढ़ विश्वास के साथ श्रीचैतन्य महाप्रभु व श्रीनित्यानन्द प्रभु का भजन करो। विषय भोगों को छोड़कर उस अप्राकृत रस में निमग्न होकर मुख से हरि-हरि उच्चारण करो। (2) देखो भाई! इस सारे त्रिभुवन में इस प्रकार का दयालु व इस प्रकार का दाता नहीं है। इनका गुणगान सुनकर तो पशु-पक्षी भी प्रेम विह्वल हो उठते हैं तथा पत्थर भी पिघल जाते हैं। (3) तुम तो संसार में प्रमत्त हुये पड़े हो। तुम्हें तो ज़रा सी भी उन पादपद्मों की अभिलाषा नहीं है। लोचन दास जी कहते हैं कि तुम्हारे सभी कर्मों को काल तुमसे भुगवायेगा।(4)

▲ ▲ ▲ ▲

एइबार करुणा कर चैतन्य निताई।
मो सम पातकी आर त्रिभुवने नाइ॥
मुञि अति मूढ़मति मायार नफर।
एइ सब पापे मोर तनु जर–जर॥
म्लेच्छ अधम यत छिल अनाचारी।
ता–सबा हइते बुझि मोर पाप भारी॥
अशेष पापेर पापी जगाइ–माधाइ।
अनायासे उद्धारिले तोमरा दु'भाई॥
लोचन बले मो अधमे दया नैल केने।
तुमि ना करिले दया के करिबे आने॥

हे श्रीचैतन्य महाप्रभु! हे नित्यानन्द प्रभु जी! इस बार मुझ पर करुणा कीजिये। मेरे समान पातकी इस त्रिभुवन में और कोई नहीं है। मैं बहुत ही मूढ़ मति वाला व माया का गुलाम हूँ। इन सब पापों के कारण ही मेरा ये शरीर एकदम जर्जरित सा हो गया है। म्लेच्छ व अधम जितने भी अनाचारी थे, मैं समझता हूँ कि उन सबसे मेरे पापों का भार ही ज्यादा है। अशेष पापों वाले पापी थे जगाई और माधाई। आप दोनों भाईयों ने अनायास में ही उनका भी उद्धार कर दिया। लोचन दास ठाकुर जी कहते हैं कि इतना होने के बावजूद भी मुझ अधम पर आपकी कृपा क्यों नहीं हो रही है — यदि आप दया नहीं करेंगे तो और कौन करेगा?

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीगौरसुन्दर की शिक्षा

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥
प्रभु कहे, कहिलाम एइ महामन्त्र।
इहा जप' गिया सब करिया निर्बन्ध॥

इहा हैते सर्वसिद्धि हइबे सबार।
सर्वक्षण बल' इथे विधि नाहि आर॥
नाम बिना कलिकाले नाहि आर धर्म।
सर्वमन्त्रसार 'नाम' एइ शास्त्र – मर्म॥
यदि आमा प्रति स्नेह थाके सबाकार।
तबे कृष्ण व्यतिरिक्त ना गाइबे आर॥
साध्य – साधनतत्त्व ये किछु सकल।
हरिनाम – संकीर्त्तने मिलिबे सकल॥
संकीर्तन हैते पाप – संसार नाशन।
चित्तशुद्धि, सर्वभक्ति – साधन – उद्‌गम॥
कृष्ण प्रेमोद्‌गम, प्रेमामृत आस्वादन।
कृष्ण प्राप्ति सेवामृत – समुद्रे– मज्जन॥
ये रूपे लइले नाम प्रेम उपजय।
तार लक्षण–श्लोक शुन स्वरूप, रामराय॥
अविश्रान्त नामे, नाम – अपराध जाय।
ताहे अपराध कभु स्थान नाहि पाय॥
बल कृष्ण, भज कृष्ण, गाओ कृष्ण–नाम।
कृष्ण बिनु केह किछु ना भाविह आन॥
कि भोजने कि शयने किवा जागरणे।
अहर्निश चिन्त कृष्ण बलह वदने॥
ग्राम्यकथा ना शुनिबे, ग्राम्यवार्ता ना कहिबे।
भाल ना खाइबे आर भाल ना परिबे॥
अमानी मानद हञा कृष्ण नाम सदा लबे।
व्रजे राधाकृष्ण सेवा मानसे करिबे॥

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

(वृहन्नारदीय पुराण)

एतावानेव लोकेऽस्मिन पुंसां धर्मः परः स्मृतः।
भक्तियोगो भगवति तन्नामग्रहणादिभिः ॥

(भा0 6/3/22)

▲ ▲ ▲ ▲

प्रातःकालीय कीर्त्तन

उदिल अरुण पूरवभागे, द्विजमणि गोरा अमनि जागे,
भक्त समूह लइया साथे, गेला नगर-व्राजे।
ताथइ-ताथइ बाजल खोल, घन-घन ताहे झाँजेर रोल,
प्रेमे ढलढल सोणार अंग, चरणे नूपुर बाजे॥ 1॥
मुकुन्द माधव यादव हरि, बलरे बलरे वदन भरि',
मिछे निदवशे गेलरे राति, दिवस शरीर साजे।
एमन दुर्लभ मानव देह, पाइया कि कर भावना केह,
एबे ना भजिले यशोदा-सुत, चरमे पड़िबे लाजे॥ 2॥
उदित तपन हइले अस्त, दिन गेल बलि' हइबे व्यस्त,
तबे केन एबे अलस हइ', ना भज हृदयराजे।
जीवन अनित्य जानह सार, ताहे नानाविध विपदभार,
नामाश्रय करि यतने तुमि, थाकह आपन काजे॥ 3॥
कृष्णनाम-सुधा करिया पान, जुड़ाओ भक्ति विनोद-प्राण,
नाम बिना किछु नाहिक आर, चौद्दभुवन माझे।
जीवेर कल्याण साधन काम, जगते आसि' ए मधुर नाम,
अविद्या तिमिर तपनरूपे हृद्गगने विराजे॥ 4॥

पूर्व दिशा में अरुणोदय हो गया और द्विजमणि श्रीगौरहरि ने अपनी जागरण की लीला कर ली तथा बहुत से भक्तों को साथ लेकर नगर-भ्रमण को चले गये। ताथई-ताथई शब्द करते हुये मृदंगों का शब्द होने लगा। घन-घन करके झाँझों (एक प्रकार का बड़ा करताल) का शब्द होने लगा तथा सोने के समान अंगों वाले श्रीगौरहरि के श्रीअंग प्रेम में झूम रहे हैं तथा चरणों में नूपुरों की झंकार हो रही है। (1) मुकुन्द, माधव,यादव व हरि आदि भगवद्-नामों

का खूब उच्चारण करो। व्यर्थ में तुम अपनी रात्रि सोने में व दिन शरीर को सजाने में गुज़ार देते हो, इस प्रकार के दुर्लभ मानव देह को पाकर तुम क्या कर रहे हो — क्यों नहीं सोचते हो? यदि अभी यशोदानन्दन श्रीकृष्ण का भजन नहीं किया तो अन्त में लज्जित होना होगा अर्थात् तुम्हें स्वयं पर शर्म आयेगी कि क्या करना था और मूर्ख की तरह क्या करते रहे। (2) जब दिन चला जायेगा, सूर्य अस्त हो जायेगा तब तुम कहोगे कि सारा दिन व्यस्तता–व्यस्तता में ही चला गया। तब, अब क्यों आलस्य करते हो, क्यों अपने हृदयराज — नन्दनन्दन श्रीकृष्ण का भजन नहीं करते? मैं निचोड़ बात तुमको बताता हूँ, समझ लो — सार बात यह है कि तुम्हारा ये जीवन अनित्य है तथा इसमें नाना प्रकार की आपत्तियाँ–विपत्तियाँ हैं, अतः यत्न के साथ तुम हरिनाम का आश्रय करो और अपना कार्य करते रहो। (3) भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि तुम कृष्णनाम सुधा का पान करके मेरे प्राणों को शीतलता प्रदान करो — हरिनाम के बिना इस सारे त्रिभुवन में और कुछ भी कल्याणकारक नहीं है। जीवों का कल्याण करने के उद्देश्य से ही ये मधुर हरिनाम इस जगत् में अवतीर्ण हुये हैं परन्तु मेरी अवस्था ये है कि मेरे हृदय रूपी आकाश में तो अविद्या रूपी घनघोर अन्धेरा छाया हुआ है और मुझे तापित कर रहा है। (4)

▲ ▲ ▲ ▲

जीव जाग, जीव जाग, गोराचाँद बले।
कत निद्रा याओ माया–पिशाचीर कोले॥ 1॥

भजिब बलिया एसे' संसार भितरे।
भुलिया रहिले तुमि अविद्यार भरे॥ 2॥

तोमारे लइते आमि हैनु अवतार।
आमि बिना बन्धु आर के आछे तोमार॥ 3॥

एनेछि औषधि माया नाशिवार लागि'।
हरिनाम - महामन्त्र लओ तुमि मागि'॥ 4॥

भक्तिविनोद प्रभु चरणे पड़िया।
सेइ हरिनाम - मन्त्र लइल मागिया॥ 5॥

महाप्रभु श्रीचैतन्यदेव जी माया से ग्रसित जीवों को सम्बोधन करते हुए कहते हैं — हे जीव! जागो! हे जीव! जागो! मायारूपी पिशाची की गोद में और कितनी नींद सोओगे? जन्म के समय तुम प्रतिज्ञा करके आये थे कि संसार में जाकर मैं आपका भजन करूँगा परन्तु अविद्या के प्रभाव से तुम सब भूल गये हो। तुम्हें अपने धाम में ले जाने के लिये ही मैंने अवतार लिया है। मुझे छोड़कर इस संसार में तुम्हारा और कौन बन्धु है? माया को नाश करने के लिये अर्थात् माया के चंगुल से छुड़ाने के लिये मैं हरिनाम–महामन्त्र रूपी औषधि लेकर आया हूँ, तुम उसे माँग लो। उसी हरिनाम–महामन्त्र औषधि को श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी ने श्रीमन् महाप्रभु जी के चरणों में पड़कर माँग लिया।

▲ ▲ ▲ ▲

उच्छ्वास कीर्त्तन

कलिकुक्कुर कदन यदि चाओ (हे)।
कलियुगपावन कलिभयनाशन,
श्रीशचीनन्दन गाओ (हे)॥ 1॥
गदाधरमादन, निता'येर प्राणधन,
अद्वैतेर प्रपूजित गोरा।
निमाइ विश्वम्भर, श्रीनिवास-ईश्वर,
भक्तसमूह–चितचोरा॥ 2॥
नदीया शशधर, मायापुर–ईश्वर,
नाम–प्रवर्त्तन सुर।
गृहिजन शिक्षक, न्यासिकुल–नायक,
माधव राधाभावपूर॥ 3॥
सार्वभौम–शोधन, गजपति–तारण,
रामानन्द–पोषण वीर।
रूपानन्द–वर्धन, सनातन–पालन,
हरिदास–मोदन धीर॥ 4॥

व्रजरस–भावन, दुष्टमत–शातन,
कपटी–विघातन काम।
शुद्धभक्त–पालन, शुष्कज्ञान–ताड़न,
छलभक्ति–दूषण राम॥ 5॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

अरे भाइयो ! यदि आप लोग इस कलिरूप कुक्कुर (कुत्ते) से बचना चाहते हो तो कलियुग पावनावतारी एवं कलि के भय को नाश करने वाले उन श्रीशचीनन्दन का नाम लो, जो श्रीगदाधर पण्डित और श्रीनित्यानन्दप्रभु जी के प्राणधनस्वरूप एवं श्रीअद्वैताचार्य के द्वारा पूजित होने वाले गौरहरि हैं, जिनके निमाई, विश्वम्भर इत्यादि अनेक नाम हैं, जो श्रीनिवास आचार्य के ईश्वर तथा समस्त भक्तों के चित्त को हरण करने वाले हैं, जो नदिया के चन्द्रस्वरूप एवं श्रीमायापुर के ईश्वर हैं तथा जो नाम प्रदान करने के लिए अवतरित हुए हैं। वे गृहस्थ–आश्रमियों को शिक्षा प्रदान करनेवाले, संन्यासियों के भी शिरोमणि तथा राधाभाव एवं कांति से युक्त माधव हैं। उन्होंने सार्वभौम को मायावाद के चंगुल से निकालकर उसके हृदय को शुद्ध किया तथा राजा प्रतापरुद्र का उद्धार किया एवं श्रीरामानन्दराय को अपनी भक्ति प्रदान कर उनका पालन किया।

▲ ▲ ▲ ▲

विभावरी–शेष, आलोक–प्रवेश,
निद्रा छाड़ि' उठ जीव।
बल' हरि हरि, मुकुन्द मुरारि,
राम–कृष्ण हयग्रीव॥ 1॥
नृसिंह वामन, श्रीमधुसूदन,
व्रजेन्द्रनन्दन श्याम।
पूतना–घातन, कैटभ–शातन,
जय दाशरथि राम॥ 2॥
यशोदादुलाल, गोविन्द गोपाल,
वृन्दावन–पुरन्दर।

गोपीप्रियजन, राधिकारमण,
भुवन–सुन्दरवर॥3॥
रावणान्तकर, माखन–तस्कर,
गोपीजन–वस्त्रहारी।
व्रजेर राखाल, गोपवृन्दपाल,
चित्तहारी–वंशीधारी॥ 4॥
योगीन्द्रवन्दन, श्रीनन्दनन्दन,
व्रजजन–भयहारी।
नवीन नीरद, रूप मनोहर,
मोहनवंशीविहारी॥ 5॥
यशोदानन्दन कंसनिसूदन,
निकुन्ज–रासविलासी।
कदम्ब–कानन, रासपरायण,
वृन्दाविपिन–निवासी॥ 6॥
आनन्दवर्धन, प्रेमनिकेतन,
फुलशरयोजक काम।
गोपांगनागण, चित्तविनोदन,
समस्त–गुणगणधाम॥ 7॥
यामुन–जीवन, केलि–परायण,
मानस–चन्द्रचकोर।
नामसुधारस, गाओ कृष्ण–यश,
राख वचन मन मोर॥ 8॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

रात्रि शेष हो गयी है अर्थात रात बीत गई है व प्रकाश का प्रवेश हो रहा है। अत: हे जीव! तुम अब निद्रा छोड़कर उठो तथा हरि–हरि–मुकुन्द–मुरारी, राम, कृष्ण, हयग्रीव नृसिंह, वामन, मधुसूदन, पूतनाको मारनेवाले तथा कैटभ नामक असुर का नाश करनेवाले ब्रजेन्द्रनन्दन श्यामसुन्दर का नाम लो। रावण का वध करने के लिए जो दशरथनन्दन राम के रूप में अवतरित हुए, जो यशोदा के लाड़ले हैं, उन गोपाल का नाम लो। जो वृन्दावन में सर्वश्रेष्ठ हैं,

गोपियों के प्रियतम हैं तथा राधिकारमण हैं, त्रिभुवन में जिनके समान सुन्दर अन्य कोई नहीं है। जो घर–घर से माखन चुराने वाले हैं, गोपियों के वस्त्र हरण करने वाले हैं, ब्रज एवं ब्रजवासियों के रखवाले, वंशी के द्वारा सबके चित्त को हरण करने वाले, जो योगियों के वन्दनीय हैं, तथा समस्त ब्रजवासियों के भय को हरण करने वाले हैं, तुम उन नन्दनन्दन का नाम लो। जिनका रूप नवीन मेघों के समान अत्यन्त ही मनोहर है, जो वंशीविहारी हैं, जो मैया यशोदा के नन्दन परन्तु कंस के संहारक हैं, जो निकुंजों एवं कदम्ब–कानन में रास रचाने वाले हैं, गोपियों के आनन्द को विशेष रूप से वर्द्धन करने वाले हैं एवं प्रेम के भंडार हैं तथा जो पुष्पबाण के द्वारा गोपियों के काम को बढ़ाने वाले हैं, जो गोपियों के चित्त को आनन्दित करने वाले एवं समस्त गुणों के आश्रय हैं, जो यमुनाजीके जीवनस्वरूप हैं, यमुना के तट पर नाना प्रकार की क्रीड़ाएँ करते हैं तथा जो राधा जी के मनरूपी चन्द्र के चकोर हैं — श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि मेरी बात मान लो, ये श्रीहरिनाम अमृत व आनन्दमय हैं, तुम हमेशा कृष्ण–यश का गान करते रहो।

▲ ▲ ▲ ▲

भावना भावना मन तुमि अति दुष्ट।
(विषय-विषे आछ हे)
काम-क्रोध-लोभ-मोह-मदादि-आविष्ट॥
(रिपुर वशे आछ हे)
असद्वार्ता-भुक्ति-मुक्ति-पिपासा आकृष्ट।
(असत् कथा भाल लागे हे)
प्रतिष्ठाशा-कुटीनाटी शठतादि-पिष्ट॥
(सरल त' ह'ले ना हे)
घिरेछे तोमारे भाइ, ए-सब अरिष्ट॥
(ए सब त' शत्रु हे)
ए सब ना छेड़े किसे पा' वे राधाकृष्ण।
(यतने छाड़, छाड़ हे)
साधुसंग बिना आर कोथा तव इष्ट?

(साधुसंग कर हे)
वैष्णव–चरणे मज, घुचिवे अनिष्ट॥
(एक बार भेवे देख हे)

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

भावना से ऐ मन! तू बहुत ही दुष्ट है। तू विषय रूपी विष में अटका हुआ है। तू काम–क्रोध–लोभ–मोह व अभिमान आदि से आविष्ट होने के कारण इन शत्रुओं के वश में है। असद्–वार्ता, भोग व मोक्ष की प्यास से आकृष्ट है। असत्–चर्चा तुझे अच्छी लगती है। प्रतिष्ठा की आशा, कुटिनाटी व शठता आदि तुझमें घुसी हुई हैं। ऐ मन! तू सरल तो हो नहीं पाया। मेरे भाई! तुझे इन सब अनिष्टकारियों ने घेर रखा है। ये सब तेरे शत्रु हैं। यदि काम–क्रोध, असद्–वार्ता व प्रतिष्ठादि का तू परित्याग नहीं करेगा तो श्रीराधा–कृष्ण की प्राप्ति कैसे करेगा? अतः यत्न के साथ इन्हें छोड़ दे, इन्हें छोड़ दे। साधु–संग के बिना और कहाँ पर तेरा इष्ट है अर्थात् साधु–संग के बगैर न तो हरिनाम व न ही हरिकथा का आस्वादन होता है, न धाम का दर्शन होता है, न ही भक्त, गुरु व भगवद्–तत्व का ही ज्ञान होता है और न ही भगवद्–दर्शन होता है। इसलिए हे मन! तू साधु–संग कर। ऐ मन! तू वैष्णवों के श्रीचरणों में समर्पित हो जा, तब तेरे सारे अनिष्ट खत्म हो जायेंगे। ऐ मन! जो बातें मैंने तुझे कही हैं, उन्हें कम–से–कम एक बार विचार करके तो देख।

▲ ▲ ▲ ▲

भज रे भज रे आमार मन अति मन्द।
(भजन बिना गति नाइ रे)
(भज) व्रजवने राधाकृष्ण–चरणारविन्द॥ 1॥
(ज्ञान–कर्म परिहरि रे)
(भज) गौर–गदाधराद्वैत गुरु—नित्यानन्द।
(गौर–कृष्णे अभेद जेने रे)

(गुरु कृष्ण प्रिय जेने रे)

(स्मर) श्रीनिवास-हरिदास-मुरारि-मुकुन्द॥ 2॥

(गौर प्रेमे स्मर,स्मर रे)

(स्मर) रूप-सनातन-जीव-रघुनाथ द्वन्द्व।

(यदि भजन करबे रे)

(स्मर) राघव-गोपालभट्ट-स्वरूप-रामानन्द॥ 3॥

(कृष्णप्रेम यदि चाओ रे)

(स्मर) गोष्ठिसह कर्णपूर, सेन शिवानन्द।

(अजस्त्र स्मर, स्मर रे)

(स्मर) रूपानुग-साधुजन-भजन-आनन्द॥ 4॥

(व्रजे वास यदि चाओ रे)

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

ऐ मेरे मन! तू भजन कर, भजन कर। भजन के बिना सुगति नहीं है। ज्ञान व कर्म की चेष्टा को परित्याग करके भजन कर। व्रजवन में श्रीराधा–कृष्ण जी के पादपद्मों का, श्रीगौरांग महाप्रभु, श्रीगदाधर प्रभु, श्रीअद्वैत आचार्य, श्रील गुरुदेव व नित्यानन्द प्रभु जी का भजन कर।(1) किस प्रकार से? श्रीगौरांग महाप्रभु जी को श्रीकृष्ण से अलग मत समझना। श्रीगौरांग महाप्रभु जी व श्रीकृष्ण एक ही हैं — इसे जानकर तथा गुरुदेव श्रीकृष्ण के प्रियजन हैं — ये जानकर श्रीगौरांग महाप्रभु व गदाधर प्रभु आदि का नाम–भजन कर। श्रीगौरहरि के प्रेम में प्रमत्त होकर श्रीनिवास आचार्य, श्रीहरिदास ठाकुर, श्रीमुरारी व श्रीमुकुन्द जी को स्मरण कर, स्मरण कर। (2) देख मन! यदि भजन करना है तो श्रीरूप गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीजीव गोस्वामी, श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी व श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी का स्मरण कर, यदि श्रीकृष्ण–प्रेम प्राप्ति की इच्छा है तो श्रीराघव पण्डित, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी, श्रीस्वरूप दामोदर गोस्वामी व श्रीराय रमानन्द जी को स्मरण कर। (3) ऐ मन! तू गोष्ठी सहित श्रीकर्णपूर जी को व शिवानन्द सेन जी को लगातार स्मरण कर, इन्हें निरन्तर स्मरण कर और यदि तेरी ब्रजवास करने की इच्छा है तो रूपानुग साधुओं के भजनानन्द को स्मरण कर। (4)

जय राधे, जय कृष्ण, जय वृन्दावन।
श्रीगोविन्द, गोपीनाथ, मदनमोहन॥ 1॥

श्यामकुण्ड, राधाकुण्ड , गिरि–गोवर्धन।
कालिन्दी यमुना, जय जय महावन॥ 2॥

केशीघाट, वंशीवट द्वादश - कानन।
याँहा सब लीला कैल श्रीनन्दनन्दन॥ 3॥

श्रीनन्द - यशोदा जय, जय गोपगण।
श्रीदामादि जय, जय धेनुवत्सगण॥ 4॥

जय वृषभानु, जय कीर्तिदासुन्दरी।
जय पौर्णमासी, जय आभीर नागरी॥ 5॥
जय जय गोपीश्वर - वृन्दावन माझ।
जय जय कृष्णसखा वटु द्विजराज॥ 6॥

जय रामघाट, जय रोहिणीनन्दन।
जय जय वृन्दावनवासी यत जन॥ 7॥

जय द्विजपत्नी, जय नागकन्यागण।
भक्तिते याँहारा पाइल गोविन्दचरण॥ 8॥

श्रीरासमण्डल जय, जय राधाश्याम।
जय जय रासलीला सर्व मनोरम॥ 9॥

जय जयोज्ज्वल - रस सर्वरस - सार।
परकीयाभावे याहा व्रजेते प्रचार॥ 10॥

श्रीजाह्नवा - पादपद्म करिया स्मरण।
दीन कृष्णदास कहे नाम संकीर्तन॥ 11॥

श्रीमती राधिकाजी, श्रीकृष्ण, श्रीवृन्दावन धाम, श्रीगोविन्दजी, श्रीगोपीनाथ, श्रीमदनमोहन जी की जय हो। श्यामकुण्ड, राधाकुण्ड, गिरिराजजी,

यमुनाजी, महावन, केशीघाट, वंशीवट, द्वादशकानन आदि स्थलियाँ जहाँ जहाँ श्रीनन्द–नन्दन नाना प्रकार की लीलाएँ करते हैं, उन सब लीला स्थलियों की जय हो। उनके अतिरिक्त कृष्ण के परिकर श्रीनन्दबाबा, श्रीयशोदा मैया, समस्त गोप, श्रीदाम आदि सखाओं एवं गोवत्सों की जय हो।

श्रीवृषभानु महाराज, श्रीकीर्तिदासुन्दरी, श्रीपौर्णमासीजी की जय हो। वृन्दावन में श्रीगोपीश्वर महादेव तथा कृष्ण के सखा ब्राह्मण श्रेष्ठ मधुमंगलजी की जय हो। श्रीराम घाट, श्रीरोहिणीनन्दन तथा अन्यान्य वृन्दावनवासियों की जय हो। ब्राह्मण पत्नियों एवं नागकन्याओं की जय हो जिन्होंने भक्ति के द्वारा गोविन्द के श्रीचरणों को प्राप्त कर लिया है। श्रीरासमण्डल, श्रीराधाश्याम एवं अत्यन्त ही मनोरम रासलीला की जय हो। समस्त रसों के सारस्वरूप उज्ज्वल रस–मधुररस की जय हो जिसका पारकीय भावके रूप में ब्रज में प्रचार है। श्रीजाह्नवाजी के श्रीचरणकमलों का स्मरण कर यह दीन–हीन कृष्णदास नामसंकीर्तन कर रहा है।

▲ ▲ ▲ ▲

हरि बल, हरि बल, हरिबल भाइ रे।
हरिनाम आनियाछे गौरांग – निताई रे॥
(मोदेर दुःख देखेरे)
हरिनाम बिना जीवेर अन्य धन नाइ रे।
हरिनामे शुद्ध ह'लो जगाइ–माधाइ रे॥
(बड़ पापी छिल रे)
मिछे मायाबद्ध ह'ये जीवन काटाइ रे।
(आमि आमार ब'ले रे)
आशावशे घुरे–घुरे आर कोथा याइ रे॥
(आशार शेष नाइ रे)
हरि ब'ले देओ भाइ आशार मुखे छाइ रे।
(निराश त' सुख रे)

भोग–मोक्ष–वान्छा छाड़ि' हरिनाम गाइ रे॥
(शुद्ध सत्त्व ह' ये रे)
ना चेयेओ नामेर गुणे ओ सब फल पाइ रे।
(तुच्छ फलेर प्रयास छेड़े रे)
विनोद बले याइ ल' ये नामेर बालाइ रे॥
(नामेर बालाइ छेड़े रे)

हरि बोलो, हरि बोलो, हरि बोलो, भाई रे! हमारे दु:खों को देखकर ही इस हरिनाम को श्रीगौरांग महाप्रभु जी व श्रीनित्यानन्द प्रभु लेकर आये हैं। हरिनाम के बिना जीवों का अन्य और कोई धन नहीं है। हरिनाम के द्वारा ही जगाई व माधाई शुद्ध हो गये। वे दोनों बहुत बड़े पापी थे। क्यों व्यर्थ माया में आबद्ध होकर अपने जीवन को बिता रहे हो। माया में फंसकर ही मैं–मेरा, मैं–मेरा, कहते रहते हो। आशाओं के गुलाम बनकर इस प्रकार भ्रमण करते–करते और कहाँ तक जाओगे। याद रखना इन आशाओं की कहीं भी समाप्ति नहीं है। हरि–हरि कहकर इन आशाओं के मुँह पर राख दे मारो। भाई, निराशा ही तो सुख है। भोग व मोक्ष की कामना छोड़कर, शुद्ध–सात्त्विकता को ग्रहण करते हुए हरिनाम गाओ। दुनियावी तुच्छ नाशवान फलों के लिए ज्यादा दौड़–भाग मत करो, हरिनाम करो। हरिनाम के प्रभाव से ये सांसारिक फल तो बिना मांगे ही मिल जाते हैं। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि क्यों तुम इन नाम–अपराधों को ढो रहे हो अर्थात् क्यों तुम नामापराध कर रहे हो — इन नामापराधों को छोड़ दो।

▲ ▲ ▲ ▲

मंगल–आरती

(श्रीगौर–गोविन्द–आरती)

भाले गोरा - गदाधरेर आरती नेहारि।
नदिया - पूरब भाबे याँउ बलिहारी॥ 1॥

कल्पतरुतले रत्नसिंहासनोपरि।
सबु सखी वेष्टित किशोर - किशोरी॥ 2॥

पुरट - जड़ित कत मणि - गजमति।
झमकि' झमकि' लभे प्रति अंग ज्योति॥ 3॥

नील नीरद लागि, विद्युत माला।
दुहुँ अंग मिलि' शोभा भुवन-उजाला॥ 4॥

शंख बाजे, घण्टा बाजे बाजे करताल।
मधुर मृदंग बाजे परम रसाल॥ 5॥

विशाखादि सखीवृन्द दुहुँ गुण गाओये।
प्रियनर्मसखीगण चामर ढुलाओये॥ 6॥

अनंगमंजरी, चुया चन्दन देओये।
मालतीर माला रूप-मंजरी लागाओये॥ 7॥

पंच प्रदीपे धरि' कर्पूर बाति।
ललितासुन्दरी करे युगल - आरती॥ 8॥

देवी-लक्ष्मी-श्रुतिगण धरणी लोटाओये।
गोपीजन अधिकार रओयत गाओये॥ 9॥

भक्तिविनोद रहि' सुरभिकि कुंजे।
आरती - दर्शने प्रेम - सुख भुंजे॥ 10॥

नदिया के पूर्व भाव में अर्थात् व्रज–भाव में उत्तम प्रकार से हो रही श्रीगौर–गदाधर जी की आरती को देखकर मैं बलिहारी जाता हूँ। कल्पवृक्ष के

नीचे, रत्नों के सिंहासन के ऊपर सब सखियों से घिरे नित्य–किशोर श्रीकृष्ण एवं नित्य–किशोरी श्रीमति राधा जी विराजमान हैं। वहाँ जड़ित सोना व गजमुक्ता आदि अनेकों मणियाँ झलमल–झलमल कर रही हैं तथा दोनों के अंगों से ज्योति बिखर रही है। घने बादलों की तरह घनश्याम श्रीकृष्ण एवं विद्युत–सी श्रीमति राधा जी की शोभा सारी पृथ्वी को आलोकमय कर रही है। शंख बज रहे हैं, घण्टे बज रहे हैं, करताल बज रहे हैं तथा परम–रसमय–ताल पर मधुर मृदंग बज रहे हैं। विशाखा आदि सखियाँ श्रीराधा–कृष्ण जी के गुणगान गा रही हैं तथा प्रियनर्म सखियाँ चामर ढुला रही हैं। अनंग मंजरी नामक गोपी विशेष सुगन्धित द्रव्य तथा चन्दन लगा रही हैं तथा रूप मंजरी नामक गोपी मालती के फूलों की माला अर्पण कर रही हैं। पंच–प्रदीप द्वारा कर्पूरयुक्त बत्तियों को जलाकर ललिता सुन्दरी जी दोनों की आरती कर रही हैं। सभी देवियाँ, लक्ष्मी जी व श्रुतियाँ धरती पर लोट–पोट कर गोपियों के इस अधिकार की महिमा को रो–रो कर गा रही हैं। भक्तिविनोद ठाकुर जी सुरभि–कुंज में रहकर इस आरती को दर्शन करके प्रेम–सुख का आस्वादन कर रहे हैं।

▲ ▲ ▲ ▲

सन्ध्या - आरती

(श्रीगौर–आरती)

जय जय गोराचाँदेर आरती को शोभा।
जाह्नवी - तटवने जग - मन लोभा॥ 1॥

दक्षिणे निताइचाँद, वामे गदाधर।
निकटे अद्वैत, श्रीनिवास छत्रधर॥ 2॥

बसियाछे गोराचांद रत्नसिंहासने।
आरती करेन ब्रह्मा - आदि देवगणे॥ 3॥

नरहरि - आदि करि' चामर ढुलाय।
संजय - मुकुन्द वासुघोष-आदि गाय॥ 4॥

शंख बाजे, घण्टा बाजे, बाजे करताल।
मधुर मृदंग बाजे परम रसाल॥ 5॥

बहु कोटि चन्द्र जिनि' वदन उज्ज्वल।
गलदेशे वनमाला करे झलमल॥ 6॥

शिव - शुक - नारद प्रेमे गदगद।
भक्तिविनोद देखे गोरार संपद ॥ 7॥

सारे संसार के मन को लुभाने वाली गंगा जी के तट पर हो रही श्रीगौरचन्द्र जी की आरती की शोभा की जय हो, जय हो। दाहिनी ओर नित्यानन्द प्रभु, बायीं ओर श्रीगदाधर जी हैं तथा उनके पास श्रीअद्वैत–आचार्य जी हैं एवं श्रीनिवास जी छत्र पकड़े खड़े हैं। रत्न–सिंहासन पर गौरचन्द्र जी विराजमान हैं तथा ब्रह्मा इत्यादि देवगण उनकी आरती करते हैं। श्रीमान् नरहरि आदि चामर ढुलाते हैं। श्रीसंजय, मुकुन्द तथा वासुदेव घोष आदि भक्त लोग गाते हैं। शंख बजते हैं, घण्टे बजते हैं, करताल बजते हैं तथा परम–रसमय –ताल में मधुर मृदंग बजते हैं। करोड़ों चन्द्रमाओं की तरह जिनका उज्ज्वल मुखारविन्द है, उनके गले में वनमाला झलमल–झलमल करती रहती है। इन सब दृश्यों को देखकर शिव जी महाराज, शुकदेव जी व भक्त–प्रवर नारद जी प्रेम में गद्गद हो उठते हैं तथा भक्तिविनोद ठाकुर जी इस गौर–सम्पदा का दर्शन करते रहते हैं।

सन्ध्या-आरती

(श्री श्रीयुगल-आरती)

जय जय राधाकृष्ण युगल-मिलन।
आरती करये ललितादि सखीगण॥ 1॥

मदनमोहन रूप त्रिभंग सुन्दर।
पीताम्बर शिखिपुच्छ-चूड़ा मनोहर॥ 2॥

ललितमाधव - वामे वृषभानु-कन्या।
नीलवसना गौरी रूपे गुणे धन्या॥ 3॥

नानाविध अलंकार करे झलमल।
हरिमनोविमोहन वदन उज्ज्वल ॥ 4॥

विशाखादि सखीगण नाना रागे गाय।
प्रियनर्म-सखी यत चामर ढुलाय॥ 5॥

श्रीराधामाधव-पद - सरसिज-आशे।
भक्तिविनोद सखीपदे सुखे भासे ॥ 6॥

श्रीराधा–कृष्ण जी के युगल मिलन की जय हो–जय हो। ललिता आदि सखियाँ उनकी आरती करती हैं। उनका मदन–मोहन त्रिभंग रूप बड़ा ही सुन्दर है। उन्होंने पीताम्बर धारण किया हुआ है। सिर पर मोर का पंख व मनोहर चूड़ा धारण किया हुआ है। वे जो ललित माधव हैं, उनके बायीं ओर गौर वर्ण वाली, नीले वस्त्र पहने, रूप व गुणों की धनी, वृषभानु महाराज की कन्या, श्रीमति राधिका जी विराजमान हैं। नाना प्रकार से सुशोभित अलंकार झलमल–झलमल कर रहे हैं तथा उनका उज्ज्वल श्रीमुख हरि के मन को भी विमोहित कर लेता है। विशाखा आदि सखियाँ नाना रागों से गा रही हैं तथा प्रियनर्म सखियाँ चामर ढुलाती हैं। श्रीराधा माधव जी के चरण–कमलों की आशा में भक्तिविनोद ठाकुर जी सखियों के चरण प्रान्त में रहकर सुख सागर में निमग्न हैं।

श्रीभोग–आरती

भज भकतवत्सल श्रीगौरहरि ।

श्रीगौरहरि सोहि गोष्ठबिहारी ,
नन्द यशोमती – चित्तहारी॥ 1॥

बेला ह'लो, दामोदर, आइस एखन।
भोगमन्दिरे बसि', करह भोजन ॥ 2॥

नन्देर निदेशे बैसे गिरिवरधारी।
बलदेव – सह सखा बैसे सारि सारि ॥ 3॥

शुकता-शाकादि भाजि नालिता कुष्माण्ड।
डालि डालना दुग्धतुंबी दधि मोचाखण्ड॥ 4॥

मुद्‌गबड़ा माषबड़ा रोटिका घृतान्न।
शष्कुली पिष्टक क्षीर पुलि पायसान्न॥ 5॥

कर्पूर अमृतकेलि रंभा क्षीरसार।
अमृत रसाला, अम्ल द्वादश प्रकार ॥ 6॥
लुचि चिनि सरपुरी लाड्डु रसावली।
भोजन करेन कृष्ण ह'ये कुतूहली॥ 7॥

राधिकार पक्व अन्न विविध व्यंजन।
परम आनन्दे कृष्ण करेन भोजन॥ 8॥

छलेबले लाड्डु खाय श्रीमधुमंगल।
बगल बजाय, आर देय हरिबोल॥ 9॥

राधिकादि गणे हेरि' नयनेर कोणे।
तृप्त ह'ये खाय कृष्ण यशोदा – भवने॥ 10॥

भोजनान्ते पिये कृष्ण सुवासित – वारि।
सबे मुख प्रक्षालय ह'ये सारि सारि॥ 11॥

हस्त मुख प्रक्षालिया यत सखागणे।
आनन्दे विश्राम करे बलदेव सने॥ 12॥

जांबुल रसाल आने तांबूल - मसाला।
ताहा खेये कृष्णचन्द्र सुखे निद्रा गेला॥ 13॥

विशालाक्ष शिखि - पुच्छ चामर ढुलाय।
अपूर्व शय्याय कृष्ण सुखे निद्रा याय॥ 14॥

यशोमति - आज्ञा पेये धनिष्ठा - आनीत।
श्रीकृष्णप्रसाद राधा भुंजे ह'ये प्रीत॥ 15॥

ललितादि सखीगण अवशेष पाय।
मने मने सुखे राधा - कृष्ण - गुण गाय॥ 16॥

हरि - लीला एकमात्र याहार प्रमोद।
भोगारति गाय सेइ भक्तिविनोद॥ 17॥

भक्त–वत्सल श्रीगौरहरि का भजन करो। जो श्रीगौरहरि हैं, वे ही श्रीनन्द महाराज व यशोदा मैया के चित्त को हरण करने वाले गोष्ठ–विहारी श्रीकृष्ण हैं। हे दामोदर श्रीकृष्ण! भोजन का समय हो गया है, आओ और भोग मन्दिर में बैठकर भोजन करो। (ऐसा नन्द महाराज जी श्रीकृष्ण को पुकारते हुए कहते हैं)। श्रीनन्द महाराज जी के निर्देशानुसार गिरिवरधारी श्रीकृष्ण जी तथा बलराम जी अपने सखाओं के साथ पंक्ति बना कर बैठ गये। शुकता, साग, भाजि, नालिता, पेठे की सब्जी, दाल, डालना, दुग्ध–तुम्बी, दही, मोचाखण्ड, मूँग की दाल की बड़ियाँ, उड़द की दाल की बड़ियाँ, घी लगी रोटियाँ, घी–युक्त चावल, शष्कुली, पिष्टक, क्षीर, पुलि, पायसन्न, अमृत केलि, रम्भा, क्षीरसार, रसदार सब्जी तथा 12 तरह की चटनियाँ, मैदे की पूरीयाँ, चीनी, सरपूरी, लड्डू तथा रसगुल्ले इत्यादि का कोतूहल के साथ श्रीकृष्ण भोजन करते हैं। राधिका जी के द्वारा पकाये गये चावल इत्यादि विविध प्रकार के व्यंजनों का परमानन्द के साथ श्रीकृष्ण आस्वादन करते हैं। श्रीकृष्ण जी के सखा मधुमंगल जी छल–बल से लड्डू खाते हैं तथा बगल बजा–बजाकर हरिबोल–

हरिबोल करते हैं। राधिका जी की सखियाँ तिरछी निगाहों से सब कुछ देख रही हैं तथा श्रीकृष्ण यशोदा भवन में बैठकर तृप्ति के साथ भोजन करते हैं। भोजन करने के बाद श्रीकृष्ण सुवासित जल पान करते हैं तथा इसके बाद जितने भी सखा थे, क्रम से, धीरे–धीरे सभी ने हाथ–मुँह धो लिया। हाथ–मुँह धोकर सभी सखा, बलराम जी के साथ विश्राम लगे। विशालाक्ष सखी मोर पंखा तथा चामर डुलाती हैं। श्रीकृष्ण सुगन्धित जाम्बुल तथा मसाले युक्त ताम्बूल को खाकर अपूर्व शैय्या पर सुखपूर्वक सो जाते हैं। यशोदा जी की आज्ञा पाकर धनिष्ठा द्वारा लाया गया श्रीकृष्ण प्रसाद राधा जी अति–प्रीति के साथ पाती हैं। ललिता आदि सखियाँ, जो अवशेष बचता है, उसे पाती हैं तथा मन–ही–मन राधा–कृष्ण के गुणों का गान करती हैं। हरि–लीला ही जिनका एकमात्र आनन्द है, वे भक्तिविनोद ठाकुर जी, भोग आरती का गान करते हैं।

शुकता	एक प्रकार की सब्जी, जिसका स्वाद कड़वा होता है।
भाजि	तले हुये आलू–बैंगन इत्यादि।
नालिता	पाट वृक्षों के पत्तों का साग
डालना	पनीर या पपीता अथवा पेठे इत्यादि से निर्मित एक विशेष प्रकार की सब्जी
दुग्ध तुम्बी	लौकी के दूध से बनी मिठाई
मोचा खण्ड	केले के फूल से बनी सूखी सब्जी
शष्कुली	मैदे व दूध की बनी सिंवईं
पिष्टक	चावल पाऊडर से बनी मिठाई
क्षीर	खूब काढ़ा हुआ दूध
पुलि	काढ़े हुए दूध तथा मैदे से बनी मिठाई
क्षीरसार	दूध की मलाई
अमृत केलि	विशेष प्रकार की खीर
रम्भा	केला
पायसन्न	दूध की खुरचन
लुचि	मैदे की बनी पूरियाँ
सरपूरी	दूध की मलाई से बनी मिठाई

श्रीतुलसी–आरती

नमो नमः तुलसी महारानी वृन्दे महारानी! नमो नमः।
नमो री – नमो री मैया नमो नारायणी! नमो नमः।
जाको दरशे – परशे अघनाशी।
महिमा वेद–पुराण बखानि! नमो नमः॥
जाको पत्र – मंजरी कोमल।
श्रीपति चरण–कमल लपटानी! नमो नमः॥
धन्य तुलसी पूर्ण तप किये।
श्रीशालग्राम महापटरानी ! नमो नमः॥
धूप, दीप, नैवेद्य आरती।
फूलन किये बरखा बरखानी! नमो नमः॥
छप्पन भोग छत्तीस व्यंजन।
बिना तुलसी प्रभु एक नाही मानी! नमो नमः॥
शिव, शुक, नारद और ब्रह्मादिक।
ढूँढत फिरत महामुनि ज्ञानी! नमो नमः॥
चन्द्रशेखर मैया तेरो यश गावे।
भक्ति–दान दीजिये महारानी! नमो नमः॥
तुलसी महारानी वृन्दे महारानी! नमो नमः॥

हे तुलसी महारानी! आपको नमस्कार है। हे वृन्दे महारानी! आपको नमस्कार है। मैया जी! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। हे नारायणी! आपको नमस्कार है। आपके दर्शन से व स्पर्श से जीव के तमाम पाप खत्म हो जाते हैं — आपकी ऐसी महिमा का वेद व पुराण बखान करते हैं। आपके पत्ते व कोमल–कोमल मंजरी श्रीपति नारायण जी के श्रीचरणों में लिपटी रहती हैं। हे तुलसी जी! आप धन्य हैं। आपने पूर्ण तप किया है, जिससे आप शालग्राम जी की पटरानी कहलाती हो। धूप–दीप व नैवेद्य आपको अर्पण किये जाते हैं। आपकी आरती होती है तथा फूलों की वर्षा बरसायी जाती है। छप्पन–भोग व छत्तीसों प्रकार के व्यंजन तुलसी के बिना भगवान् ग्रहण नहीं करते। शिव जी महाराज, शुकदेवजी महाराज, नारद गोस्वामी जी तथा ब्रह्मा आदि महामुनि

ज्ञानी आपको ढूँढते फिरते रहते हैं (अथवा तुलसी जी की परिक्रमा करते रहते हैं)। चन्द्रशेखर जी, मैया! आपका यशगान करते हैं। हे महारानी! आप भक्ति का दान दीजिये। तुलसी महारानी! वृन्दे महारानी! आपको नमस्कार है।

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीतुलसी–वन्दना

नमो नमः तुलसी कृष्ण-प्रेयसी नमो नमः।
(व्रजे) राधाकृष्ण-सेवा पाब एइ अभिलाषी॥

ये तोमार शरण लय, तार वान्छा पूर्ण हय।
कृपा करि' कर तारे वृन्दावनवासी॥

मोर एइ अभिलाष, विलासकुन्जे दिओ वास।
नयने हेरिब सदा युगल रूप राशी॥

एइ निवेदन धर, सखीर अनुगत कर।
सेवा - अधिकार दिये कर निजदासी॥

दीन कृष्णदासे कय, एइ येन मोर हय।
श्रीराधा - गोविन्द प्रेमे सदा येन भासि॥

हे कृष्ण–प्रेयसी तुलसी जी! मैं ब्रज में श्रीराधा–कृष्ण जी की सेवा प्राप्त करूँ, इस अभिलाषा से आपको बार–बार प्रणाम करता हूँ। जो भी आपकी शरण लेता है, उसकी इच्छायें पूर्ण हो जाती हैं। आप कृपा करके मुझे वृन्दावनवासी बना दें। मेरी यही अभिलाषा है कि आप मुझे विलास–कुँज में वास दें, जिससे मैं हमेशा युगल रूप का अपने नेत्रों से दर्शन करता रहूँ। आप मेरा ये निवेदन स्वीकार कर लीजिये। मुझे सखियों के आनुगत्य में सेवा का अधिकार देकर अपनी दासी बना लीजिये। स्वयं को दीन कहते हुए श्रील कृष्णदास जी कहते हैं कि मेरी ये अभिलाषा जैसे पूर्ण हो जाये और मैं सदा श्रीराधा–गोविन्द जी के प्रेम में डूबा रहूँ।

▲ ▲ ▲ ▲

प्रसाद–सेवाकालिक कीर्त्तन

महाप्रसादे गोविन्दे नाम–ब्रह्मणि वैष्णवे।
स्वल्प पुण्यं वतान् राजन् विश्वासो नैव जायते॥

शरीर अविद्या–जाल, जड़ेन्द्रिय ताहे काल,
जीवे फेले विषय–सागरे।

तार मध्ये जिह्वा अति, लोभमय सुदुर्मति,
ता'के जेता कठिन संसारे।

कृष्ण बड़ दयामय, करिवारे जिह्वा जय,
स्वप्रसाद अन्न दिल भाई।

सेइ अन्नामृत पाओ, राधाकृष्ण गुण गाओ,
प्रेमे डाक चैतन्य–निताइ॥

महाप्रसाद में, गोविन्द भगवान् में, हरिनाम में, ब्राह्मणों में तथा वैष्णवों में थोड़े पुण्य से विश्वास नहीं उपजता। ये शरीर अविद्या का जाल है तथा जड़ीय इन्द्रियाँ इसमें काल स्वरूप हैं जो कि जीव को विषय के सागर में फैंक देती हैं। इनमें भी जो जिह्वा है, ये अति लोभी है, सुदुर्मति है। संसार में इसे जीतना बड़ा कठिन है। हे भाई! श्रीकृष्ण बड़े दयालु हैं, उन्होंने इस जिह्वा से विजय दिलाने के लिये अपना अन्न प्रसाद दिया है। इस अमृतमय अन्न को पाओ तथा श्रीराधा–कृष्ण जी के गुण गाओ एवं प्रेमपूर्वक श्रीचैतन्य महाप्रभु व नित्यानन्द प्रभु को पुकारो।

श्रीराधाकृष्ण जी के चरणों में विज्ञप्ति

श्रीराधाकृष्ण पदकमले मन ।
केमने लभिवे चरम शरण ॥ 1 ॥

चिरदिन करिया ओ–चरण–आश।
आछे हे बसिया ए अधम–दास॥ 2 ॥

हे राधे! हे कृष्णचन्द्र! भकतप्राण।
पामरे युगल – भक्ति कर दान॥ 3 ॥

भक्तिहीन बलि' ना कर उपेक्षा।
मूर्खजने देह – ज्ञान सुशिक्षा ॥ 4 ॥

विषय – पिपासा प्रपीड़ित दासे।
देहि अधिकार युगल विलासे॥ 5 ॥

चंचल जीवन स्त्रोत प्रवाहिया,
कालेर सागरे धाय।
गेल ये दिवस, ना आसिबे आर,
एबे कृष्ण कि उपाय॥ 6 ॥

तुमि पतितजनेर बन्धु।
जानि हे तोमारे नाथ, तुमि त करुणा–जलसिन्धु॥ 7 ॥

आमि भाग्यहीन, अति अर्वाचीन,
ना जानि भकति–लेश।
निजगुणे नाथ, कर आत्मसात्,
घुचाइया भव क्लेश॥ 8 ॥

सिद्ध–देह दिया, वृन्दावन माझे,
सेवामृत कर दान।

पियाइया प्रेम, मत्त करि' मोरे,
शुन निज गुणगान॥ 9॥

युगल सेवाय, श्रीरासमण्डले,
नियुक्त कर आमाय।
ललिता सखीर, अयोग्या किंकरी,
विनोद धरिछे पाय॥ 10॥

ऐ मन! तुम कैसे श्रीराधा–कृष्ण जी के चरण कमलों की शरण ग्रहण कर पाओगे? (1) बहुत दिनों से उन चरणों की आशा में ये अधम दास बैठा हुआ है। (2) भक्तों के प्राण–स्वरूप हे राधे! हे कृष्ण! इस पामर को युगल–भक्ति प्रदान कीजिये। (3) भक्तिहीन कहकर मेरी उपेक्षा मत करना, दया करके इस मूर्ख व्यक्ति को ज्ञान–सुशिक्षा प्रदान कीजिये। (4) विषयों की प्यास इस दास को प्रपीड़ित कर रही है। कृपा करके इसे युगल–विलास का अधिकार प्रदान कर दीजिये। (5) जीवन बहुत ही चंचल है। ये नदी के बड़े स्त्रोत की तरह काल रूप सागर की ओर दौड़ रहा है। जो दिन चला जा रहा है वह तो अब लौटकर नहीं आयेगा। हे कृष्ण! इसका क्या उपाय है? (6) आप तो पतितों के बन्धु हैं, हे नाथ! मैं जानता हूँ कि आप करुणा के सिन्धु हैं।(7) मैं अनादिकाल से ही भाग्यहीन हूँ। मैं भक्ति का लेशमात्र भी नहीं जानता। हे नाथ! आप अपने गुणों से मुझे आत्मसात् कर लीजिये तथा मेरे इस भव–क्लेश को खत्म कर दीजिये। (8) वृन्दावन में सिद्ध देह देकर मुझे अपने सेवामृत का दान दीजिये। अपना 'प्रेम' पिलाकर मुझे मत्त कर दीजिए तथा उस प्रमोन्मत अवस्था में मुझसे आप अपने गुणगान सुनिये। (9) श्रीरास–मण्डल में, अपनी युगल सेवा में मुझे नियुक्त कर दीजिये। ललिता सखी की अयोग्य–किंकरी भक्तिविनोद आपके चरण पकड़ता है।(10)

गोपीनाथ, मम निवेदन शुन।
विषयी दुर्जन, सदा कामरत,किछु नाहि मोर गुण ॥ 1॥

गोपनाथ, आमार भरोसा तुमि।
तोमार चरणे, लइनु शरण, तोमार किंकर आमि ॥ 2॥

गोपीनाथ, केमने शोधिबे मोरे।
ना जानि भकति, कर्मे जड़मति, पड़ेछि संसार - घोरे ॥ 3॥

गोपीनाथ, सकलि तोमार माया।
नाहि मम बल, ज्ञान सुनिर्मल, स्वाधीन नहे ए काया ॥ 4॥

गोपीनाथ, नियत चरणे स्थान।
मागे ए पामर, काँदिया काँदिया, करहे करुणा दान ॥ 5॥

गोपीनाथ, तुमि त सकलि पार।
दुर्जने तारिते, तोमार शकति, के आछे पापीर आर ॥ 6॥

गोपीनाथ, तुमि कृपा-पारावार।
जीवेर कारणे, आसिया प्रपंचे, लीला कैल सुविस्तार ॥ 7॥

गोपीनाथ, आमि कि दोषे दोषी।
असुर सकल, पाइल चरण, विनोद थाकिल बसि' ॥ 8॥

हे गोपीनाथ! मेरा निवेदन सुनिये, मैं विषयी दुर्जन हूँ तथा हमेशा कामना-वासनाओं में मशगूल रहता हूँ तथा गुण मुझमें कुछ भी नहीं हैं। हे गोपीनाथ! मेरा भरोसा सिर्फ आप ही हो। आपके श्रीचरणों में मैंने शरण ले ली है तथा मैं आपका ही दास हूँ। हे गोपीनाथ जी! आप मेरा शोधन किस प्रकार से करोगे। कारण, मैं ज़रा सा भी भक्ति के बारे में नहीं जानता हूँ। कर्मों में मेरी मति बिल्कुल जड़ हो गयी है तथा इस घोर-संसार में पड़ा हुआ हूँ। हे गोपीनाथ! ये सभी आपकी ही माया है। मेरी तो न किसी प्रकार की सामर्थ्य है और न सुनिर्मल ज्ञान है और न ही मेरे अपने अधीन ये काया ही है। हे गोपीनाथ! मुझे अपने चरणों में स्थान दीजिये। ये पामर रो-रोकर आपके श्रीचरणों में स्थान माँगता है। आप मुझे करुणा का दान दीजिये अर्थात् मुझ

पामर पर कृपा कीजिये। हे गोपीनाथ जी! आप तो सब कुछ करने में समर्थ हो। दुर्जन का उद्धार करने की सामर्थ्य आपमें है और फिर इस पापी का और है ही कौन? हे गोपीनाथ! आप तो कृपा के समुद्र हो, जीवों के लिये ही आप प्रपंच में आये हो और यहाँ पर आपने अपनी लीलाओं को विस्तारित किया है। हे गोपीनाथजी! मैं कौन से दोष का दोषी हूँ कि सभी असुरों ने आपके चरणों की प्राप्ति कर ली और ये विनोद यूँ ही बैठा रह गया।

▲ ▲ ▲ ▲

गोपीनाथ, घुचाओ संसार–ज्वाला।
अविद्या–यातना, आर नाहि सहे, जन्म–मरण–माला॥ 1॥
गोपीनाथ, आमि त' कामेर दास।
विषय–वासना, जागिछे हृदये, फाँदिछे करम–फाँस॥ 2॥
गोपीनाथ, कबे वा जागिब आमि।
कामरूप–अरि, दूरे तेयागिव, हृदये स्फुरिबे तुमि॥ 3॥
गोपीनाथ, आमि त'तोमार जन।
तोमारे छाड़िया, संसार भजिनु, भुलिया आपन धन॥ 4॥
गोपीनाथ, तुमि त'सकलि जान।
आपनार जने, दण्डिया एखन, श्रीचरणे देह स्थान॥ 5॥
गोपीनाथ, एइ कि विचार तव।
विमुख देखिया, छाड़ निज जने, ना कर करुणालव॥ 6॥
गोपीनाथ, आमि त' मूरख अति।
किसे भाल हय, कभु ना बुझिनु, ताइ हेन मम गति॥ 7॥
गोपीनाथ, तुमि त' पण्डितवर।
मूढ़ेर मंगल, तुमि अन्वेषिवे, ए दासे ना भाव पर॥ 8॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

हे गोपीनाथ! मेरी संसार–ज्वाला को समाप्त कर दीजिये। ये अविद्या रूपी यन्त्रणा और उससे होने वाली जन्म–मरण रूपी माला सहन नहीं होती।

हे गोपीनाथ! मैं तो कामना–वासनाओं का दास हूँ। विषय–वासनायें मेरे हृदय में जागृत हो गयी हैं तथा उन्होंने मेरे गले में कर्म रूपी फाँसी का फंदा डाल दिया है। हे गोपीनाथ! इस मोह–निद्रा से मैं कब जागूँगा व जागने पर इस कामना–वासना रूपी शत्रु को मैं दूर फैंक दूँगा तथा मेरे हृदय में आपकी स्फूर्ति होगी। हे गोपीनाथ! मैं तो आपका ही जन हूँ। यह बात अलग है कि आपको छोड़कर मैंने संसार का ही भजन किया और मेरा अपना धन जो आप थे, को छोड़ दिया। हे गोपीनाथ जी! आप तो सर्वज्ञ हैं, सभी कुछ ही जानते हैं, अब अपने इस जन को इस भूल की जो सज़ा देनी हो वो दे दो और अपने श्रीचरणों में स्थान दो। हे गोपीनाथ जी! आपका ये कैसा विचार है कि विमुख देखकर आपने अपने निज–जन को छोड़ दिया और उस पर ज़रा सी भी कृपा नहीं की। हे गोपीनाथ! मैं तो अति मूर्ख हूँ। मुझे तो ये भी समझ में नहीं आता कि वास्तव में मेरी भलाई किसमें है। इसीलिये तो मेरी दुर्गति हो गयी है। हे गोपीनाथ! आप तो विद्वान शिरोमणि हो, आप ही थोड़ा देखिये कि मूढ़ का मंगल किस प्रकार से होगा।

▲ ▲ ▲ ▲

गोपीनाथ, आमार उपाय नाइ।
तुमि कृपा करि', आमारे लइले, संसारे उद्धार पाइ॥ 1॥
गोपीनाथ, प' ड़ेछि मायार फेरे।
धन, दारा, सुत, घिरेछे आमारे, कामेते रखेछे जेरे॥ 2॥
गोपीनाथ, मन ये पागल मोर।
ना माने शासन,सदा अचेतन, विषये रयेछे घोर॥ 3॥
गोपीनाथ, हार ये मेनेछि आमि।
अनेक यतन, हइल विफल, एखन भरोसा तुमि॥ 4॥
गोपीनाथ, केमने हइवे गति।
प्रबल इन्द्रिय–वशीभूत मन, ना छाड़े विषय–रति॥ 5॥

गोपीनाथ, हृदये बसिया मोर।
मनके शमिया, लह निज पाने, घुचिवे विपद घोर॥ 6॥
गोपीनाथ, अनाथ देखिया मोरे।
तुमि हृषीकेश, हृषीक दमिया, तार हे संसृति–घोरे॥ 7॥
गोपीनाथ, गलाय लेगेछे फाँस।
कृपा–असि धरि' , बन्धन छेदिया, विनोदे करह दास॥ 8॥

हे गोपीनाथ जी! मेरे उद्धार का और कोई उपाय नहीं है आप यदि कृपा करके मुझे अपना लो तो मैं इस संसार से छुटकारा पा सकता हूँ अन्यथा नहीं। हे गोपीनाथ जी! मैं माया के बन्धनों में फँस गया हूँ। धन–स्त्री–पुत्र — इन सब ने मुझे घेर रखा है तथा कामना–वासना से जकड़ कर रखा हुआ है और गोपीनाथ जी! ये मेरा मन भी पागल है। कुछ शासन ही नहीं मानता, हमेशा बे–होश सा रहता है और घोर विषयों में डूब गया है। हे गोपीनाथ! मैंने तो हार मान ली है। मेरी अनेकों प्रकार की कोशिशें फेल हो गयी हैं। अब तो मात्र आपका ही भरोसा है। हे गोपीनाथ! किस प्रकार से मेरी सुगति होगी। मेरा मन प्रबल–इन्द्रियों के वशीभूत हो गया है और विषयों के प्रति जो रति है उसे ये मन छोड़ता ही नहीं है। हे गोपीनाथ जी! आप कृपा करके मेरे हृदय में बैठकर मेरे मनको वशीभूत कीजिये तथा इसे अपनी सेवा में ले जाइये। आपके इस प्रकार करने से मेरी घोर विपदा खत्म हो जायेगी। हे गोपीनाथ जी! मुझे अनाथ देखकर आप मुझ पर ये कृपा कीजिये कि आप करुणा करके मेरी इन्द्रियों का दमन कर दीजिये और मुझे इस घोर संसार से पार लगाइये। हे गोपीनाथ जी! मेरे गले में फाँसी का फंदा लगा है, आप कृपा रूपी तलवार लेकर इस बन्धन को काट दीजिये तथा इस भक्ति विनोद को अपना दास बना लीजिये।

▲ ▲ ▲ ▲

हरि हे दयाल मोर जय राधानाथ।
बारबार एइबार लह निज साथ॥ 1॥

बहु योनि भ्रमि' नाथ, लइनु शरण।
निजगुणे कृपा कर अधमतारण॥ 2॥

जगतकारण तुमि जगतजीवन।
तोमा छाड़ा कार नहि हे राधारमण॥ 3॥

भुवनमंगल तुमि भुवनेर पति।
तुमि उपेक्षिले नाथ, कि हइबे गति॥ 4॥

भाबिया देखिनु एइ जगत-माझारे।
तोमा बिना केह नाहि ए दासे उद्धारे॥ 5॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

हे दयालु राधा-नाथ, श्रीहरि! आपकी जय हो, मैं बार-बार आपसे प्रार्थना करता हूँ कि इस बार आप मुझे अपने साथ ले लीजिए। (1) बहुत योनियों में भ्रमण करने के पश्चात् अब आपकी शरण ली है। हे अधमतारण, मुझमें तो कुछ भी योग्यता नहीं है इसलिये आप अपने ही गुण से मुझ पर कृपा कीजिये। (2) हे राधा-रमण जी! आप ही जगत के कारण एवं जीवन- स्वरूप हैं। हे प्रभो! आपको छोड़ कर मैं किसी का भी नहीं हूँ। (3) हे नाथ! आप ही इस भुवन का मंगल करने वाले हो व इसके स्वामी हो। यदि आप ही मेरी उपेक्षा करेंगे तो मेरी क्या गति होगी। मैंने अच्छी तरह परख कर देख लिया है कि आपको छोड़कर कोई भी इस दास का उद्धार करने वाला नहीं है। (4-5)

▲ ▲ ▲ ▲

राधा - भजने यदि मति नाहि भेला।
कृष्ण भजन तव अकारण गेला॥ 1॥
आतप - रहित सूरज नाहि जानि।
राधा - विरहित माधव नाहि मानि॥ 2॥

केवल माधव पूजये, सो अज्ञानी।
राधा - अनादर करइ अभिमानी॥ 3॥

कबँहि नाहि करबि ताँकर संग।
चित्ते इच्छसि यदि व्रजरस - रंग॥ 4॥

राधिका - दासी यदि होय अभिमान।
शीघ्रइ मिलइ तब गोकुल कान्ह ॥ 5॥

ब्रह्मा, शिव, नारद, श्रुति, नारायणी।
राधिका - पदरज पूजये मानि ॥ 6॥

उमा, रमा, सत्या, शची, चन्द्रा, रुक्मिणी।
राधा - अवतार सबे — आम्नाय वाणी॥ 7॥

हेन राधा - परिचर्या याँकर धन।
भकतिविनोद ताँर मागये चरण॥ 8॥

राधाजी के भजन में यदि रति–मति नहीं हुई तो समझो कि तुम्हारा कृष्ण–भजन तब बेकार ही चला गया। मेरी तो ऐसी धारणा है कि सूर्य जैसे ताप–रहित नहीं होता, उसी प्रकार राधा के बिना माधव भी नहीं होता। जो लोग केवल माधव की पूजा करते हैं, वे अज्ञानी हैं। सच तो यह है कि अभिमानी व्यक्ति ही राधा जी का अनादर करता है। हृदय में यदि ब्रज–प्रेम प्राप्त करने की इच्छा है तो कभी भी राधा जी को न मानने वाले या उनका अनादर करने वाले का संग मत करना। दूसरी ओर यदि यह बोध हो जाये कि मैं राधा जी की दासी हूँ तो शीघ्र ही गोकुल आनन्दवर्धक श्रीकृष्ण की प्राप्ति हो जाती है। ब्रह्माजी, शिवजी, नारद जी, श्रुतियाँ तथा लक्ष्मी जी राधाजी की चरण रज को पूज्य मानती हैं। उमा, रमा, सत्या, शची, चन्द्रा रुक्मिणी — ये सभी राधा जी के अवतार हैं — ऐसी आम्नाय (वेद) वाणी है। इस प्रकार की राधा जी की सेवा ही जिनका धन है, श्रीभक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि मैं उनके चरणों की सेवा चाहता हूँ।

स्वाभीष्ट–लालसा

**हरि हरि! हेन दिन हइवे आमार।
दुहुँ अंग परशिव, दुहुँ अंग निरखिव,
सेवन करिब दोंहाकार।
ललिता–विशाखा–संगे, सेवन करिव रंगे,
माला गाँथि' दिव नाना फुले।
कनक सम्पुट करि', कर्पूर ताम्बूल पूरि',
योगाइब अधर–युगले॥
राधा–कृष्ण वृन्दावन, एइ मोर प्राणधन,
एइ मोर जीवन–उपाय।
जय पतितपावन, देह मोरे एइ धन,
तोमा बिने अन्य नाहि भाय॥
श्रीगुरुकरुणासिन्धु, अधमजनारबन्धु
लोकनाथ लोकेर–जीवन।
हा हा प्रभु! कर दया, देह मोरे पदछाया,
नरोत्तम लइल शरण॥**

हरि! हरि!! क्या मेरा भी वह दिन होगा जब मैं आप दोनों के श्रीअंगों का स्पर्श करूँगा, आप दोनों के श्रीअंगों का दर्शन करूँगा तथा आप दोनों ही का भजन करूँगा। श्रीललिता व श्रीविशाखा जी के साथ सुखपूर्वक आपकी सेवा करूँगा तथा विभिन्न प्रकार के पुष्पों से आपके लिये माला पिरोऊँगा। सोने की डिबिया में कर्पूरयुक्त ताम्बूल सजा कर उसे आप दोनों के अधर–युगल में अर्पण करवाने में सहयोग करूँगा। श्रीराधा–श्रीकृष्ण व श्रीधाम वृन्दावन, ये ही मेरे प्राणधन हैं, ये ही मेरे जीने के साधन हैं। हे पतितपावन! आपकी जय हो। आप कृपा करके मुझे बस यही धन दीजिये कि मुझे आपके सिवाय और कोई भी व कुछ भी अच्छा न लगे। श्रीगुरुदेव करुणा के सिन्धु हैं, अधमजनों के बान्धव हैं तथा मेरे गुरुदेव लोकनाथ जी तमाम मनुष्यों के जीवन स्वरूप हैं। **हा हा प्रभु! मुझ पर दया कीजिये। मुझे अपने पादपद्मों की छाया प्रदान कीजिये,** ये नरोत्तम आपकी शरण ग्रहण करता है।

कबे कृष्ण धन पाव, हियार माझारे थोब,
जुड़ाइव तापित-पराण।
साजाइया दिव हिया, वसाइव प्राणप्रिया,
निरिखव से चन्द्रवयान॥

हे सजनि! कबे मोर हइवे सुदिन।
से प्राणनाथेर संगे, कबे वा फिरिव रंगे,
सुखमय यमुना पुलिन॥

ललिता विशाखा लञा, ताँहारे भेटिव गिया,
साजाइया नाना उपहार।
सदय हइया विधि, मिलाइवे गुणनिधि,
हेन भाग्य हइवे आमार॥

दारुण विधिर नाट, भांगिल प्रेमेर हाट,
तिलमात्र ना राखिल ता'र।
कहे नरोत्तमदास, कि मोर जीवने आश,
छाड़ि' गेल व्रजेन्द्र कुमार॥

मैं कब कृष्ण–धन प्राप्त करूँगा और उसे अपने हृदय के मध्य में रखूँगा तथा इन तापित प्राणों को शीतल करूँगा। अपने हृदय को सजा कर उसमें प्राणप्रिया को विराजमान करके, उनके चन्द्रमुख का दर्शन करूँगा, हे सजनी! मेरा ऐसा शुभ दिन कब होगा? कब फिर मैं उन प्राणनाथ के साथ सुखमय यमुना पुलिन पर भ्रमण करूँगा? ललिता व विशाखा जी के साथ जाकर नाना प्रकार के उपहारों को उन्हें भेंट करूँगा। विधाता दयालु होकर उन गुणनिधि को मुझसे मिला दें, क्या ऐसा मेरा सौभाग्य होगा? विधि का विधान बड़ा क्रूर है, उसी ने इस प्रेम के बाज़ार को ऐसा उजाड़ा कि तिलमात्र भी उसका शेष न रहा। श्रीनरोत्तम ठाकुर जी कहते हैं कि **जब व्रजेन्द्र-कुमार ही मुझे छोड़ कर चले गये हैं, तब मेरे जीवन की क्या आशा है अर्थात् तब जीने का ही क्या तात्पर्य है?**

हरि हे!
प्रपन्चे पड़िया, अगति हइया, ना देखि' उपाय आर।
अगतिर गति, चरणे शरण, तोमाय करिनु सार॥ 1॥

करम गेयान, किछु नाहि मोर, साधन - भजन नाइ।
तुमि कृपामय, आमि त' कांगाल, अहैतुकी कृपा चाइ॥ 2॥

वाक्य-मनो-वेग, क्रोध-जिह्वा-वेग, उदर-उपस्थ-वेग।
मिलिया ए सब, संसारे भासाये, दितेछे परमोद्वेग॥ 3॥

अनेक यतने, से सब दमने, छाड़ियाछि आशा आमि।
अनाथेर नाथ ! डाकि तव नाम, एखन भरोसा तुमि॥ 4॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

हे हरि! इस सांसारिक प्रपंच में पड़कर मेरी ऐसी दुर्गति हो गयी है कि अब इससे बाहर निकलने का कोई भी उपाय नज़र नहीं आ रहा है। आप तो गति–हीनों की भी गति हैं,इसलिए मैंने आपके चरणों में शरण ली है। आपको ही मैं सर्वस्व समझता हूँ। (1) कर्म–ज्ञान, कुछ भी मेरे पास नहीं है, साधन–भजन भी नहीं है। आप कृपामय हो, मैं तो कंगाल हूँ, इसलिये अहैतुकी कृपा चाहता हूँ। (2) वाक्य–वेग, मन का वेग, क्रोध–वेग, जिह्वा का वेग,उदर–वेग और उपस्थ–वेग — ये सभी मिलकर मुझे संसार में डुबा रहे हैं तथा बहुत उद्वेग दे रहे हैं। (3) इनको दमन करनेका मैंने बहुत यत्न किया, मगर अब मैंने इन सबको दमन करने की आशा छोड़ दी है। हे अनाथों के नाथ! मैं आपका नाम लेकर पुकार रहा हूँ , अब आप ही मेरा भरोसा हो। (4)

▲ ▲ ▲ ▲

मानस, देह, गेह यो किछु मोर।
अर्पिलुं तुया पदे, नन्दकिशोर !॥ 1॥

सम्पदे - विपदे, जीवने - मरणे।
दाय मम गेला, तुया ओ-पद वरणे ॥ 2॥

मारबि राखबि यो इच्छा तोहारा।
नित्यदास प्रति तुया अधिकारा॥ 3॥

जन्माओबि मोए इच्छा यदि तोर।
भक्तगृहे जनि जन्म हउ मोर॥ 4॥
कीटजन्म हउ यथा तुया दास।
बहिर्मुख ब्रह्मजन्मे नाहि आश॥ 5॥
भुक्ति-मुक्ति-स्पृहा विहीन ये-भक्त।
लभइते ताँक संग अनुरक्त॥ 6॥
जनक, जननी दयित, तनय।
प्रभु, गुरु, पति - तुहुं सर्वमय॥ 7॥
भक्तिविनोद कहे, शुन कान!
राधानाथ! तुँहुं हामार पराण॥ 8॥

हे नन्दकिशोर! मानस देह–गेह जो कुछ भी मेरा था, मैंने सब कुछ आपके चरणों में समर्पित कर दिया है। (1) सम्पद–विपद अथवा जीवन–मरण में मेरा जो कुछ भी दायित्त्व था वह सब आपके चरणों का आश्रय ले लेने से समाप्त हो गया। (2) अब चाहे आप मुझे मारो अथवा रखो, अपने इस नित्य–दास के प्रति आपका पूरा अधिकार है। (3) मुझे जन्म देने की यदि आपकी इच्छा हो तो आप इतनी कृपा करना कि भक्तों के घर में ही मेरा जन्म हो। (4) मेरा कीड़े का भी यदि जन्म हो तो वहाँ भी मुझे आपका दासत्त्व मिले। आपसे विमुख रहकर ब्रह्मा जी की पदवी की भी मुझे इच्छा नहीं है। भोग व मोक्ष की स्पृहा से रहित जो भक्त हैं — ऐसे भक्तों का संग प्राप्त करने की ही मेरी इच्छा है। (5–6) पिता–माता, प्रिय, पुत्र, प्रभु, गुरु, पति आदि आप ही मेरे सर्वस्व हो। (7) भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि हे कृष्ण! हे राधानाथ! तुम ही हमारे प्राण हो। इसलिए मेरी विनती की ओर ध्यान दीजिए। (8)

तुमि सर्वेश्वरेश्वर व्रजेन्द्र कुमार।
तोमार इच्छाय विश्वे सृजन संहार॥ 1॥

तव इच्छामत ब्रह्मा करेन सृजन।
तव इच्छामत विष्णु करेन पालन॥ 2॥

तव इच्छामत शिव करेन संहार।
तव इच्छामत माया सृजे कारागार॥ 3॥

तव इच्छामत जीवेर जनम–मरण।
समृद्धि–निपात, दुःख–सुख–संघटन॥ 4॥

मिछे मायाबद्ध जीव आशापाशे फिरे।
तव इच्छा बिना किछु करिते ना पारे॥ 5॥

तुमि त'रक्षक आर पालक आमार।
तोमार चरण बिना आशा नाहि आर॥ 6॥

निज–बल चेष्टा–प्रति भरोसा छाड़िया।
तोमार इच्छाय आमि निर्भर करिया॥ 7॥

भक्तिविनोद अति दीन अकिंचन।
तोमार इच्छाय ता'र जीवन–मरण॥ 8॥

हे व्रजेन्द्र कुमार! आप ही तमाम ईश्वरों के ईश्वर हो, आपकी इच्छा से ही विश्व का सृजन व संहार होता है। (1)आपकी इच्छा के मुताबिक ही ब्रह्माजी सृजन करते हैं, आपकी इच्छा के अनुसार ही विष्णु जी पालन करते हैं। (2) आपकी इच्छा के मुताबिक ही शिवजी संहार करते हैं व आपकी इच्छा के अनुसार ही माया इस कारागार का सृजन करती है। (3) आपकी इच्छा के मुताबिक ही जीवों का जन्म–मरण, समृद्धि–पतन, व दुःख–सुख आदि सम्यक रूप से घटित होता है। (4) जीव फिजूल में ही आशा के पीछे फिरता है —परन्तु आपकी इच्छा के बिना कुछ नहीं कर पाता। (5) आप ही तो मेरे रक्षाकर्ता व पालनकर्ता हो। आपके चरणों को छोड़कर मेरी और कोई आशा नहीं है।(6) मैं अपने बल की चेष्टा का भरोसा छोड़कर आपकी इच्छा पर ही निर्भर रह रहा हूँ। (7) श्रीभक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि मैं अति दीन–अकिंचन हूँ। आपकी इच्छा के मुताबिक ही मेरा जीवन–मरण है। (8)

भूलिया तोमारे, संसारे आसिया, पेये नानाविध व्यथा।
तोमार चरणे, आसियाछि आमि, बलिब दुःखेर कथा॥ 1॥

जननी - जठरे, छिलाम यखन, विषम बन्धन-पाशे।
एक बार प्रभु! देखा दिया मोरे, वञ्चिले ए दीन दासे॥ 2॥

तखन भाविनु, जनम पाइया, करिव भजन तव।
जनम हइल, पड़ि' माया-जाले, ना हइल ज्ञान-लव॥ 3॥

आदरेर छेले, स्वजनेर कोले, हासिया काटानु काल।
जनक - जननी - स्नेहेते भुलिया, संसार लागिल भाल॥ 4॥

क्रमे दिन - दिन, बालक हइया, खेलिनु बालक-सह।
आर किछु दिने, ज्ञान उपजिल, पाठ पढ़ि अहरहः॥ 5॥

विद्यार गौरवे, भ्रमि' देशे देशे, धन उपार्जन करि'।
स्वजन - पालन, करि एक मने, भूलिनु तोमारे, हरि!॥ 6॥

वार्द्धक्ये एखन, भक्तिविनोद, काँदिया कातर अति!
ना भजिया तोरे, दिन वृथा गेल, एखन कि ह'वे गति! ॥ 7॥

हे प्रभो! मैं तुम्हें भूलकर इस संसार में आ गया हूँ और नाना प्रकार के कष्ट पा रहा हूँ। अब मैं आपकी शरण में आ गया हूँ और अपने दुख की बात कहता हूँ। (1) नाना प्रकार के बन्धनों से बँधा हुआ जब मैं माता के गर्भ में था तब आपने सिर्फ एक बार दर्शन दिया और फिर इस दीन दास को अपने दर्शनों से वन्चित कर दिया। (2) तब सोचा था कि जन्म होने के बाद मैं आपका भजन करूँगा परन्तु जब जन्म हुआ तो माया जाल में फंसकर जरा सा भी ज्ञान नहीं रहा। (3) स्नेही पुत्र बनकर परिवार वालों की गोद में मैंने हंसकर समय को गुजारा, माता-पिता के स्नेह में सब कुछ भूल गया और मुझे संसार ही अच्छा लगने लगा। (4) धीरे-धीरे जब मैं बालकपन पर पहुँचा तो अन्यान्य बालकों के साथ खूब खेला और थोड़े दिनों बाद जब थोड़ा ज्ञान उपजा तो निरन्तर पढ़ाई करने लगा। (5) विद्या के घमण्ड में चूर होकर पैसा कमाने के

लिये मैं देश–विदेश में घूमा तथा दत्तचित्त होकर अपने परिवार का पालन–पोषण करने लग गया, परन्तु हे प्रभु ! आपको भूल गया। (6) श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि अब बुढ़ापे के कारण मैं अति व्याकुल हो कर रो रहा हूँ। हे प्रभु! आपका भजन नहीं किया, सारी ज़िन्दगी बेकार चली गयी, अब मेरी क्या गति होगी? (7)

▲ ▲ ▲ ▲

एखन बुझिनु प्रभो ! तोमार चरण।
अशोक - अभयामृत - पूर्ण सर्वक्षण॥ 1॥

सकल छाड़िया तुया चरण कमले।
पड़ियाछि आमि नाथ! तव पदतले॥ 2॥

तव पादपद्म, नाथ ! रक्षिवे आमारे।
आर रक्षाकर्त्ता नाहि ए भव संसारे॥ 3॥

आमि तव नित्यदास - जानिनु एबार।
आमार पालन - भार एखन तोमार॥ 4॥

बड़ दुःख पाइयाछि स्वतन्त्र जीवने।
सब दुःख दूरे गेल ओ - पद वरणे॥ 5॥

ये - पद लागिया रमा तपस्या करिला।
ये-पद पाइया शिव शिवत्त्व' लभिला॥ 6॥

ये - पद लभिया ब्रह्मा कृतार्थ हइला।
ये - पद नारद - मुनि हृदय धरिला॥ 7॥

सेइ से अभयपद शिरेते धरिया।
परम-आनन्दे नाचि पद-गुण गाइया॥ 8॥

संसार - विपद ह' ते अवश्य उद्धार।
भक्तिविनोद, पद करिबे तोमार ॥ 9॥

हे प्रभो! आपके चरणों की महिमा अब समझ में आयी है कि ये अशोक, अभय व अमृत से सर्वदा परिपूर्ण हैं। (1) हे नाथ! सब कुछ छोड़कर अब मैं आपके ही आश्रय में रह रहा हूँ। **हे नाथ**! अपने पादपद्मों में ही मुझको रखना, क्योंकि इस भव–संसार में आपको छोड़कर और कोई मेरा रक्षाकर्ता नहीं है। (2–3) अब मेरी समझ में आया है कि मैं आपका नित्य दास हूँ। मेरे पालन–पोषण का सब भार अब आपका ही है। (4) मैंने स्वतन्त्र जीवन में बहुत कष्ट पाया है, परन्तु आपके चरणों को वरण कर लेने के कारण मेरे सब दु:ख चले गये हैं। (5) जिन पाद–पद्मों को प्राप्त करने के लिये ही लक्ष्मी जी ने तपस्या की, जिन चरणों को प्राप्त करके ही शिवजी को शिवत्त्व प्राप्त हुआ। (6) जिन पाद–पद्मों को प्राप्त करके ही ब्रह्माजी कृतार्थ हुए, जिन पाद–पद्मों को नारद जी ने हृदय में धारण किया। उन्हीं अभय पाद–पद्मों को मस्तक पर धारण करके मैं उनका गुण कीर्तन करता हुआ परम आनन्द से नृत्य कर रहा हूँ। (7–8) श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि आपके इन श्रीचरणों की कृपा से मेरा इस संसार–विपद से अवश्य उद्धार होगा। (9)

▲ ▲ ▲ ▲

ओरे मन, भाल नाहि लागे ए संसार।
जन्म–मरण–जरा, ये संसारे आछे भरा,
ताहे किबा आछे बल' सार॥
धन–जन–परिवार, केह नहे कभु का'र,
काले मित्र, अकाले अपर।
याहा राखिवारे चाइ, ताहा नाहि थाके भाई,
अनित्य समस्त विनश्वर॥
आयु अति अल्पदिन, क्रमे ताहा हय क्षीण,
शमनेर निकट दर्शन।
रोग–शोक अनिवार, चित्त करे छारखार,
बान्धव–वियोग दुर्घटन॥

भाल क' रे देख भाई, अमिश्र आनन्द नाइ,
ये आछे, से दुःखेर कारण।
से सुखेर तरे तबे, केन माया–दास ह'बे,
हाराइवे परमार्थ धन॥
इतिहास आलोचने, भेवे देख निज मने,
कत आसुरिक दुराशय।
इन्द्रियतर्पण सार, करि' कत दुराचार,
शेषे लभे मरण निश्चय॥
मरण समय ता'रा, उपाय हइया हारा,
अनुताप–अनले ज्वलिल।
कुक्कुरादि पशु प्राय, जीवन काटाय हाय,
परमार्थ कभुना चिन्तिल॥
एमन विषये मन, केन थाक अचेतन,
छाड़ छाड़ विषयेर आशा।
श्रीगुरु–चरणाश्रय, कर सबे भव जय,
ए दासेर सेइ त' भरोसा॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

ओरे मन! ये संसार मुझे अच्छा नहीं लगता। जन्म–मरण व बुढ़ापा जिस संसार में भरा पड़ा है — कहो तो उसमें सार क्या है? यह धन, यह जन, यह परिवार — ये कोई किसी का नहीं है। ये सभी अच्छे समय के मित्र हैं और बुरे समय में सब पराए हो जाएँगे क्योंकि इस संसार का सभी कुछ अनित्य व नाशवान है, इसलिए जिसको भी तू सँभालना चाहता है, वह रहता नहीं है। फिर आयु अति अल्प दिन की है, और जो है वह भी धीरे–धीरे खत्म हो रही है — देखो सामने ही तो काल के दर्शन हो रहे हैं। इसके इलावा चित्त को उथल–पुथल कर देने वाले रोग–शोक भी अनिवार्य हैं। बान्धवों के वियोग की घटनाएँ भी अवश्य ही घटित होती रहती हैं। अत: मेरे मन! भली भाँति देख, इस संसार में विशुद्ध आनन्द नहीं है,जो सुख हैं वह भी दु:खों के कारण ही हैं। दु:ख के दूत–स्वरूप, इस तथाकथित सुख के लिए क्यों तू माया–दास बनेगा

और परमार्थ–धन को खो बैठेगा। पूर्व इतिहास की आलोचना करके जरा अपने मन में विचार कर देख कि आज से पहले कितने दुराशय असुर हुये। अपने इन्द्रिय–तर्पण के लिए उन्होंने कितना दुराचार किया, परन्तु परिणाम में उन सभी को मरना पड़ा और मरने के समय अपने उद्धार का कोई उपाय न देख कर अनुताप की आग में जलते रहे वह। हाय! हाय!! कुत्ते आदि पशुओं की तरह तू जीवन बिता रहा है, परमार्थ की चिन्ता भी नहीं की तूने। इस प्रकार के विषयों में हे मन, तू क्यों बेहोश सा रहता है — मैं कहता हूँ इन विषयों की आशा को तूँ छोड़ दे—छोड़ दे। इसलिए हे मन! तू अब श्रीगुरु पाद–पद्मों का आश्रय कर, ऐसा करने से तू इस संसार से पार हो जाएगा, इस दास को यही भरोसा है।

▲ ▲ ▲ ▲

दुर्लभ मानव - जन्म लभिया संसारे।
कृष्ण ना भजिनु , दुःख कहिब काहारे॥
'संसार' 'संसार' क' रे मिछे गेल काल।
लाभ ना हइल किछु , घटिल जंजाल॥
किसेर संसार एई, छायाबाजी प्रायः।
इहाते ममता करि वृथा दिन याय॥
ए देह पतन ह' ले कि र'वे आमार।
केह सुख नाहि दिवे पुत्र - परिवार॥
गर्दभेर मत आमि करि परिश्रम।
का' र लागि' एत करि ना घुचिल भ्रम॥
दिन याय मिछा काजे, निशा निद्रावशे।
नाहि भावि मरण निकटे आछे व' से॥
भाल मन्द खाइ, हेरि, परि, चिन्ताहीन।
नाहि भावि, ए देह छाड़िव कोन दिन॥

देह - गेह - कलत्रादि चिन्ता अविरत।
जागिछे हृदये मोर बुद्धि करि' हत॥

हाय हाय नाहि भावि, अनित्य ए सब।
जीवन विगते कोथा रहिवे वैभव॥

श्मशाने शरीर मम पड़िया रहिवे।
विहंग पतंग ताय विहार करिवे॥

कुक्कुर श्रृगाल सब आनन्दित ह'ये॥
महोत्सव करिवे आमार देह ल'ये॥

ये देहेर एइ गति, ता'र अनुगत।
संसार - वैभव आर बन्धुजन यत॥

अतएव माया मोह छाड़ि' बुद्धिमान्।
नित्यतत्त्व कृष्ण भक्ति करुन सन्धान॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

इस संसार में दुर्लभ मानव जन्म प्राप्त करके भी मैंने श्रीकृष्ण भजन नहीं किया — अपना ये दुःख कहूँ तो किसको कहूँ। संसार-संसार करते-करते समय व्यर्थ चला गया। लाभ तो कुछ हुआ ही नहीं, बल्कि जंजाल ही जंजाल बढ़ गया। किसका ये संसार है; अरे ये तो परछाईं की तरह है — इससे ममता करने से तो दिन फ़िजूल में ही गुजर जाता है और इस शरीर का पतन हो जाने से क्या रहेगा? ये पुत्र व परिवार इत्यादि कोई भी मुझको सुख नहीं देगा। गधे की तरह मैं परिश्रम करता हूँ। किए लिये मैं इतना सब करता हूँ? — ये भ्रम मेरा टूटा नहीं। दिन व्यर्थ के कार्यों में और रात सोने में गुजर जाती है। कभी भी नहीं सोचता कि मृत्यु सामने आकर बैठी हुई है। अच्छा-बुरा जैसा भी मिलता है, खा लेता हूँ और निश्चिन्त होकर पड़ा रहता हूँ — जरा सा भी नहीं सोचता कि इस शरीर को एक दिन मुझे छोड़ना पड़ेगा। निरन्तर शरीर, घर व स्त्री आदि की ही चिन्ता लगी रहती है और इन चिन्ताओं के हृदय में जाग जाने से इन्होंने मेरी बुद्धि को खत्म कर दिया है। हाय! हाय! जरा भी नहीं सोचता कि ये सब तो अनित्य हैं और जीवन की समाप्ति पर ये सारा वैभव कहाँ रहेगा।

श्मशान में मेरा शरीर पड़ा रहेगा और चील, कौवे आदि उस पर मंडराएँगे। कुत्ते व सियार आदि आनन्दित होकर मेरी देह का महोत्वस मनाएँगे — जिस देह की यह गति है उसका व अनित्य सांसारिक–वैभव व बन्धुगणों का मैं आनुगत्य कर रहा हूँ। अतएव बुद्धिमान मनुष्यों को चाहिए कि वे इस माया–मोह को छोड़कर नित्यतत्त्व, जो श्रीकृष्ण भक्ति है, उसका अनुसन्धान करें।

▲ ▲ ▲ ▲

माधव! बहुत मिनति करि तोय।
देइ तुलसी तिल, देह समर्पलुं,
दया जनु छोड़बि मोय॥
गणइते दोष, गुण–लेश न पाओबि,
यब तुहुँ करबि विचार।
तुहुँ जगन्नाथ, जगभरि कहाओसि,
जग बाहिर नहीं मुइ छार॥
किये मानुष पशु, पाखि किये जनमिये
अथवा कीट पतंगे।
करम–विपाके, गतागति पुनः पुनः,
मति रहु तुया परसंगे॥
भणये विद्यापति, अतिशय कातर,
तरइते इह भवसिन्धु।
तुया पद–पल्लव, करि अवलम्बन,
तिल एक देह दीनबन्धु॥

माधव! मैं आपसे प्रगाढ़ विनती करता हूँ। मैंने तुलसी व तिल देकर इस देह को आपके समर्पण कर दिया है। बस आप ज़रा सा कृपा–वर्षण मुझ पर कर देना। यदि आप मेरे बारे में विचार करोगे तो दोष ही दोष आपको गिनने को मिलेंगे, लेशमात्र भी गुण आप मुझमें नहीं पाओगे........ (ठाकुर! मुझ पर कृपा अवश्य करना) .... आप तो जगन्नाथ हैं, जगत् का भरण–पोषण करने वाले कहलाते हैं, फिर नगण्य सा मैं जगत् के बाहर तो नहीं। हे प्रभो! आपसे

सिर्फ इतनी सी प्रार्थना है कि चाहे मनुष्य, पशु या पक्षी के रूप में मैं क्यों न जन्मूँ अथवा कीट–पतंग ही क्यों न हो जाऊँ — मेरे कर्मानुसार इस कर्म–विपाक के आवागमन में मैं भले ही चलता रहूँ परन्तु आपके नाम–रूप–गुण व लीला आदि में मेरी मति लगी रहे। अतिशय कातर होकर 'विद्यापति जी' कहते हैं — हे दीनबन्धु! इस भवसागर से पार होने के लिये मैंने आपके पादपद्मों को अवलम्बन किया है — आप तिलमात्र कृपा अवश्य करना।

▲ ▲ ▲ ▲

राधा–कृष्ण बल्, बल् बलरे सबाइ।
(एइ) शिक्षा दिया, सब नदीया, फिरछे नेचे गौर–निताइ।
(मिछे) मायार वशे', याच्छ भेसे', खाच्छ हाबुडुबु भाइ।
(जीव) कृष्णदास, ए विश्वास, करले त' आर दुःख नाइ॥
(कृष्ण) बलबे यबे, पुलक ह'बे, झ'र बे आँखि, बलि ताइ॥
(राधा) - कृष्ण बल, संगे चल, एइमात्र भिक्षा चाइ।
(याय) सकल विपद, भक्तिविनोद बलेन, यखन ओ–नाम गाइ॥

आप सभी राधा–कृष्ण कहिये, राधा–कृष्ण कहिये। यही शिक्षा श्रीगौरांग महाप्रभु जी व श्रीमन् नित्यानन्द प्रभु जी ने सारी नदिया नगरी में नृत्य करते–करते दी। फिजूल माया के वश रहकर क्यों इसमें बहते हुए गोते खा रहे हो। ये (जीव) कृष्णदास है—यदि इसे यह विश्वास हो जाये तो फिर कोई दुःख नहीं है। जब आप 'कृष्ण' 'कृष्ण' उच्चारण करोगे तो आपके शरीर में पुलक होगा व आँखों से अश्रुधारायें बहने लगेंगी। राधा–कृष्ण बोलो और संग में (गोलोक–धाम) चलो — बस आपसे यही भीख माँगते हैं। तुम्हारी सारी आपद–विपद चली जाएगी, जब तुम उस नाम का (श्रीराधा–कृष्ण जी के नाम का) गान करोगे।

▲ ▲ ▲ ▲

दैन्य-बोधिका-प्रार्थना

हरि हरि! विफले जनम गोडाइनु।
मनुष्य जनम पाइया, राधाकृष्ण ना भजिया,
जानिया शुनिया विष खाइनु॥
गोलोकेर प्रेमधन, हरिनाम-संकीर्तन,
रति ना जन्मिल केने ताय।
संसार-विषानले, दिवानिशि हिया ज्वले,
जुड़ाइते ना कैनु उपाय॥
व्रजेन्द्रनन्दन येइ, शचीसुत हैल सेइ,
बलराम हइल निताइ।
दीनहीन यत छिल, हरिनामे उद्धारिल,
तार साक्षी जगाइ-माधाइ॥
हा हा प्रभु नन्दसुत, वृषभानुसुतायुत,
करुणा करह एइबार।
नरोत्तम दास कय, ना ठेलिह रांगा पाय,
तोमा बिने के आछे आमार॥

हरि! हरि!! मैंने तो वृथा ही अपना जन्म गंवा दिया। सदुर्लभ मनुष्य जीवन पाकर भी मैंने श्रीराधा–कृष्ण जी का भजन नहीं किया। मैंने जानबूझ कर सांसारिक विषय रूप विष को खा लिया। गोलोक का प्रेमधन, जो हरिनाम–संकीर्त्तन है, उसमें मेरी जरा सी भी रति–मति नहीं हुई तथा संसार रूपी विषानल से दिन–रात मेरा हृदय जल रहा है,इसको शीतल करने का भी उपाय मैंने नहीं किया। जो व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण हैं, वे ही शचीनन्दन–गौरांग रूप से अवतीर्ण हुए हैं तथा बलराम जी नित्यानन्द प्रभु हो गये हैं। जितने भी दीन–हीन थे, **सभी का इन्होंने हरिनाम-संकीर्तन के द्वारा उद्धार कर दिया,** इस बात के गवाह जगाइ और माधाइ हैं। हे नन्दनन्दन श्रीकृष्ण! आप वृषभानुसुता श्रीमति राधा रानी के साथ एक बार मुझ पर करुणा कीजिये। नरोत्तम ठाकुर जी कहते हैं, हे प्रभो! आप मुझे अपने इन अरुणवर्ण चरण–कमलों से दूर मत करना। आपके बिना मेरा और है ही कौन?

सर्वस्व तोमार, चरणे सँपिया, पड़ेछि तोमार घरे।
तुमि त' ठाकुर तोमार कुकुर, बलिया जानह मोरे॥ 1॥

बाँधिया निकटे, आमारे पालिवे, रहिब तोमार द्वारे।
प्रतीप-जनेरे, आसिते ना दिव, राखिब गड़ेर पारे॥ 2॥

तव निजजन, प्रसाद सेविया, उच्छिष्ट राखिबे याहा।
आमार भोजन, परम-आनन्दे प्रतिदिन ह'बे ताहा॥ 3॥

बसिया शुइया, तोमार चरण, चिन्तिव सतत आमि।
नाचिते-नाचिते, निकटे याइब, यखन डाकिबे तुमि॥ 4॥

निजेर पोषण, कभुना भाविव, रहिव भावेर भरे।
भकतिविनोद, तोमार पालक, बलिया वरण करे॥ 5॥

हे भगवान! सर्वस्व आपके चरणों में सौंपकर आपके घर में पड़ा हुआ हूँ। आप मालिक हैं, आप मुझे अपना कुत्ता समझें। (1) अपने पास बाँधकर मुझे पालना। मैं आपके दरवाजे पर रहूँगा। अजनबी लोगों को अर्थात् जो भगवान के भक्त नहीं हैं, उन्हें घर के नजदीक नहीं आने दूँगा, उन्हें तो आप के घर से दूर ही रखूँगा। (2) जब आपके भक्त प्रसाद-सेवन करेंगे तो जो उच्छिष्ट बचेगा, वही मेरा प्रतिदिन का परमानन्दमय भोजन होगा।(3) मैं बैठते-सोते निरन्तर आपके चरणों का चिन्तन करूँगा, जब आप मुझे पुकारेंगे तो नाचते-नाचते आपके पास आऊँगा। (4) हमेशा आपके भाव में विभोर रहूँगा। अपने पोषण की कभी भी चिन्ता नहीं करूँगा। श्रील भक्ति विनोद ठाकुर जी कहते हैं कि हे प्रभो! मैंने आपको अपने पालनकर्ता के रूप में वरण कर लिया है। (5)

▲ ▲ ▲ ▲

जन्म सफल तार, कृष्ण दर्शन यार,
भाग्ये हइयाछे एक बार।
विकशिया हिन्नयन, करि' कृष्ण-दर्शन,
छाड़े जीव चित्तेर विकार॥

वृन्दावन केलि चतुर वनमाली।
त्रिभंग–भंगिमा रूप, वंशीधारी अपरूप,
रसमयनिधि, गुणशाली॥
वर्ण नव–जलधर, शिरे शिखिपिच्छवर,
अलका–तिलका शोभा पाय।
परिधान पीतवास, वदने मधुर हास,
हेन रूप जगत् माताय॥
इन्द्रनील जिनि, कृष्ण रूप खानि, हेरिया कदम्बमूले।
मन उच्चाटन, ना चले चरण, संसार गेलाम भूले॥
(सखि हे) सुधामय, से रूप माधुरी।
देखिले नयन, हय अचेतन, झरे प्रेममय वारि॥
किवा चूड़ा शिरे, किवा वंशी करे, किवा से त्रिभंग ठाम।
चरण कमले, आमिया उछले, ताहाते नूपुर दाम॥
सदा आशा करि, भृंगरूप धरि', चरण–कमले स्थान।
अनायासे पाइ, कृष्ण गुण गाइ, आर ना भजिब आन॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

उसका ही जीवन सफल है, सौभाग्य से जिसे कम–से कम एक बार तो श्रीकृष्ण का दर्शन हुआ। दिव्य नेत्रों के विकसित होने पर जीव श्रीकृष्ण का दर्शन करता है और तभी वह चित्त के तमाम विकारों का परित्याग कर देता है। वृन्दावन–क्रीड़ा में वनमाली श्रीकृष्ण बहुत चतुर हैं। त्रिभंग–भंगिमा रूप है उनका, वंशीधारी अपूर्व रूप के साथ–साथ आनन्द व गुणों के समुद्र हैं वे। उनका वर्ण जलमग्न नवीन बादलों की तरह है, मस्तक पर सुन्दर मयूरपुच्छ व अलका–तिलक शोभा पा रहा है। पीताम्बर पहना हुआ है, मुखारविन्द में मधुर–मधुर हंसी है— इस प्रकार के रूप ने सारे जगत् को पागल बना दिया है। रूप निधि इन्द्रनील जो श्रीकृष्ण हैं, उन्हें कदम्ब वृक्ष के नीचे देखकर मेरा मन अति उत्कण्ठित हो गया। उस अवस्था में चरणों का चलना सम्भव न हुआ तथा सारे संसार को मैं भूल गया। हे सखी! वह रूप–माधुरी अति–अमृतमय है। उसे नयनों से निहारने से जीव अचेतन हो जाता है तथा आँखों से प्रेम की

बरसात होने लग जाती है। सिर पर क्या चूड़ा है, क्या वह वंशी है करों में तथा क्या वह त्रिभंग ठाम है— अर्थात् सभी अनुपम हैं। चरण-कमलों में अमृत छलकता है तथा उनमें नूपुर बँधे हैं। हमेशा मेरी यही आशा रहती है कि मुझे उन चरण-कमलों में एक भौंरे के रूप में स्थान मिल जाए। ऐसा होने पर अनायास ही उनके दर्शन मुझको सुलभ हो जाएँगे और मैं हमेशा श्रीकृष्ण का गुणगान गाता रहूँगा। मैं संकल्प करता हूँ कि मैं और किसी का भी भजन नहीं करूँगा।

▲ ▲ ▲ ▲

आत्मनिवेदन, तुया पदे करि',
हइनु परम सुखी।
दुःख दूरे गेल, चिन्ता ना रहिल,
चौदिके आनन्द देखि॥ 1॥
अशोक-अभय, अमृत-आधार,
तोमार चरणद्वय।
ताहाते एखन, विश्राम लभिया,
छाड़िनु भवेर भय॥ 2॥
तोमार संसारे, करिब सेवन,
नहिब फलेर भागी।
तव सुख याहे, करिब यतन,
ह'ये पदे अनुरागी॥ 3॥
तोमार सेवाय, दुःख हय यत,
सेओ त'परम सुख।
सेवा-सुख-दुःख, परम सम्पद,
नाशये अविद्या-दुःख॥ 4॥
पूर्व इतिहास, भुलिनु सकल,
सेवा-सुख पेये मने।
आमि त' तोमार, तुमि त' आमार,
कि काज अपर धने॥ 5॥

भकतिविनोद, आनन्दे डुबिया,
तोमार सेवार तरे।
सब चेष्टा करे, तब इच्छा–मत,
थाकिया तोमार घरे॥ 6॥

आपके चरणों में आत्मनिवेदन करके मैं अत्यधिक सुखी हो गया हूँ। मेरे तमाम दु:ख चले गये हैं और अब कोई चिन्ता नहीं रह गयी है। चारों तरफ आनन्द ही आनन्द देखता हूँ।(1) आपके युगल–चरण शोक–रहित, भय–रहित एवं अमृत के आधार हैं। उनमें विश्राम प्राप्त करके अब मैंने भव–भय को भी छोड़ दिया है। (2) आपका पदानुरागी बनकर मैं आपके संसार में सेवा करूँगा और फल का भागीदार भी नहीं बनूँगा। आपका सुख जिसमें होगा, उसके लिये ही प्रयत्न करूँगा। (3) आपकी सेवा में जो दु:ख होंगे वही मेरे लिये परम सुख होगा। सेवा करने में प्राप्त होने वाले सुख–दुख ही सबसे बड़ी सम्पत्ति हैं क्योंकि ये अवद्या–दु:ख को नाश कर देते हैं। (4) आपकी सेवा का सुख प्राप्त करके मैं अपने पूर्व इतिहास को भूल गया हूँ। अब तो बस इतना ही याद है कि मैं आपका हूँ और आप मेरे हैं। औरों से मेरा क्या वास्ता है। (5) श्रील भक्तिविनोद ठाकुर आपके घर में रहकर आनन्द में आप्लावित होकर, आपकी प्रसन्नता के लिये, आपकी इच्छा के मुताबिक तमाम चेष्टायें करते हैं। (6)

▲ ▲ ▲ ▲

कोथाय गो प्रेममयि राधे राधे।
राधे राधे गो जय राधे राधे ॥ 1॥
देखा दिए प्राण राख राधे राधे।
तोमार कांगाल तोमाय डाके राधे राधे॥ 2॥
राधे वृन्दावन - विलासिनी राधे राधे।
राधे कानुमनोमोहिनी राधे राधे ॥ 3॥
राधे अष्टसखीर शिरोमणि राधे राधे।
राधे वृषभानुनन्दिनीराधे राधे ॥ 4॥

(गोसाञि) नियम करे सदाइ डाके, राधे राधे।
(गोसाञि) एक बार डाके केशीघाटे।
आबार डाके वंशीवटे राधे राधे॥ 5॥
(गोसाञि) एक बार डाके निधुवने।
आबार डाके कुञ्जवने राधे राधे॥ 6॥
(गोसाञि) एक बार डाके राधाकुण्डे।
आबार डाके श्यामकुण्डे राधे राधे॥ 7॥
(गोसाञि) एक बार डाके कुसुमवने।
आबार डाके गोवर्धने राधे राधे॥ 8॥
(गोसाञि) एक बार डाके तालवने।
आबार डाके तमालवने राधे राधे॥ 9॥
(गोसाञि) मलिन वसन दिये गाय।
व्रजेर धूलाय गड़ागड़ि जाय राधे राधे॥ 10॥
(गोसाञि) मुखे राधा राधा बले।
भेसे नयनेर जले राधे राधे॥ 11॥
(गोसाञि) वृन्दावने कूलिकूलि केंदे बेड़ाय,
राधा बलि राधे राधे॥ 12॥
(गोसाञि) छाप्पान्न दण्ड रात्रि दिने।
जाने ना राधा - गोविन्द बिने राधे राधे॥ 13॥
तारपर चारि दण्ड शुति थाके।
स्वप्ने राधा - गोविन्द देखे राधे राधे॥ 14॥

प्रस्तुत कीर्तन को श्रील गौरकिशोर दास बाबा जी महाराज गाया करते थे तथा ऐसा भी कहा जाता है कि ये कीर्तन श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी जी के उद्देश्य में रचित हुआ।

हे प्रेममयी राधे! आप कहाँ हैं? आपका यह कंगाल दास आपको पुकार रहा है। एक बार दर्शन प्रदानकर मेरे प्राणों की रक्षा कीजिए। हे वृन्दावन विलासिनी श्रीराधे! हे श्रीश्यामसुन्दर के मन को भी हरण करनेवाली श्रीराधे! हे ललिता, विशाखा आदि अष्ट सखियों की शिरोमणि, वृषभानुनन्दिनी

श्रीराधे! इस प्रकार श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी सदा नियमपूर्वक श्रीमती राधिकाजीको पुकारते हैं। कभी केशीघाट में पुकारते हैं, तो कभी वंशीवट में, कभी निधुवन में तो कभी कुंजवन में, कभी राधाकुण्ड में तो कभी श्यामकुण्ड में, कभी कुसुम सरोवर में, तो कभी गोवर्धन में, कभी तालवन में, तो कभी तमालवन में। शरीर पर मलिन वस्त्र धारणकर ब्रजकी धूल में लोटपोट हो रहे हैं तथा मुख से हे राधे! हे राधे! पुकारते हुए उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही है। वे वृन्दावन की गलियों में रोते-रोते राधे-राधे कहते हुए घूमते हैं। वे रात-दिन छप्पन दण्ड राधा-गोविन्द की सेवा में ही निमग्न रहते हैं तथा मात्र चार दण्ड शयन करते हैं। परन्तु सोते हुए स्वप्न में भी राधागोविन्द के दर्शन करते हैं।

▲ ▲ ▲ ▲

राधाकुण्डतट - कुन्जकुटीर।
गोवर्धन - पर्वत, यामुनतीर॥ 1॥
कुसुम - सरोवर, मानसगंगा।
कलिन्दनन्दिनी विपुल तरंगा॥ 2॥
वंशीवट, गोकुल, धीरसमीर।
वृन्दावन - तरुलतिका - कनीर॥ 3॥
खग - मृगकुल, मलय-वातास।
मयूर, भ्रमर, मुरली - विलास॥ 4॥
वेणु, श्रृंग, पदचिन्ह मेघमाला।
वसन्त, शशांक, शंख,करताला॥ 5॥
युगलविलासे अनुकूल जानि।
लीलाविलास उद्‌दीपक मानि॥ 6॥
ए सब छोड़त काँहा नाहि याऊँ।
ए सब छोड़त पराण हाराऊँ॥ 7॥
भक्तिविनोद कहे शुन कान!
तुया उद्दीपक हामारा पराण॥ 8॥

राधाकुण्ड–तट–कुन्ज–कुटीर, गोवर्धन–पर्वत, यमुना–तीर, कुसुम–सरोवर, मानस–गंगा, कलिन्दनन्दिनी यमुना जी की विपुल तरंगें, वंशीवट, गोकुल, धीर–समीर, वृन्दावन के वृक्ष–लतायें व वेतस लता, पक्षी–पशु, सुगन्धित हवा, मयूर, भ्रमर, मुरली–विलास, वेणु, श्रृंग, पदचिन्ह, मेघ–माला, वसन्त, चन्द्रमा, शंख तथा करताल आदि को युगल विलास के अनुकूल जानकर इन्हें लीला–विलास का उद्दीपक मानता हूँ।(1–6) इन सब को छोड़कर अब मैं कहीं भी नहीं जाऊँगा। इन सब को छोड़कर मैं जीवित नहीं रहूँगा। (7) श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी कहते हैं कि हे कृष्ण! आपके भावों को उद्दीपन कराने वाली यह सब वस्तुएँ ही हमारी प्राण हैं। (8)

▲ ▲ ▲ ▲

आर केन मायाजाले पड़ितेछ जीव मीन।
नाहि जान बद्ध ह'ये रवे तुमि चिरदिन॥

अति तुच्छ भोग-आशे, बन्दी ह'ये माया-पाशे।
रहिले विकृत भावे दण्ड्य यथा पराधीन॥

एखन ओ भक्ति बले कृष्ण प्रेम सिन्धु जले।
क्रीड़ा करि' अनायासे थाक तुम कृष्णाधीन॥

(श्रील भक्ति विनोद ठाकुर)

हे मछली रूपी जीव! तू क्यों इस माया–जाल में यूँ ही फँस रहा है। तू नहीं जानता कि इससे तू चिर–दिन के लिये अर्थात् एक लम्बे समय के लिए फंस जायेगा। इन अति तुच्छ भोगों की आशा से तू माया के बन्धनों में जकड़ कर ऐसा विकृत भाव से रहेगा जैसे पराधीन व्यक्ति किसी दण्डदाता के पास रहता है। अब भी मौका है तू भक्ति के बल से कृष्ण–प्रेम रूपी जल में क्रीड़ा कर तथा इसमें क्रीड़ा करते–करते तू अनायास भाव से कृष्णाधीन रह।

▲ ▲ ▲ ▲

हरि हरये नमः कृष्ण यादवाय नमः।
यादवाय माधवाय केशवाय नमः॥ 1॥
गोपाल गोविन्द राम श्रीमधुसूदन।
गिरिधारी गोपीनाथ मदनमोहन॥ 2॥
श्रीचैतन्य - नित्यानन्द श्रीअद्वैत सीता।
हरि गुरु वैष्णव भागवत् गीता॥ 3॥
जय रूप सनातन भट्ट - रघुनाथ।
श्रीजीव गोपाल भट्ट दास-रघुनाथ॥ 4॥
एइ छय-गोसाञिर करि चरण-वन्दन।
याहा हैते विघ्ननाश अभीष्ट - पूरण॥ 5॥
एइ छय-गोसाञि याँर-मुइ ताँर दास।
ताँ' सबार पदरेणु मोर पन्च-ग्रास॥ 6॥
ताँदेर चरण सेवि भक्तसने वास।
जनमे - जनमे हय एइ अभिलाष॥ 7॥
एइ छय गोसाञि यबे ब्रजे कैला वास।
राधाकृष्ण-नित्यलीला करिला प्रकाश॥ 8॥
आनन्दे बलह हरि, भज वृन्दावन।
श्रीगुरु - वैष्णव - पदे मजाइया मन॥ 9॥
श्रीगुरु-वैष्णव-पादपद्म करि आश।
नाम - संकीर्त्तन कहे नरोत्तमदास॥ 10॥

तमाम इन्द्रियों व सांसारिक तापों को हरण करने वाले हरि को मेरा नमस्कार है। समस्त जीवों को अपनी ओर आकर्षित करने वाले श्रीकृष्ण को नमस्कार है। यादव को, माधव को व केशव को मेरा नमस्कार है। गोपाल, गोविन्द, राम, श्रीमधुसूदन, गिरिधारी, गोपीनाथ, मदनमोहन, श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीनित्यानन्द प्रभु, श्रीअद्वैताचार्य तथा अद्वैत–शक्ति श्रीसीता ठाकुरानी एवं हरि–गुरु–वैष्णव, श्रीमद्भागवत व श्रीमद्भगवद्गीता— सभी को नमस्कार। श्रीरूप गोस्वामी, श्रीसनातन गोस्वामी, श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामी, श्रीजीव गोस्वामी, श्रीगोपाल भट्ट गोस्वामी तथा श्रीरघुनाथ दास गोस्वामी — इन छः गोस्वामियों

की जय हो। इन छः गोस्वामियों की मैं चरण वन्दना करता हूँ। कारण, इन छः गोस्वामियों की चरण वन्दना करने से तमाम विघ्न नाश हो जाते हैं तथा अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है। ये छः गोस्वामी जिनके हैं, मैं उनका दास हूँ — इन सबकी चरण-रेणु ही मेरा पंच-ग्रास है, मैं इनके चरणों की सेवा करता रहूँ तथा भक्तों के साथ में मेरा वास हो। इन छः गोस्वामियों ने ब्रजवास किया तो राधाकृष्ण जी की नित्यलीलाओं का प्रकाश किया। आनन्द के साथ मन से हरि हरि बोलो तथा वृन्दावन का भजन करो तथा श्रीगुरु-वैष्णवों के श्रीचरणों में अपने को मशगूल कर दो। श्रीनरोत्तम ठाकुर जी कहते हैं कि श्रीगुरु-वैष्णवों के पादपद्मों की (कृपा-प्राप्ति की) आशा से मैं हरिनाम संकीर्तन करता हूँ।

▲ ▲ ▲ ▲

गौरांग तुमि मोरे दया ना छाड़िह।
आपन करिया रांगा चरणे राखिह॥

तोमार चरण लागि सब तेयागिलुँ।
शीतल चरण पाइया शरण लइलुँ॥

ए कुले ओ कुले मुञि दिलुँ तिलाञ्जलि।
राखिह चरणे मोरे आपनार बलि॥

वासुदेव घोष बले चरणे धरिया।
कृपा करि राख मोरे पदछाया दिया॥

हे गौरांग महाप्रभु! आप मेरे प्रति अपनी दया नहीं छोड़ना, मुझे अपना बनाकर अपने लाल रंग के कोमल-कोमल श्रीचरणों में रखना। आपके श्रीचरणों की प्राप्ति हेतु मैंने सब कुछ त्याग कर दिया है, शीतल चरणों में अब मैंने शरण ली है। मैंने इस कुल और उस कुल को त्याग दिया है, आप कृपा करके मुझे अपना कहकर अपने चरणों में रखना। वासुदेव घोष आपके चरणों को धारण करके आपसे प्रार्थना करता है कि कृपा करके मुझे अपने चरणों की छाया में ही रखियेगा।

▲ ▲ ▲ ▲

बन्धुसंगे यदि तब रंग परिहास, थाके अभिलाष,
(थाके अभिलाष)
तबे मोर कथा राख, जेयो नाको जेयो नाको,
मथुराय केशीतीर्थ-घाटेर सकाश॥
गोविन्द विग्रह धरि तथाय आछेन हरि,
नयने बंकिम दृष्टि मुखे मन्दहास।
किवा त्रिभंग ठाम, वर्ण समुज्ज्वल श्याम,
नवकिशलय शोभा श्रीअंगे प्रकाश॥
अधरे वंशीटी तार, अनर्थेर मूलाधार,
शिखिचूड़ाकेओ भाई करो न विश्वास॥
से मूर्ति नयने हेरे, केह नाहि घरे फिरे,
संसारी गृहीर जे गो हय सर्वनाश।
(ताई मोर मने बड़ त्रास)
घटिबे विपद भारी, जेयो नाको हे संसारि,
मथुराय केशीतीर्थ-घाटेर सकाश॥

हे भाई! बन्धु–बान्धवों के साथ यदि तेरी हास–परिहास करने की अभिलाषा हो तो मेरी एक बात मानो, मथुरा (वृन्दावन) में केशी घाट के निकट भूलकर भी मत जाना। वहाँ श्रीहरि गोविन्दजी के रूप में विराजमान हैं जिनकी बंकिम दृष्टि एवं श्रीमुखकमल पर मन्द–मन्द मुस्कान है। उनका क्या ही सुन्दर त्रिभंगस्वरूप है, उनका वर्ण उज्ज्वल श्यामवर्ण है। उनके अधरों पर वंशी विराजमान रहती है, जो समस्त अनर्थों की मूल आधार है। एक और बात, सिर पर धारण किए हुए मयूरपुच्छ का भी विश्वास मत करना। इस स्वरूप को जो अपने नेत्रों से एक बार भी दर्शन करता है, वह फिर वापिस घर नहीं लौटता। इस प्रकार संसारी व्यक्ति का सर्वनाश हो जाता है। इसीलिए मेरे मन में भय बैठा है। अत: हे संसारी व्यक्ति! मथुरा में केशीघाट के निकट कभी मत जाना, नहीं तो भयंकर विपदा में फंस जाओगे।

▲ ▲ ▲ ▲

दैन्य-अपराधात्मक

आमार जीवन, सदा पापे रत,
नाहिक पुण्येर लेश।
परेरे उद्वेग, दियाछि जे कत,
दियाछि जीवेरे क्लेश॥ 1॥

निज सुख लागि', पापे नाहि डरि,
दयाहीन स्वार्थपर।
पर-सुखे दुःखी, सदा मिथ्या-भाषी,
परदुःख सुखकर॥ 2॥

अशेष कामना, हृदि माझे मोर,
क्रोधी दम्भपरायण।
मदमत्त सदा, विषये मोहित,
हिंसा-गर्व विभूषण॥ 3॥

निद्रालस्य-हत, सुकार्ये विरत,
अकार्ये उद्योगी आमि।
प्रतिष्ठा लागिया, शाठ्य आचरण,
लोभहत सदा कामी॥ 4॥

ए हेन दुर्जन, सज्जन-वर्जित,
अपराधी निरन्तर।
शुभकार्य शून्य, सदानर्थमना,
नाना दुःखे जर जर॥ 5॥

वार्द्धक्ये एखन, उपायविहीन,
ता' ते दीन अकिञ्चन।
भकतिविनोद, प्रभुर चरणे,
करे दुःख निवेदन॥ 6॥

अहो! मैं सारा जीवन पाप–कर्मों में ही लगा रहा, मैंने लेशमात्र भी पुण्य नहीं किया। न जाने कितने ही दूसरे जीवों को मैंने उद्वेग व क्लेश दिया। मैं ऐसा दयाहीन, स्वार्थी तथा मिथ्याभाषी हूँ कि अपने सुख के लिए पाप से भी नहीं डरता हूँ। दूसरे को सुखी देखकर मुझे ईर्ष्या होने लगती है और मैं दु:खी हो जाता हूँ एवं दूसरे को दु:खी देखकर मेरा हृदय आनन्द से भर जाता है। मैं बड़ा ही क्रोधी एवं दाम्भिक हूँ। अनन्त प्रकार की सांसारिक कामनाओं से मेरा हृदय भरा हुआ है तथा मैं बड़ा ही क्रोधी व घमण्डी हूँ। मैं विषयों के मद में प्रमत्त हूँ तथा हिंसा और गर्व मेरे आभूषण स्वरूप हैं। निद्रा एवं आलस्यग्रस्त होने के कारण सत् कार्यों में मेरी लेशमात्र भी रुचि नहीं होती परन्तु दुष्कर्मों में मेरा मन स्वत: ही रम जाता है। मैं बहुत ही कामी हूँ। दूसरों से प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए मैं कपटतापूर्ण व्यवहार करता हूँ। हे प्रभो! मैं ऐसा दुर्जन हूँ कि वैष्णवों का संग तो मैंने कभी किया ही नहीं अपितु निरन्तर मैं उनके चरणों में अपराध करता रहता हूँ। मेरा अनर्थग्रस्त मन शुभ कर्मों को त्यागकर पाप कर्मों में ही लगा रहता है, जिसके फलस्वरूप नाना प्रकार के दु:खों से जर्जरित हो रहा है। श्रीभक्तिविनोद ठाकुर जी भगवान के श्रीचरणों में अपना दु:ख निवेदन करते हुए कह रहे हैं कि मेरी हालत तो बड़ी दयनीय सी हो गयी है क्योंकि प्रभो! अब तो मेरी वृद्धावस्था आ गयी है और इससे बचने का कोई उपाय भी नहीं है।

▲ ▲ ▲ ▲

यशोमती - नन्दन, व्रजवर-नागर, गोकुल-रंजन कान्ह।
गोपी-पराण-धन, मदन-मनोहर, कालीयदमन विधान॥ 1॥

अमन हरिनाम, अमिय विलासा।
विपिन - पुरन्दर, नवीन - नागरवर, वंशीवदन सुवासा॥ 2॥

व्रजजन-पालन, असुरकुल-नाशन, नन्द-गोधन-रखवाला।
गोविन्द माधव, नवनीत - तस्कर, सुन्दर नन्द-गोपाला॥ 3॥

यामुन - तटचर, गोपी - वसन हर, रास-रसिक कृपामय।
श्रीराधावल्लभ, वृन्दावन - नटवर, भक्तिविनोद आश्रय॥ 4॥

ब्रज के श्रेष्ठ नागर जो समस्त गोकुलवासियों को आनन्द प्रदान करने वाले, गोपियों के प्राणधनस्वरूप साक्षात् मदन (कामदेव) के मनको भी हरण करनेवाले एवं कालीयनाग का दमन करनेवाले हैं, उन श्रीयशोदानन्दन की जय हो। उनका नाम अमल है अर्थात् चिन्मय है तथा अमृत के समान है और वे नवीन नागर (श्रीकृष्ण) विपिन (द्वादशवनों एवं उपवनों)के राजा हैं, उनके (श्रीमुख) अधरों पर वंशी सुशोभित हो रही है। ब्रजवासियों का पालन एवं असुरों का विनाश करने वाले, नन्द महाराज की गायों की रक्षा करने वाले और माखनचुराने वाले नन्दनन्दन की जय हो। जिनके गोविन्द, माधव आदि अनेक नाम हैं, जो यमुना के किनारे नाना प्रकार की लीलाएँ करते हैं, गोपियों के वस्त्रों का हरण करने वाले हैं तथा उनके साथ रास रचाने वाले हैं। भक्तिविनोद वृन्दावन के उस श्रेष्ठ नट श्रीराधावल्लभजी (राधाजी के प्राणनाथ) के श्री चरणों में आश्रय ग्रहण करता है।

▲ ▲ ▲ ▲

जय राधामाधव जय कुन्जविहारी।
जय गोपीजनवल्लभ जय गिरिवरधारी॥ 1॥

जय यशोदानन्दन, जय व्रजजन-रन्जन
जय यमुनातीर - वनचारी॥ 2॥

श्रीराधामाधव की जय हो! कुञ्जविहारी की जय हो! गाोपीजन वल्लभ की जय हो! गिरिवरधारी की जय हो! यशोदानन्दन की जय हो ! ब्रजवासियों को आनन्द प्रदान करने वाले तथा यमुना के किनारे विचरण करनेवाले श्यामसुन्दर की जय हो!

▲ ▲ ▲ ▲

भजहुँ रे मन श्रीनन्दनन्दन, अभय चरणारविन्द रे।
दुर्लभ मानव जन्म सत्संगे, तरह ए भवसिन्धु रे॥ 1॥

शीत आतप वात बरिषण, ए दिन यामिनी जागि' रे।
विफले सेबिनु कृपण दुरजन, चपल सुखलव लागि' रे॥ 2॥

ए धन यौवन, पुत्र परिजन, इथे कि आछे परतीति रे।
कमलदल–जल, जीवन टलमल, भजहुँ हरिपद निति रे॥ 3॥

श्रवण, कीर्त्तन, स्मरण, वन्दन, पाद सेवन, दास्य रे।
पूजन, सखीजन, आत्मनिवेदन, गोविन्ददास अभिलाष रे॥ 4॥

हे मेरे मन! तुम यह दुर्लभ मानव–जन्म प्राप्तकर सत्संग में ब्रजेन्द्रनन्दन श्रीश्यामसुन्दर के अभय अर्थात् समस्त प्रकार के भयों का विनाश करनेवाले श्रीचरणकमलों का भजन करो तथा इस अथाह भवसागर को पार कर लो। अरे मन! तू सर्दी–गर्मी, आँधी–तूफान, बरसात में तथा दिन–रात जागकर इन संसारी दुर्जनों की सेवा जिस सुख प्राप्ति की आशा से कर रहा है वह क्षणभर का सुख तो चंचल अर्थात् अनित्य है। अरे! इस धन, यौवन, पुत्र तथा परिजनों की तो बात ही क्या, स्वयं तेरा जीवन ही तो कमल के पत्ते पर स्थित पानी की बूँद की भाँति टलमल–टलमल कर रहा है अर्थात् तेरा जीवन भी कब समाप्त हो जायेगा, यह भी निश्चित नहीं है। अत: तुम भगवान के श्रीचरणकमलों का भजन करो। गोविन्ददास श्रवण, कीर्तन, स्मरण, वन्दन, पादसेवन, दास्य, पूजन, सख्य और आत्मनिवेदनरूप नवधा भक्ति की अभिलाषा करता है।

श्रीशिक्षाष्टकम्

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्निनिर्वापणं
श्रेयःकैरवचन्द्रिकावितरणं विद्यावधूजीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्णसंकीर्तनम्॥ 1॥

नाम्नामकारि बहुधा निजसर्वशक्ति-
स्तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः।
एतादृशी तव कृपा भगवन्! ममाऽपि
दुर्दैवमीदृशमिहाजनि नानुरागः ॥ 2॥

नाम-माहात्म्य के विषय में, कलियुगपावनावतारी भगवान् श्रीचैतन्यमहाप्रभु की उक्ति तो सर्वोत्कृष्ट है, यथा — इस मायामय जगत् में श्रीकृष्णसंकीर्तन ही विजय को प्राप्त होता है 1. यही चित्तरूपी-दर्पण का शोधन करने वाला है, 2. संसारस्वरूप महादावानल को मिटाने वाला है, 3. कल्याणरूपिणी कुमुदिनी के विकास के लिये चन्द्रिका का विस्तार करने वाला है, 4. विद्यारूप-वधू का जीवनस्वरूप है, 5. आनन्दरूपी-समुद्र को बढ़ाने वाला है, 6. पद-पद पर पूर्ण-अमृत का आस्वाद कराने वाला है, एवं 7. बाहर-भीतर से सर्वतोभावेन अन्तःकरणपर्यन्त स्नान करा देता है, अर्थात् जीव के अन्तःकरण के समस्त पाप-ताप नष्ट कर देता है। इस प्रकार श्रीनामसंकीर्तन की सात भूमिकाएँ हैं। (1)

श्रीचैतन्यमहाप्रभु विषाद और दैन्य में कहते हैं कि — हे भगवन्! जीवों की भिन्न-भिन्न रुचियों को रखने के लिये ही तो, आपने अपने मुकुन्द, माधव, गोविन्द, दामोदर, घनश्याम, श्यामसुन्दर, यशोदानन्दन इत्यादि नाम रखे, और प्रत्येक नाम में अपनी संपूर्ण शक्ति भी स्थापित कर दी, एवं स्मरण के विषय में देश-काल-शुद्धि-अशुद्धि का भी नियम-बन्धन तोड़ दिया। हाय प्रभो! आपकी तो जीवों पर ऐसी अहैतुकी कृपादृष्टि-वृष्टि है, तथापि मेरा तो ऐसा दुर्भाग्य है कि आपके नाम में मेरा अनुराग उत्पन्न नहीं हुआ। (2)

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥ 3॥

न धनं न जनं न सुन्दरीं कवितां वा जगदीश! कामये।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे भवताद् भक्तिरहैतुकी त्वयि॥ 4॥

अयि नन्दतनूज! किंकरं पतितं मां विषमे भावांबुधौ।
कृपया तव पादपंकजस्थित-धूलीसदृशं विचिन्तय॥ 5॥

श्रीचैतन्यमहाप्रभु कहते हैं कि — अपने को तृण से भी नीचा समझकर, वृक्ष से भी सहनशील बनकर, स्वयं अमानी होकर, दूसरों को मान देनेवाला बनकर, सदैव श्रीहरिनामसंकीर्तन करता रहे।(3)

हे जगदीश! मैं, न धन चाहता हूँ, न जन चाहता हूँ, न सुन्दर कविता ही चाहता हूँ। चाहता हूँ केवल, हे प्राणेश्वर! आपके श्रीचरणकमलों में मेरी जन्म–जन्म में अहैतुकी भक्ति हो।(4)

हे नन्दनन्दन! वस्तुतः मैं आपका नित्यकिंकर हूँ, किन्तु अब निज कर्मदोष से विषम संसार–सागर में पड़ा हूँ। काम, क्रोध, मत्सरादि ग्राह मुझे निगलने को दौड़ रहे हैं। दुराशा–दुश्चिन्ता की तरंगों में इधर–उधर बह रहा हूँ। कुसंगरूप–प्रबलवायु और भी व्याकुल कर रहा है। ऐसी दशा में आपके बिना मेरा कोई आश्रय नहीं है। कर्म, ज्ञान, योग, तप आदिक तृण–गुच्छों के समान इधर–उधर तैर रहे हैं, पर क्या उनका आश्रय लेकर कोई संसार–सागर के पार जा सकता है? हाँ, कभी–कभी ऐसा तो होता है कि, संसार–सागर में डूबता हुआ जन, उनको भी पकड़ कर, अपने साथ डुबा लेता है। आपकी कृपा के बिना और कोई आश्रय नहीं हो सकता है। केवल आपका नाम ही ऐसी दृढ़ नौका है जिसके आश्रय से यह जीव, संसारसिन्धु को पार कर सकता है, पर उसका आश्रय मिले यह भी आपकी कृपा पर निर्भर है। आप शरणागतवत्सल हैं, मुझ अनाश्रित को, अपने चरणकमलों में संलग्न रजकण के समान जानें, आपकी करुणा के बिना, मुझ साधनशून्य का, संसार से निस्तार का कोई उपाय नहीं है।(5)

नयनं गलदश्रु-धारया वदनं गद्‌गदरुद्धया गिरा।
पुलकैर्निचितं वपुः कदा तव नामग्रहणे भविष्यति?॥ 6॥

युगायितं निमेषेण चक्षुषा प्रावृषायितम्।
शून्यायितं जगत् सर्वं गोविन्दविरहेण मे॥ 7॥

आश्लिष्य वा पादरतां पिनष्टु मामदर्शनान्मर्महतां करोतु वा।
यथा तथा वा विदधातु लंपटो मत्प्राणनाथस्तु स एव नाऽपरः॥ 8॥

(स्वयं भगवान श्री चैतन्य महाप्रभु जी के मुखकमल से प्रकटित)

हे प्रभो! आपका नाम ग्रहण करते समय, मेरे नयन अश्रुधारा से, मेरा मुख गद्‌गद वाणी से, और मेरा शरीर पुलकावलियों से कब व्याप्त होगा? (6)

हे सखि! गोविन्द के विरह से, मेरा निमेषमात्र काल भी युग के समान प्रतीत होता है, मेरी आँखों ने वर्षाऋतु का सा रूप धारण कर लिया है, और यह समस्त जगत् मुझे शून्य सा प्रतीत होता है।(7)

वह लंपट अपनी पादसेवा में आसक्त, मुझ दासी को प्रगाढ़ आलिंगन से भींचे, किंवा अपने दर्शन न देकर, मुझे मर्माहत करते हुए पीड़ा भी पहुँचाये, या अपनी जो अभिरुचि हो सो करे, परन्तु वही मेरा प्राणनाथ है। उनके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है।(8)

श्रील तीर्थ गोस्वामी–द्वादशकम्
स्तव–कुसुमांजली

असमाहिनिवास हि पाठ्यरसे, धनदातृ–शिरोमणि–पुत्रशुभम्।
शिवपूजन–साधन–शुद्धगुणं, प्रणमामि सदा गुरु–तीर्थपदम्॥ 1॥

जितकोमल–चम्पक–गौरतनुं, मृदुहास्यमुखोज्ज्वल–तुष्टहृदम्।
शम–दैन्यगुणं यतिवेषधरं, प्रणमामि सदा गुरु–तीर्थपदम्॥ 2॥

प्रभुमाधवदेवक - शिष्यवरं, गुरुगोष्ठि - समादर - दास्यपरम्।
सुजनादृत–शंसन–पूज्यपदं, प्रणमामि सदा गुरु–तीर्थपदम्॥ 3॥

जो दूरवर्ती आसाम प्रदेश में आविर्भूत होकर बाल्यकाल के विद्याध्ययन में आनन्दित हुए, जो परम दयालु एवं दाताशिरोमणि के पुत्र रूप में स्थित तथा जो वैष्णव राज श्री शिव की आराधना में रत होकर वैष्णव आराधना रूप शुद्ध सद्गुण में स्थित हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (1)

जिनके श्रीअंग चंपक पुष्प से भी अतिकोमल तथा गौर वर्ण से युक्त हैं तथा जिनका मुखारविन्द मृदुमन्द हास्य युक्त और उज्ज्वल है। जो सर्वदा सुप्रसन्न चित्त हैं तथा जिन्होंने शम एवं दैन्यादि गुणों के द्वारा सुशोभित होकर संन्यासी वेष धारण किया है, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (2)

जो श्रील भक्ति दयित माधव गोस्वामी महाराज जी के अति प्रियतम शिष्य हैं, गुरुवर्ग गोष्ठी में जो अति–सेवापरायण सेवक के रूप में बड़ा आदर पाते हैं और समस्त वैष्णव समाज में जो आदृत हैं, समस्त वैष्णवगण जिनकी जय की घोषणा करते हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (3)

विरहार्त्तगुरोर्गिरिराजतटे भृगुपातयिहा रघुनाथसमम् ।
हरिसेवक-पूरक-प्राणधृतं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 4॥

अनुकार्यरतं प्रभुपादगृहे गुरु - गौरजनेप्सित - कीर्तिधरम्।
विनयादिगुणैर्हरिबल्लभ तं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 5॥

गुरुगौरवभास्करदीप्तिनिभं, मठमन्दिररक्षणयत्नयुतम्।
परमार्थरसामृतपानरतं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 6॥

भृगुपात से शरीर छोड़ने की अभिलाषा से युक्त श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी की तरह जिन्होंने श्री गौरहरि के साक्षात् प्रकाश विग्रह अपने श्री गुरुदेव श्रील माधव गोस्वामी महाराज के अन्तर्धान होने की आशंका से पीड़ित होकर एवं विरहतप्त आर्त्त हृदय से युक्त होकर श्री गिरिराज गोवर्धन का आश्रय ग्रहण किया तथा जो श्री गौरहरि एवं श्रील गुरुदेव के मनोऽभीष्ट को पूर्ण करने की इच्छा से ही प्राण धारण किये हुए हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (4)

जिन्होंने अपने गुरुदेव श्रील माधव गोस्वामी महाराज जी के द्वारा प्रारम्भ किये गये श्रील प्रभुपाद जी की आविर्भाव स्थली के सेवा-संस्कार आदि कार्य को श्रील गुरुदेव एवं महाप्रभु के भक्तों की अन्तरंग अभिलाषा जानकर पूर्ण किया है और विशेष कीर्ति को प्राप्त किया है तथा जो अपने विनयादि गुणों के द्वारा श्री हरि के अतिशय प्रिय हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (5)

श्रील गुरुदेव की महिमा एवं वैभव को प्रकाशित कर जो स्वयं श्रील गुरुदेव के गौरव स्वरूप हैं, जिनकी महिमा सूर्य के समान देदीप्यमान है, जो मठ-मन्दिर (परमार्थ अनुशीलन केन्द्र) की रक्षा एवं व्यवस्थादि के लिये सदैव यत्नशील हैं तथा जो सदैव परमार्थ रसामृत का पान करनेवाले हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (6)

हरिकीर्त्तन - नर्त्तन - मत्तमतिं, ब्रजभावविभावित गौरहृदम्।
गिरिराधन-मोदन-पर्वयुतं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 7॥

प्रभुमाधवमीप्सित कृत्यकृतं, चरणांकितगौरपदं सुकृतम्।
कुमुदाख्यवनासेवनं सुभगं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 8॥

रघु-रूपक-भक्तिविनोद पथं, भजनोर्ज्जित-नैष्ठिक-शन्दपदम्।
तरुधिकृत-शोभन-धैर्यधरं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 9॥

जो श्री गौरहरि के द्वारा प्रकाशित श्री हरिसंकीर्तन में नृत्य-परायण होकर उन्मत्त चित्त हैं, श्री गौरहरि को अपने हृदय में धारण कर ब्रजभाव में भावित हैं तथा भगवत् आराधना से युक्त पर्वादि में अन्नकूट आदि महोत्सव को शास्त्रविचार से अनुष्ठित कर समस्त भक्तों को आनन्दित करने वाले हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (7)

जिनके द्वारा अपने श्रील गुरुदेव की समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण हुई हैं तथा इसी के अन्तर्गत जिन्होंने श्री ब्रजभूमि स्थित श्री कुमुदवन में श्री गौरांग महाप्रभु की पादपीठ-स्थापना-सेवा द्वारा परम सौभाग्य को प्राप्त किया है, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (8)

जिन्होंने श्रील रूप गोस्वामी, रघुनाथ दास गोस्वामी एवं ठाकुर भक्तिविनोद के पथ का अवलम्बन (अनुगमन) करते हुए स्वयं उर्जित भजन का आश्रय ग्रहण किया है, नैष्ठिक भजनशिक्षा का आचरण एवं प्रचार कर जिन्होंने समस्त जगत का कल्याण-विधान किया है तथा वृक्ष से भी अधिक सहनशील होकर शोभायमान हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (9)

मुखपद्मपुरीवचनाधरणं, तव पश्चिमदेश - शुभं - गमनम्।
प्रतिपादन-गौरकथाममलां, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 10॥

रघुनाथसुजन्मतिथौ नवमीं, सतिथौ जननं गुरु-तीर्थवरम्।
शुभदं शमदं रसदं सदयं, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 11॥

यति-तीर्थ-गुरो शिवकल्पतरो कृपया क्षमतां वृजिनं सततम्।
शरणागतपालकपादविभो, प्रणमामि सदा गुरु-तीर्थपदम्॥ 12॥

(त्रिदण्डिस्वामी भक्ति–उज्ज्वल मुनि महाराज)

जो ॐ विष्णुपाद श्रील भक्ति प्रमोद पुरी गोस्वामी महाराज जी की आदेश–वाणी को शिरोधार्य कर पाश्चात्य देशों में जीवकल्याण हेतु शुभ गमन करते हुए श्री गौरांग महाप्रभु के अमलप्रेम (प्रेम धर्म की कथा) का प्रचार प्रसार कर जगत का मंगल विधान कर रहे हैं, ऐसे गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (10)

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्री रामचन्द्र के अवतरण की चैत्र मास की शुक्ला नवमी तिथि ही जिनकी आविर्भाव तिथि है, ऐसी सर्वमंगलप्रद् भजन की इच्छा से युक्त जनों के लिये हरिनिष्ठा देने वाली अर्थात् शमदा तथा सुखप्रदा एवं सर्वदयाप्रदा तिथि में आविर्भूत होने वाले गुरुदेव श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज जी के चरणकमलों में मैं प्रणाम करता हूँ। (11)

हे संन्यासी स्वरूप श्रील तीर्थ गोस्वामी महाराज! हे मंगलमय कल्पतरु! इस स्तुति के अन्त में मेरी आपसे विनम्र प्रार्थना है कि आप कृपाकर सदैव के लिये मेरे समस्त अपराधों को क्षमा करें। हे विभु! आप तो अपने शरणागत जनों का पालन करने में पूर्ण समर्थ हैं, अत: आप अपनी कृपा शक्ति के द्वारा शीघ्र की नित्यकाल के लिये मुझे श्री गुरु–चरण–कमलों में अनन्य भक्ति प्रदान करें। (12)

▲ ▲ ▲ ▲

श्री श्रील माधवगोस्वामी–पादपद्मस्तवकैकादशकम्

शतसज्जन वन्दित पादयुगं, युगधर्म प्रचारक धूर्यजनं।
जनतासु सुभाषण शक्तिधरं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 1॥

अतिदीर्घ मनोहर गौरतनुं, मृदुमंद सुहास्य युतास्य धरं।
उरुलम्बित हस्तसु रूपयुतं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 2॥

शिशुकालसु पाठ्यसु यत्न परं, जननी सविधे श्रुत शास्त्रमतं।
परमार्थकृते परिहीन गृहं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 3॥

प्रभुपादपदेऽर्पित देह मतिं, गुरुकार्य कृते यति वेश धरं।
प्रणतेषु सदाहितकारी वरं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 4॥

जिनके चरणयुगल सैकड़ों सज्जनों के द्वारा वन्दित हैं, जो युगधर्म के प्रचारक जनों में अग्रगण्य हैं, जो जनसमूह के बीच सुन्दर–भाषण की शक्ति रखते हैं, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (1)

जिनका शरीर गौरवर्ण का विशाल तथा मनोहर है, जो मन्द–मन्द मुस्कान से हास्य को बिखेरते हुए मुख को धारण करने वाले हैं। जिनकी भुजाएं जांघों तक लम्बी हैं, तथा सुन्दरता से युक्त हैं, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (2)

जो अपने बाल्यकाल से ही पढ़ने में तल्लीनता से युक्त थे, माता जी के पास ही जिन्होंने शास्त्रों के मतों को ग्रहण किया। परमार्थ के लिए जिन्होंने घर का परित्याग कर दिया था, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (3)

प्रभुपाद के चरणों में जिन्होंने अपनी बुद्धि तथा शरीर को अर्पण कर दिया; जिन्होंने गुरु के कार्य के लिए यति (संन्यासी) का वेश धारण किया और जो शरण में आए हुए जनों के हित करने में तत्पर रहते हैं, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (4)

प्रभुपादमनोमत कार्यरतं, सुसमादृत भक्तिविनोद पदं।
रघुरूप सनातन लब्धपथं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 5॥

तरुधिकृत मार्जन शक्ति धरं, लघु सेवन मात्रकहृष्ट हृदं।
हरिकीर्तन सन्तत दत्त मतिं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 6॥

मठमन्दिर निर्मित कीर्तिधरं, गुरुगौर कथासु च नित्य रतं।
स्वयमाचरणे पर धैर्य परं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 7॥

करुणार्द्र हृदाहृत विष्णु जनं, जननन्दित वन्दित कृत्य कुलं।
निज देश-विदेश सुवन्दय पदं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 8॥

प्रभुपाद के मनोऽनुकूल भक्ति-सिद्धांत के प्रचार में जो संलग्न रहे हैं, अत्यन्त आदरणीय श्रीभक्ति विनोद ठाकुर के चरणों का जिन्होंने अच्छी तरह से सम्मान किया और जिन्होंने श्रीरघुनाथदास गोस्वामी, श्रीरूप गोस्वामी व श्री सनातन गोस्वामी द्वारा बताये पथ का अनुसरण किया, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (5)

जो सहनशीलता की शक्ति को धारण करने में वृक्ष से भी बढ़ कर हैं। लघु प्राणियों के सेवनमात्र से जिनका हृदय प्रसन्न रहता है, जो हरिकीर्तन में सदा व्यस्त रहते हैं, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (6)

जो मठमन्दिर आदि के निर्माण की कीर्ति धारण करने वाले हैं; जो गुरु तथा गौरांग महाप्रभु की कथाओं में नित्य लगे रहने वाले हैं; जो स्वयं धर्माचरण तथा परमधैर्य को धारण करने वाले हैं; ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (7)

जो करुणा के द्वारा आर्द्र हृदय से विष्णु-भक्त को बुलाने वाले हैं; जिनका कुल प्रशंसित तथा वन्दित कृत्यों के द्वारा प्रख्यात है ; देश तथा विदेश में जिनके चरणों की वन्दना की जाती है, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (8)

गुरु पंक्ति सुरक्षण यत्न परं, गुरुसोदरगौरव दान रतं।
अनुरक्तसु सेवक वाक्य धरं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 9॥

भगवद्भजनेह्यनुराग परं, व्रत पालन कर्म सुदाढ्य युतं।
प्रभुपाद पदोद्दृत कारि जनं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 10॥

कृपयाक्षमतामपराधि जनं, कलुषायुत सक्तसुदीन नरं।
सुपथे परिचालय सर्व दिनं, प्रणमामि च माधव देव पदम्॥ 11॥

(पूज्यपाद श्री विभुपद पण्डा)

गुरुओं की गरिमा को, गुरुओं की पंक्ति में रहकर जो सुरक्षित रखने का प्रयत्न करते रहते हैं; जो गुरु–भाईयों को गौरव प्रदान करने में सदा लगे रहते हैं; जो अपने अनुरक्तों तथा श्रेष्ठ सेवकों के लिए वाक्यों को धारण करने वाले हैं; ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (9)

जो भगवद्–भजन में सदा अनुराग करने वाले हैं, जो अपने नियमों के पालन में सदा दृढ़ता का आचरण करने वाले हैं, प्रभुपाद के दर्शाए मार्ग से जिन्होंने कोटि–कोटि व्यक्तियों का उद्धार किया है; ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (10)

हम अपराधी जनों को क्षमा प्रदान करने की कृपा कीजिए। हम पापों से युक्त संसार में आसक्त दीन जन हैं, हमें सदा–सर्वदा श्रेष्ठ मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान करने की कृपा करें, ऐसे श्रीमाधवदेव के चरणों में मैं प्रणाम करता हूँ। (11)

श्रीप्रभुपादपद्मस्तवकः

सुजनार्बुदराधितपादयुगं युगधर्मधुरन्धर - पात्रवरम्।
वरदाभयदायक-पूज्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 1॥

भजनोर्जितसज्जनसंघपतिं पतिताधिककारुणिकैकगतिम्।
गतिवञ्चितवञ्चकाचिन्त्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 2॥

अतिकोमलकाञ्चनदीर्घतनुं तनुनिन्दितहेममृणालमदम्।
मदनार्बुदवन्दितचन्द्रपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 3॥

निजसेवकतारकरञ्जिविधुं विधुताहित - हुंकृतसिंहवरम्।
वरणागतबालिश - शन्दपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 4॥

मैं कोटि–कोटि सज्जनों के द्वारा आराधित, कृष्ण–संकीर्तन युग–धर्म के संस्थापक, विश्ववैष्णव राजसभा के पात्रराज अर्थात् अधिकारीवर्ग में श्रेष्ठतम, निखिल जीवों के भय दूर करनेवालों की भी मनोकामना पूर्ण करनेवाले, सर्वपूज्य उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में मैं सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ।(1)

जो भजन–सम्पन्न सज्जन–वृन्दों के अधिपति हैं, जो पतितजनों के प्रति अति करुणामय तथा उनकी एकमात्र गति हैं एवं जो वञ्चकों के भी वञ्चक हैं, मैं उन श्रीलप्रभुपाद के अचिन्त्य चरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ।(2)

अतिकोमल काञ्चनवर्णवाले सुदीर्घ तनु , जिसके द्वारा स्वर्णमय कमलनालों की मत्तता (सौन्दर्य)भी निन्दित होती है, जिन नख–चन्द्रों की वन्दना कोटि–कोटि कामदेव करते हैं, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ। (3)

जो नक्षत्र–मण्डल को रंजित करने वाले चन्द्र की तरह सेवक–मण्डली द्वारा परिवेष्टित होकर उनके चित्त को प्रफुल्लित रखते हैं, भक्ति–विद्वेषीजन जिनके सिंहनाद से भयभीत रहते हैं एवं निरीह व्यक्ति जिनके चरणकमलों का आश्रय ग्रहणकर परम–कल्याण लाभ करते हैं, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(4)

विपुलीकृतवैभवगौरभुवं भुवनेषु विकीर्तित - गौरदयम्।
दयनीयगणार्पित - गौरपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 5॥
चिरगौरजनाश्रयविश्वगुरुं गुरुगौरकिशोरकदास्यपरम्।
परमादृतभक्तिविनोदपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 6॥
रघुरूपसनातनकीर्तिधरं धरणीतलकीर्तितजीवकविम्।
कविराज-नरोत्तमसख्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 7॥
कृपया हरिकीर्तनमूर्तिधरं धरणीभरहारक - गौरजनम्।
जनकाधिकवत्सलस्निग्धपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 8॥

जिन्होंने श्रीगौरधामका (श्रीनवद्वीपधामका) विपुल ऐश्वर्य प्रकटित किया है, जिन्होंने श्रीगौरांगदेवकी महा–उदारता की कथाओं का सम्पूर्ण विश्व में प्रचार किया है एवं जिन्होंने अपने कृपापात्रों के हृदय में श्रीगौरपादपद्म की स्थापना की है, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(5)

जो चैतन्यमहाप्रभु के आश्रितजनों के नित्य–आश्रयस्थल और जगदगुरु हैं, जो अपने गुरु, श्रीगौरकिशोर के सेवापरायण हैं एवं जो श्रीभक्तिविनोद ठाकुर के सम्बन्धमात्र से ही परम आदरयुक्त हैं, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(6)

जो श्रीरूप, सनातन और रघुनाथ के कीर्तिरूपी झण्डे का उत्तोलनकर विराजमान हैं, अनेक लोग इस धरणीतलपर जिन्हें पाण्डित्य–प्रतिभामय जीव गोस्वामी से अभिन्न–तनु कहकर उनकी प्रशंसा किया करते हैं एवं जिनका श्रील कृष्णदास कविराज तथा ठाकुर नरोत्तम से सख्यभाव है, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(7)

जीवों के प्रति असीम कृपाकर जो मूर्तिमान हरिकीर्त्तनरूपमें प्रकाशित हैं, जो धरणीके पापभारको दूर करने वाले गौरपार्षद हैं एवं जो जीवों के प्रति पिता से भी अधिक वात्सल्य के सुकोमल आकरस्वरूप हैं, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(8)

शरणागतकिंकरकल्पतरुं तरुधिक्कृतधीरवदान्यवरम्।
वरदेन्द्रगणार्चितदिव्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 9॥

परहंसवरं परमार्थपतिं पतितोद्धरणे कृतवेशयतिम्।
यतिराजगणैः परिसेव्यपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 10॥

वृषभानुसुतादयितानुचरं चरणाश्रित - रेणुधरस्तमहम्।
महदद्भुतपावनशक्तिपदं प्रणमामि सदा प्रभुपादपदम्॥ 11॥

(पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्री श्रीमद् भक्ति रक्षक श्रीधर महाराज)

शरणागत किंकरों के लिए (अभीष्ट प्रदान करने में)जो कल्पतरु के समान हैं, जिनकी सहिष्णुता और उदारता वृक्षों को भी लज्जित करती है एवं वरदाताओं में श्रेष्ठ व्यक्ति भी जिनके दिव्य श्रीचरणकमलों की पूजा किया करते हैं, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(9)

जो परमहंसकुल के चूड़ामणि हैं, जो परम पुरुषार्थ श्रीकृष्णप्रेम–सम्पत्ति के मालिक हैं, पतित जीवों के उद्धार के लिए जिन्होंने संन्यासीका वेश धारण किया है एवं श्रेष्ठ त्रिदण्डि संन्यासियों का समूह जिनके पादपद्मों की सेवा करता है, मैं उन श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में सदा – सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(10)

जो वृषभानुनन्दिनीके परमप्रिय अनुचर हैं, जिनकी चरण–रजको मैं अपने मस्तक पर धारण करने के सौभाग्य के लिए अभिमान करता हूँ, उन अद्भुत पावनीशक्तिसम्पन्न श्रील प्रभुपाद के श्रीचरणकमलों में मैं सदा–सर्वदा प्रणाम करता हूँ ।(11)

श्रीगौरकिशोराष्टकम्

श्रीगौरधामाश्रितशुद्धभक्तं, रूपानुगाद्यं निरवद्यरूपम् ।
वैराग्यधर्मोज्ज्वलविग्रहं तं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 1 ॥

असत्प्रसंगं परिहाय नित्यं, गौरांग - सेवाव्रत - मग्नचित्तम् ।
गौड़-व्रजाभेद-विशिष्ट-प्रज्ञं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 2 ॥

श्रीधाम-मायापुर-दिव्य-गूढ़,-माहात्म्य-गीतोन्मुखरं वरेण्यम्।
धन्यं महाभागवताग्रगण्यं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 3 ॥

पूतावधूतव्रज - शीर्षरत्नं, श्रीराधिकाकृष्ण - निगूढ़भक्तम् ।
सदा व्रजावेश-सराग-चेष्टं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 4 ॥

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जो श्रीगौरधाम का आश्रय करनेवाले विशुद्धभक्त थे, श्रीरूप गोस्वामी के अनुगामियों में प्रधान थे, एवं जिनका रूप प्रशंसनीय था, तथा जिनका श्रीविग्रह उत्कट वैराग्यधर्म से समुज्ज्वल था।(1)

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जिनका चित्त असत्प्रसंगों को छोड़कर, नित्य श्रीगौरांगदेव की सेवारूप–व्रत में ही निमग्न रहता था, एवं जो गौड़मण्डल एवं व्रजमण्डल में विशिष्ट अभेदबुद्धि से युक्त थे।(2)

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जो श्रीधाम–मायापुर (श्रीगौरांग महाप्रभु की जन्मभूमि)के दिव्य एवं गूढ़ माहात्म्य के गायन में विशिष्ट–वक्ता थे, अत: भक्तों के वर्णन करने योग्य थे, तथा जो परम–प्रशंसनीय एवं भगवद्–भक्तों के अग्रगण्य थे।(3)

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जो परम–पवित्र अवधूतकुल के शिरोमणि थे, श्रीराधा–कृष्ण के गुप्तभक्त थे, तथा सदैव व्रज के आवेश के कारण रागानुगा–भक्ति की चेष्टा में ही लगे रहते थे।(4)

शोकास्पदातीत - प्रभाव - रम्यं, मूढ़ैरवेद्यं प्रणताभिगम्यम् ।
नित्यानुभूताच्युत - सद्विलासं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 5 ॥

कापट्यधर्मान्वित-चण्डदण्ड, विधायकं सज्जन-संग-रंगम् ।
श्रीकृष्णचैतन्यपदाब्जभृंगं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 6 ॥

दामोदरोत्थानदिने प्रधाने, क्षेत्रे पवित्रे कुलियाभिधाने ।
प्रपञ्चलीला-परिहारवन्तं, वन्दे प्रभुं गौरकिशोरसंज्ञम् ॥ 7 ॥

तव हि दयितदासे सत्यसूर्य-प्रकाशे, जगति दुरितनाशे प्रोद्यते चिद्विलासे ।
वयमनुगतभृत्याः पादपद्मं प्रपन्ना, अनुदिनमनुकम्पां प्रार्थयामो नगण्याः ॥ 8 ॥

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जो लोकोत्तर प्रभाव से रमणीय थे, अतएव मूर्ख लोग जिनके स्वरूप को नहीं जान पाते थे, एवं जो शरणागत–भक्तों के लिये सर्वतोभाव से प्राप्य थे, तथा जो श्रीकृष्ण के सुन्दर रास–विलास आदि का नित्य अनुभव करते रहते थे।(5)

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जो कपटमय–धर्म से युक्त व्यक्तियों को प्रचण्ड दण्ड देनेवाले थे, एवं सज्जनों के संग में ही रँगे रहते थे, तथा श्रीकृष्ण–चैतन्य–पदारविन्दों के अनुरक्त–भौंरे ही थे।(6)

मैं, परम प्रसिद्ध उन श्रीगौरकिशोर–नामक प्रभु की वन्दना करता हूँ कि, जिन्होंने श्रीहरि की देवोत्थानी–एकादशी के दिन कुलिया (कोलद्वीप अथवा वर्तमान शहर नवद्वीप) नामक प्रधान एवं पवित्र–क्षेत्र में अपनी प्रपञ्च–लीला का परित्याग किया था।(7)

हे परमगुरुदेव ! हम सब भक्त तो यद्यपि किसी गिनती में आने लायक नहीं हैं, तो भी आपके प्रधान–शिष्य उन श्रीवार्षभानवीदयितदास (ॐ विष्णुपाद परमहंस 108 श्री श्रीमद् भक्ति सिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपाद) के अनुगत सेवक हैं कि, जो श्रीप्रभुपाद सत्य वस्तु के प्रकाश के लिये सूर्य के समान हैं, एवं संसार में जो पाप नाशक एवं चिद्–विलास में ही तत्पर हैं; अतः आपके चरणारविन्दों के शरणागत हैं; प्रतिदिन आपकी अनुकम्पा की ही प्रार्थना करते रहते हैं।(8)

श्रीषड्गोस्वाम्यष्टकम्

कृष्णोत्कीर्तन - गान - नर्त्तन - परौ प्रेमामृताम्भोनिधि
धीराधीरजन - प्रियौ प्रियकरौ निर्मत्सरौ पूजितौ ।
श्रीचैतन्य - कृपाभरौ भुवि भुवो भारावहन्तारकौ
वन्दे रूप-सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ ॥ 1॥

नानाशास्त्र - विचारणैक-निपुणौ सद्धर्म-संस्थापकौ
लोकानां हितकारिणौ त्रिभुवने मान्यौ शरण्याकरौ।
राधाकृष्ण - पदारविन्द - भजनानन्देन मत्तालिकौ
वन्दे रूप - सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ ॥ 2॥

श्रीगौरांग - गुणानुवर्णन-विधौ श्रद्धा-समृद्धयन्वितौ
पापोत्ताप - निकृन्तनौ तनुभृतां गोविन्द-गानामृतैः।
आनन्दाम्बुधि-वर्धनैक-निपुणौ कैवल्य-निस्तारकौ
वन्दे रूप - सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ ॥ 3॥

मैं, श्रीरूप, सनातन, रघुनाथभट्ट, रघुनाथदास, श्रीजीव एवं गोपालभट्ट नामक इन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो श्रीकृष्ण के नाम-रूप-गुण-लीलाओं के कीर्तन, गायन, एवं नृत्यपरायण थे; प्रेमामृत के समुद्रस्वरूप थे, विद्वान् एवं अविद्वान्रूप सर्वसाधारण जनमात्र के प्रिय थे, तथा सभी के प्रियकार्य करनेवाले थे, मात्सर्यरहित एवं सर्वलोक पूजित थे, श्रीचैतन्यदेव की अतिशय कृपा से युक्त थे, भूतल में भक्ति का विस्तार करके भूमि का भार उतारनेवाले थे।(1)

मैं, श्रीरूप-सनातनादि उन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो अनेक शास्त्रों के गूढतात्पर्य विचार करने में परमनिपुण थे, भक्तिरूप-परमधर्म के संस्थापक थे, जनमात्र के परमहितैषी थे, तीनों लोकों में माननीय थे, शरणागतवत्सल थे, एवं श्रीराधाकृष्ण के पदारविन्द के भजनरूप आनन्द से मत्तमधुप के समान थे।(2)

मैं, श्रीरूप-सनातनादि उन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो श्रीगौरांगदेव के गुणानुवाद की विधि में श्रद्धारूप-सम्पत्ति से युक्त थे, श्रीकृष्ण के गुणगानरूप-अमृत की वृष्टि के द्वारा प्राणीमात्र के पाप-ताप को दूर करनेवाले थे, तथा आनन्दरूप-समुद्र को बढ़ाने में परमकुशल थे, भक्ति का रहस्य समझा कर, मुक्ति की भी मुक्ति करने वाले थे।(3)

त्यक्त्वा तूर्णमशेष-मण्डलपति-श्रेणीं सदा तुच्छवत्
भूत्वा दीन-गणेशकौ करुणया कौपीन-कन्थाश्रितौ।
गोपीभाव - रसामृताब्धि-लहरी-कल्लोल-मग्नौ मुहु-
र्वन्दे रूप - सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ ॥ 4 ॥

कूजत्-कोकिल-हंस-सारस-गणाकीर्णे मयूराकुले
नानारत्न - निबद्ध - मूल - विटप -श्रीयुक्त-वृन्दावने।
राधाकृष्णमहर्निशं प्रभजतौ जीवार्थदौ यौ मुदा
वन्दे रूप - सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ ॥ 5 ॥

संख्यापूर्वक - नामगाननतिभिः कालावसानीकृतौ
निद्राहार-विहारकादि-विजितौ चात्यन्त-दीनौ च यौ।
राधाकृष्ण - गुणस्मृतेर्मधुरिमानन्देन सम्मोहितौ
वन्दे रूप-सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव - गोपालकौ ॥ 6 ॥

मैं, श्रीरूप–सनातनादि उन छः गोस्वामियों की बारंबार वन्दना करता हूँ कि, जो समस्त मण्डलों के आधिपत्य की श्रेणी को, लोकोत्तर वैराग्य से शीघ्र ही तुच्छ की तरह सदा कि लिये छोड़कर, कृपापूर्वक अतिशय दीन होकर, कौपीन एवं कंथा (गूदड़ी) को धारण करनेवाले थे, तथा गोपीभावरूप रसामृतसागर की तरंगों में आनन्दपूर्वक निमग्न रहते थे।(4)

मैं, श्रीरूप–सनातनादि उन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो कलरव करनेवाले कोकिल–हंस–सारस आदि पक्षियों की श्रेणी से व्याप्त, एवं मयूरों के केकारव से आकुल, तथा अनेक प्रकार के रत्नों से निबद्ध मूलवाले वृक्षों के द्वारा शोभायमान श्रीवृन्दावन में, रात–दिन श्रीराधा–कृष्ण का भजन करते रहते थे, तथा जीवमात्र के लिये हर्षपूर्वक भक्तिरूप परम–पुरुषार्थ को देनेवाले थे ।(5)

मैं, श्रीरूप–सनातनादि उन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो अपने समय को संख्यापूर्वक नाम–जप, नामसंकीर्तन, एवं संख्यापूर्वक प्रणाम आदि के द्वारा व्यतीत करते थे; जिन्होंने निद्रा–आहार–विहार आदि पर

राधाकुण्ड - तटे कलिन्द - तनया - तीरे च वंशीवटे
प्रेमोन्माद - वशादशेष - दशया ग्रस्तौ प्रमत्तौ सदा।
गायन्तौ च कदा हरेर्गुणवरं भावाभिभूतौ मुदा
वन्दे रूप - सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव-गोपालकौ ॥ 7 ॥

हे राधे व्रजदेविके च ललिते हे नन्दसूनो कुतः
श्रीगोवर्धन - कल्पपादप - तले कालिन्दिवन्ये कुतः।
घोषन्ताविति सर्वतो व्रजपुरे खेदेर्महाविह्वलौ
वन्दे रूप - सनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव - गोपालकौ ॥ 8 ॥

(श्री श्रीनिवास आचार्य विरचित)

विजय पा ली थी, एवं जो अपने को अत्यन्त दीन मानते थे, तथा श्रीराधाकृष्ण के गुणों की स्मृति से प्राप्त माधुर्यमय आनन्द के द्वारा विमुग्ध रहते थे।(6)

मैं, श्रीरूप–सनातनादि उन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो प्रेमोन्माद के वशीभूत होकर, विरह की समस्त दशाओं के द्वारा ग्रस्त होकर, प्रमादी की भाँति, कभी राधाकुण्ड के तटपर, कभी यमुना के तटपर, एवं कभी वंशीवटपर सदैव घूमते रहते थे; और कभी–कभी श्रीहरि के गुणश्रेष्ठों को हर्षपूर्वक गाते हुए भाव में विभोर रहते थे।(7)

मैं, श्रीरूप–सनातनादि उन छः गोस्वामियों की वन्दना करता हूँ कि, जो 'हे व्रज की पूजनीय देवि! राधिके ! आप कहाँ हो? हे ललिते! आप कहाँ हो? हे व्रजराजकुमार! आप कहाँ हो? श्रीगोवर्धन के कल्पवृक्षों के नीचे बैठे हो, अथवा कालिन्दी के कमनीय कूल पर विराजमान वन–समूह में भ्रमण कर रहे हो क्या?' इस प्रकार पुकारते हुए विरह–जनित पीड़ाओं से महान् विह्वल होकर, व्रजमण्डल में चारों ओर भ्रमण करते रहते थे।(8)

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीनित्यानन्दाष्टकम्

शरच्चन्द्र - भ्रान्तिं स्फुरदमल-कान्तिं गजगतिं
हरि - प्रेमोन्मत्तं धृत-परम-सऽत्वं स्मितमुखम्।
सदा घूर्णन्नेत्रं कर - कलित-वेत्रं कलिभिदं
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 1॥

रसानामागारं स्वजनगण - सर्वस्वमतुलं
तदीयैक - प्राणप्रतिम-वसुधा-जाह्नव-पतिम।
सदा प्रेमोन्मादं परमविदितं मन्द - मनसां
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 2॥

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, जिनका मुखमण्डल शरत्कालीन चन्द्रमा की शोभा को तिरस्कृत कर देता है, जिनकी निर्मलकान्ति स्फूर्ति पा रही है, जिनकी गति मत्तगजेन्द्र के समान है, जो श्रीकृष्णप्रेम में सदैव उन्मत्त बने रहते हैं, जो विशुद्ध सत्वमय श्रीविग्रह को धारण करने वाले हैं, जिनका श्रीमुख मन्दमुस्कान से युक्त है, एवं जिनके दोनों नेत्र श्रीहरि के प्रेम से सदा घूमते रहते हैं, जिनके हस्तकमल में वेत्र शोभा पा रहा है, और जो नाम–संकीर्तन के द्वारा कलिकाल का भेदन करनेवाले हैं।(1)

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, जो सभी रसों के आधार हैं, अपने भक्तजनों के सर्वस्व हैं, अनुपमेय हैं; अपने प्राणों के समान प्रियतमा वसुधा एवं जाह्नवादेवी के पति हैं, श्रीकृष्ण–प्रेम में जो सदैव उन्मत्त बने रहते हैं, एवं जो केवल मन्दबुद्धिवाले व्यक्तियों के द्वारा अज्ञात हैं।(2)

शचीसूनु - प्रेष्ठं निखिल - जगदिष्टं सुखमयं
कलौ मज्जज्जीवोद्धरण-करणोद्दाम-करुणम्।
हरेराख्यानाद्वा भव - जलधि - गर्वोन्नति-हरं
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 3॥

अये भ्रातर्नृणां कलि-कलुषिणां किन्तु भविता
तथा प्रायश्चितं रचय यदनायासत इमे।
व्रजन्ति त्वामित्थं सह भगवता मंत्रयति यो
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 4॥

यथेष्टं रे भ्रातः कुरु हरिहरि-ध्वानमनिशं
ततो वः संसाराम्बुधि-तरण-दायो मयि लगेत्।
इदं बाहु - स्फोटैरटति रटयन् यः प्रतिगृहं
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 5॥

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, श्रीशचीनन्दन के अतिशय प्यारे हैं, समस्त जगत् के इष्ट हैं, सुखमय स्वरूप हैं, कलियुग में डूबते हुए जीवों का उद्धार करने के लिए अपार करुणा से युक्त हैं, और श्रीहरिनाम–संकीर्तन के द्वारा संसार–सागर के अहंकार की उन्नति को हरनेवाले हैं।(3)

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, एवं भगवान् श्रीकृष्णचैतन्यदेव के साथ इस प्रकार का विचार करते रहते हैं कि, हे भैया गौरांग! कलिकाल से कलुषित जीवों की क्या गति होगी, तथा कौनसा प्रायश्चित होगा? उसकी रचना कीजिये कि, जिससे ये कलिकाल के जीव अनायास ही आपको प्राप्त कर लें।(4)

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, तथा जो गौड़देश में प्रत्येक घर के दरवाजे पर अपनी भुजाओं को फैलाकर, हे भैयाओ! तुम सब मिलकर स्वेच्छापूर्वक निरन्तर श्रीहरिनाम की ध्वनि करते रहो, ऐसा करने से तुम सबका संसार–सागर से तरने का 'कर' मेरे ऊपर लग जायगा, इस प्रकार उच्चारण करते हुए घूमते रहते हैं। (5)

बलात् संसाराम्भोनिधि-हरण-कुम्भोद्भवमहो
सतां श्रेयः-सिन्धून्नति-कुमुद-बन्धुं समुदितम्।
खलश्रेणी - स्फूर्जत्तिमिर - हर-सूर्य-प्रभमहं
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 6॥

नटन्तं गायन्तं हरिमनुवदन्तं पथि पथि
व्रजन्तं पश्यन्तं स्वमपि नदयन्तं जनगणम्।
प्रकुर्वन्तं सन्तं सकरुण - दृगन्तं प्रकलनाद्
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 7॥

सुबिभ्राणं भ्रातुः कर - सरसिजं कोमलतरं
मिथो वक्त्रालोकोच्छलित-परमानन्द हृदयम्।
भ्रमन्तं माधुर्यैरहह ! मदयन्तं पुरजनान्
भजे नित्यानन्दं भजन-तरु-कन्दं निरवधि॥ 8॥

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, एवं जो हठपूर्वक संसार–सागर का शोषण करने के लिये अगस्त्यस्वरूप हैं, तथा सज्जनों के कल्याणरूप–समुद्र की उन्नति के लिये प्रगट पूर्णचन्द्रस्वरूप हैं, और खलश्रेणी के स्फूर्ति पाते हुए अज्ञानरूपी–अन्धकार को हरने के लिये सूर्यस्वरूप हैं।(6)

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, एवं जो गौड़देश के प्रत्येक मार्ग में नाचते–गाते हरि बोल, हरि बोल की ध्वनि करते हुए भ्रमण करते रहते हैं, तथा अपने ऊपर दया न करनेवाले जनसमुदाय को भी प्रेमपूर्वक देखकर, करुणायुक्त कटाक्षवाले बनाते हैं।(7)

मैं, उन श्रीनित्यानन्द प्रभु का निरन्तर भजन करता हूँ कि, जो श्रीकृष्णभक्तिरूप–वृक्ष के मूलस्वरूप हैं, तथा जो अपने भैया श्रीगौरांगमहाप्रभु के परम कोमल कर–कमल को धारण करनेवाले हैं, तथा परस्पर श्रीमुख के दर्शन से जिनके हृदय का परमानन्द उछल रहा है, और जो अपने माधुर्य से पुरवासीजनों को हर्षित करते हुए भ्रमण करते रहते हैं।(8)

रसानामाधारं रसिक - वर - सद्वैष्णव - धनं
रसागारं सारं पतित - तति-तारं स्मरणतः।
परं नित्यानन्दाष्टकमिदमपूर्वं पठति य-
स्तदंघ्रिद्वन्द्वाब्जं स्फुरतु नितरां तस्य हृदये॥ ९॥

(श्री श्रील वृन्दावन दास ठाकुर द्वारा विरचित)

श्रीनित्यानन्द प्रभु के इस अपूर्व अष्टक का जो व्यक्ति प्रेमपूर्वक पाठ करता है, उसके हृदय में श्रीनित्यानन्द प्रभु के दोनों चरणकमल अत्यन्त स्फूर्ति पाते रहें, यह अष्टककार का आशीर्वाद है; क्योंकि यह श्रीनित्यानन्दाष्टक रसों का आधार है, रसिकवर-वैष्णवश्रेष्ठों का धनस्वरूप है, भक्तों के लिए भक्तिरसों का सारस्वरूप आगार है।(9)

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीमंगलगीतम्

(गुर्जरी राग-निःसार ताल)

श्रितकमलाकुचमण्डल! धृतकुण्डल! ए।
कलितललितवनमाल! जय जय देव! हरे!॥ 1॥

दिनमणिमण्डलमण्डन ! भवखण्डन ! ए।
मुनिजनमानसहंस! जय जय देव ! हरे ! ॥ 2॥

हे कमला के अर्थात् सर्वलक्ष्मीमयी श्रीराधिका के पयोधरमण्डल का आश्रय लेने वाले! हे मकराकृतिकुण्डल धारण करने वाले! एवं मनोहर वनमाला धारण करनेवाले! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो! (1)

हे सूर्यमण्डल को विभूषित करनेवाले! भवबन्धन को छेदन करने वाले! अतएव मननशील मुनिजनों के मनरूप-सरोवर में विहरण करनेवाले हंसस्वरूप! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (2)

कालियविषधरगञ्जन ! जनरञ्जन ! ए।
यदुकुल-नलिनदिनेश! जय जय देव! हरे!॥ 3॥

मधु-मुर-नरक-विनाशन! गरुड़ासन! ए।
सुरकुलकेलिनिदान! जय जय देव! हरे! ॥ 4॥

अमलकमलदललोचन! भवमोचन! ए।
त्रिभुवन-भवन-निधान! जय जय देव! हरे!॥ 5॥

जनकसुताकृतभूषण ! जितदूषण ! ए ।
समरशमितदशकण्ठ! जय जय देव! हरे!॥ 6॥

अभिनवजलधरसुन्दर ! धृतमन्दर ! ए।
श्रीमुखचन्द्रचकोर! जय जय देव! हरे!॥ 7॥

हे कालियनाग के मद का मर्दन करने वाले! अतएव व्रजजनों का मनोरञ्जन करने वाले! एवं यदुकुलरूप-कमल को विकसित करने के लिये सूर्यस्वरूप! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (3)

हे मधुदैत्य, मुरदैत्य, एवं नरकासुर का विनाश करनेवाले! गरुड़पर बैठनेवाले! अतएव देवगणों की क्रीडा के आदिकारण-स्वरूप! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (4)

हे निर्मल कमलदल के समान विशाल नेत्रोंवाले! संसार से विमुक्त करने वाले! अतएव त्रिभुवनरूप-भवन के आधारस्वरूप! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (5)

हे रामावतार में जानकी को विभूषित करने वाले! एवं दूषण नामक राक्षस को जीतनेवाले! तथा युद्ध में रावण को शान्त करने वाले! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (6)

हे नूतन-जलधर के समान वर्णवाले श्यामसुन्दर! एवं मन्दराचल को धारण करनेवाले! तथा श्रीराधारूप-महालक्ष्मी के मुखरूपचन्द्रपर आसक्त होने वाले चकोरस्वरूप! देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (7)

तव चरणे प्रणता वयमिति भावय ए।
कुरु कुशलं प्रणतेषु जय जय देव! हरे!॥ 8॥

श्रीजयदेवकवेरिदं कुरुते मुदम्।
मंगलमुज्ज्वलगीतं जय जय देव! हरे!॥ 9॥

(श्रीजयदेव गोस्वामीकृत)

हे जयदेव गोस्वामी के संकट हरनेवाले प्रभो! हम सब भक्त, तुम्हारे श्रीचरणों में विनम्रभाव से पड़े हुए हैं, यह विचार लीजिये, एवं तुम्हारे विनम्र–भक्तों के विषय में कल्याण विधान कीजिये। हे देव! हरे! तुम्हारी बारंबार जय हो। (8)

हे देव! श्रीजयदेव–कवि के द्वारा विनिर्मित मंगलमय एवं निर्मल यह गीत, तुम्हारी प्रसन्नता का संपादन करता रहे, अथवा श्रवण एवं गायन करनेवाले भक्तों के लिये भी यह गीत हर्षित करता रहता है। अतएव हे देव! हे हरे! तुम्हारी बारंबार जय–जयकार हो। (9)

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीदशावतारस्तोत्रम्

[मालवगौड़ राग–रूपक ताल]

प्रलयपयोधिजले धृतवानसि वेदं
विहित–वहित्र–चरित्रमखेदम् ।
केशव! धृतमीनशरीर! जय जगदीश हरे!॥ 1॥

हे केशव! हे मीन का शरीर धारण करनेवाले! जगदीश! हे भक्तों का क्लेश हरने वाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि प्रयलकालीन समुद्र के जल में, हयग्रीव–नामक दैत्य को मारकर, वेदों का उद्धार तो तुमने ही किया है, एवं उसी समय सप्तर्षियों के सहित सत्यव्रत–नामक राजर्षि को अनायास धारण करने के लिये, नौका का सा चरित्र करनेवाले भी तो तुम ही हो। (1)

क्षितिरिह विपुलतरे तिष्ठति तव पृष्ठे
धरणि–धरणकिण–चक्रगरिष्ठे ।
केशव! धृतकूर्मशरीर! जय जगदीश! हरे!॥ 2॥

वसति दशन–शिखरे धरणी तव लग्ना
शशिनि कलंकलेव निमग्ना।
केशव! धृतशूकररूप! जय जगदीश! हरे!॥ 3॥

तव करकमलवरे नखमद्भुतश्रृंगं
दलित–हिरण्यकशिपुतनु–भृंगम् ।
केशव! धृतनरहरिरूप! जय जगदीश! हरे!॥ 4॥

हे केशव! हे कच्छप का शरीर धारण करनेवाले! जगदीश! हे भक्तों का मन हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि इस कच्छप अवतार में, पृथ्वी के धारण करने से, अथवा मन्दराचल के धारण करने से, सूखे व्रणसमूह से अतिशय कठिन, एवं अत्यन्त विशाल तुम्हारे पृष्ठभागपर पृथ्वी स्थित है। (2)

हे केशव! हे वराह का रूप धारण करनेवाले! जगदीश! हे भक्तों का पाप हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम्हारे दाँत के अग्रभाग में संलग्न हुई पृथ्वी, चन्द्रमा में निमग्न हुई कलंक की कला की तरह निवास करती है। (3)

हे केशव! हे श्रीनृसिंह का रूप धारण करनेवाले! जगदीश! हे भक्तों का कष्ट हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम्हारे श्रेष्ठकरकमल में अद्भुत अग्रभागवाला एक नख है, जिसने हिरण्यकशिपु के शरीररूप भ्रमर को विदीर्ण कर दिया। इसमें आश्चर्य की बात यही है कि, सामान्यत: कमल के अग्रभाग को भ्रमर ही विदीर्ण करता है, किन्तु यहाँ तो कमल के अग्रभाग ने भ्रमर को ही विदीर्ण कर डाला।(4)

छलयसि विक्रमणे बलिमद्‌भुतवामन!
पद–नख–नीरजनितजनपावन!
केशव! धृतवामनरूप! जय जगदीश! हरे!॥ 5 ॥

क्षत्रिय–रुधिरमये जगदपगतपापं
स्नपयसि पयसि शमित–भवतापम्।
केशव! धृतभृगुपतिरूप! जय जगदीश! हरे!॥ 6 ॥

वितरसि दिक्षु रणे दिक्पतिकमनीयं
दशमुख–मौलि–बलिं रमणीयम्।
केशव! धृतरामशरीर! जय जगदीश! हरे!॥ 7 ॥

हे केशव! हे श्रीवामन का रूप धारण करनेवाले! जगदीश! हे भक्तों का अहंकार हरनेवाले हरे! तुहारी जय हो, क्योंकि तुम, बलिराजा के द्वारा दी हुई पृथ्वी को नापते समय, बलिराजा को छलते रहते हो, अत: अद्‌भुत वामन रूपवाले हो! उसी समय तुम्हारे चरणनख से उत्पन्न हुए गंगाजल के द्वारा, तुम समस्तजनों को पवित्र बनानेवाले हो।(5)

हे केशव! हे परशुराम का रूप धारण करनेवाले! जगदीश! हे संसार का सन्ताप हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि ब्राह्मणों के अभक्तरूप क्षत्रियों के रुधिरमय जल में (कुरुक्षेत्र में), संसारभर को पाप एवं सन्तापरहित बनाते हुए, आज भी स्नान कराते रहते हो।(6)

हे केशव! हे श्रीरामचन्द्र का विग्रह धारण करनेवाले! जगदीश! हे ऋषियों की व्यथा हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम रामावतार में लंका के रणांगण में, दशों दिक्पालों के द्वारा वांछनीय एवं रमणीय, रावण के मस्तकरूप उपहार को, दशों दिशाओं में वितरण करते रहते हो।(7)

वहसि वपुषि विशदे वसनं जलदाभं
हलहति–भीति–मिलित–यमुनाभम् ।
केशव! धृतहलधररूप! जय जगदीश! हरे!॥ 8॥

निन्दसि यज्ञ–विधेरहह श्रुतिजातं
सदय–हृदय! दर्शित–पशुघातम्।
केशव! धृतबुद्धशरीर! जय जगदीश! हरे! ॥ 9॥

म्लेच्छ–निवहनिधने कलयसि कलवालं
धूमकेतुमिव किमपि करालम्
केशव! धृतकल्किशरीर! जय जगदीश! हरे!॥ 10॥

हे केशव! हे श्रीबलराम का रूप धारण करनेवाले! जगदीश! हे दुष्टों का मद हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम, श्रीबलराम अवतार में, गौरवर्णवाले श्रीविग्रह में, सजल–जलद के समान नीलांबर को धारण करते रहते हो, वह नीलांबर, हल के प्रहार से भयभीत हुई, अतएव सम्मिलित हुई, यमुना के समान प्रतीत होता है। (8)

हे केशव! हे बुद्ध का शरीर धारण करनेवाले! जगदीश! हे पाषण्ड का हरण करनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम दया से युक्त हृदयवाले हो! अतएव अहिंसारूप परमधर्म को मानने–वाले हो। अहह! अतएव पशुओं की हिंसा का प्रदर्शन करनेवाले, यज्ञविधि के श्रुतिसमुदाय की निन्दा करते रहते हो। (9)

हे केशव! हे कल्कि शरीर धारण करनेवाले! जगदीश! हे कलिमल हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, क्योंकि तुम, म्लेच्छसमुदाय को मारने के निमित्त, दुष्टों का विनाशसूचक धूमकेतु (पुच्छल) तारा की तरह, अनिर्वचनीय कराल करवाल (तलवार) को धारण करते रहते हो। (10)

श्रीजयदेव-कवेरिदमुदितमुदारं
श्रृणु सुखदं शुभदं भवसारम्।
केशव! धृतदशविधरूप! जय जगदीश हरे!॥ 11॥

श्रीदशावतारप्रणामः।

वेदानुद्धरते जगन्ति वहते भूगोलमुद्बिभ्रते
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते।
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते
म्लेच्छान्मूर्च्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः॥ 12॥

(श्रीजयदेव गोस्वामी द्वारा विरचित)

हे केशव! हे दश-प्रकार के अवतार धारण करानेवाले! जगदीश! हे भक्तों की वासना हरनेवाले हरे! तुम्हारी जय हो, तुम्हारे श्रीचरणों में मेरी यही विनम्र प्रार्थना है कि, श्रीजयदेव-कवि के द्वारा कहे हुए, इस दशावतार स्तोत्र को तुम प्रेमपूर्वक सुनते रहो, क्योंकि यह स्तोत्र तुम्हारे अवतारों के सारांश से भरा हुआ है, अतएव सर्वश्रेष्ठ, सुखद, एवं मंगलदायक है। इस कथन में भक्तों के लिये भी सुनने का आदेश है। (11)

हे दश-अवतार धारण करनेवाले श्रीकृष्ण! तुम्हारे लिए मेरा कोटिशः प्रणाम है, क्योंकि तुम मत्स्य रूप से वेदों का उद्धार करनेवाले हो, कूर्म रूप से संसार को धारण करने वाले हो, वराह रूप से भूगोल को उठानेवाले हो, श्रीनृसिंह रूप से हिरण्यकशिपु दैत्य को विदीर्ण करनेवाले हो, श्रीवामन रूप से बलि को छलनेवाले हो, श्रीपरशुराम रूप से दुष्ट-क्षत्रियों का विनाश करनेवाले हो, श्रीराम रूप से रावण को जीतनेवाले हो, श्रीबलराम रूप से हल को धारण करनेवाले हो, श्रीबुद्ध रूप से जीवों पर करुणा का विस्तार करनेवाले हो, एवं कल्कि रूप से म्लेच्छों को मूर्छित करनेवाले हो। (12)

श्रीजगन्नाथाष्टकम्

कदाचित् कालिन्दीतट-विपिन-संगीत-तरलो
मुदाभीरी-नारी - वदनकमलास्वाद - मधुपः।
रमा - शम्भु - ब्रह्मामरपति-गणेशार्चितपदो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥ 1 ॥

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे
दुकूलं नेत्रान्ते सहचर - कटाक्षं च विदधते।
सदा श्रीमद्वृन्दावन-वसति-लीलापरिचयो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 2 ॥

महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे
वसन् प्रासादान्तः सहज-बलभद्रेण बलिना।
सुभद्रा - मध्यस्थः सकल-सुर-सेवावसरदो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 3 ॥

कभी-कभी यमुनातीरस्थ श्रीवृन्दावन में वेणुगीत में चञ्चल, एवं गोपवनिताओं के मुखकमल के आनन्दपूर्वक आस्वाद लेनेवाले भ्रमरस्वरूप तथा लक्ष्मी-शिव-ब्रह्मा-इन्द्र एवं गणेश आदि देवताओं के द्वारा जिनके श्रीचरण पूजित होते रहते हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायें। (1)

बायीं भुजा में वेणु, सिरपर मोर-पंख, कटितट में पीताम्बर, एवं अपने नेत्र-प्रान्त में सहचरों के कटाक्ष को धारण करनेवाले, तथा श्रीवृन्दावन के निवास की लीलाओं से जो सदैव परिचित हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (2)

महासमुद्र के तीरपर सुवर्ण के समान सुन्दर नीलाचल के शिखर में, अपने बड़े भाई प्रबल बलदेवजी के साथ, अपने मन्दिर में निवास करने वाले, एवं सुभद्रा जिनके बीच में विराजमान है, तथा जो समस्त देवताओं को अपनी सेवा का अवसर देते रहते हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (3)

कृपा-पारावारः सजल-जलद-श्रेणि-रुचिरो
रमावाणीरामः स्फुरदमल - पंकेरुहमुखः।
सुरेन्द्रैराराध्यः श्रुतिगणशिखा - गीतचरितो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 4॥

रथारूढ़ो गच्छन् पथि मिलित-भूदेव-पटलैः
स्तुति - प्रादुर्भावं प्रतिपदमुपाकर्ण्य सदयः।
दयासिन्धुर्बन्धुः सकलजगतां सिन्धुसुतया
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 5॥

परंब्रह्मापीडः कुवलय - दलोत्फुल्ल - नयनो
निवासी नीलाद्रौ निहित-चरणोऽनन्त-शिरसि।
रसानन्दी राधा - सरस - वपुरालिंगन-सुखो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 6॥

जो करुणावरुणालय हैं, सजल जलदश्रेणी के समान श्यामसुन्दर हैं, एवं रमा तथा सरस्वतीदेवी के साथ विहार करने वाले हैं, एवं जिनका श्रीमुख विकसित निर्मल कमल के समान है, एवं जो समस्त देवेन्द्रों के आराधनीय हैं, तथा जिनके दिव्य–चरित्र श्रुतियों के शिरोभाग में गाये गये हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (4)

रथ में बैठकर चलते समय, मार्ग में मिलने वाले ब्राह्मण–समुदाय के द्वारा, पद–पद पर अपनी स्तुतियों के प्राकट्य को सुनकर, जो दया से युक्त हो जाते हैं, अतएव जो दया के सिन्धु एवं समस्त जगत् के बन्धु कहलाते हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव, श्रीलक्ष्मीदेवी के सहित मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (5)

जो मुकुटमणिस्वरूप परब्रह्म हैं, एवं जिनके दोनों नेत्र नील–कमलदल के समान खिले हुए हैं, एवं जो नीलाचल में निवास करनेवाले हैं, एवं शेषजी के सिरपर अपने चरणों को स्थापित करनेवाले हैं, एवं भक्तिरस से ही आनन्दित होनेवाले हैं, तथा श्रीराधिका के सरस–शरीर के आलिंगन से ही जिनको सुख मिलता है, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (6)

न वै याचे राज्यं न च कनक-माणिक्य-विभवं
न याचेऽहं रम्यां सकल-जन-काम्यां वरवधूम्।
सदा काले काले प्रमथपतिना गीतचरितो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 7॥

हर त्वं संसारं द्रुततरमसारं सुरपते!
हर त्वं पापानां विततिमपरां यादवपते!
अहो दीनेऽनाथे निहित-चरणो निश्चितमिदं
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥ 8॥

जगन्नाथाष्टकं पुण्यं यः पठेत् प्रयतः शुचि।
सर्वपाप-विशुद्धात्मा विष्णुलोकं स गच्छति॥ 9॥

मैं, प्रसन्न हुए श्रीजगन्नाथदेव से राज्य नहीं माँगता, एवं सुवर्ण–मणि–माणिक्यरूप वैभव को भी नहीं माँगता, तथा सकलजन वांछनीय सुन्दरी–नारी को भी मैं नहीं चाहता, किन्तु जिनके चारुचरित्र शिवजी के द्वारा समय–समय पर सदैव गाये जाते हैं, वे ही श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (7)

हे सुरपते! तुम मेरे असार–संसार को शीघ्र ही हर लो। हे यादवपते! तुम मेरे उत्कृष्ट पापों की श्रेणी को हर लो। अहह! जो दीन एवं अनाथ के ऊपर ही अपने श्रीचरण को स्थापित करते हैं, यह जिनका निश्चित व्रत है, वे श्रीजगन्नाथदेव मेरे नेत्रमार्ग के पथिक बन जायँ। (8)

जो व्यक्ति पवित्र एवं सावधान होकर, पुण्यमय श्रीजगन्नाथाष्टक का पाठ करेगा, वह व्यक्ति सब पापों से रहित, विशुद्ध चित्तवाला होकर, विष्णुलोक को प्राप्त कर लेगा। (9)

श्रीचौराग्रगण्यपुरुषाष्टकम्

व्रजे प्रसिद्धं नवनीतचौरं, गोपांगनानां च दुकूलचौरम्।
अनेक-जन्मार्जित-पापचौरं, चौराग्रगण्यं पुरुषं नमामि॥ 1॥

श्रीराधिकाया हृदयस्य चौरं, नवांबुदश्यामलकान्तिचौरम्।
पदाश्रितानां च समस्तचौरं, चौराग्रगण्यं पुरुषं नमामि॥ 2॥

अकिञ्चनीकृत्य पदाश्रितं यः, करोति भिक्षुं पथि गेहहीनम्।
केनाप्यहो भीषणचौर ईदृग्, दृष्टःऽश्रुतो वा न जगत्त्रयेऽपि॥ 3॥

यदीयनामापि हरत्यशेषं, गिरिप्रसारानपि पापराशीन्।
आश्चर्यरूपो ननु चौर ईदृग्, दृष्टः श्रुतो वा न मया कदापि॥ 4॥

व्रज में प्रसिद्ध, माखन चुरानेवाले, एवं गोपियों के चीर चुराने वाले, अपने आश्रितजनों के अनेक जन्मों के द्वारा उपार्जित पापों को चुरानेवाले—चौराग्रगण्यपुरुष को मैं प्रणाम करता हूँ। (1)

श्रीमती राधिका के हृदय को चुरानेवाले, नूतन–जलधर की श्यामकान्ति को चुरानेवाले, एवं निजचरणाश्रितों के समस्त पाप–ताप चुरानेवाल—चौराग्रगण्यपुरुष को मैं प्रणाम करता हूँ। (2)

जो अपने चरणाश्रितों को निष्किञ्चन बनाकर, मार्ग में घूमनेवाले अनिकेत–भिक्षुक बना देता है, हाय! ऐसा भयंकर चोर तो किसी ने तीनों लोकों में भी देखा या सुना नहीं। (3)

जिसका नाममात्र लेना भी, पर्वत के समान विशाल पापसमूह को भी समूल हर लेता है, ऐसे आश्चर्य रूपवाला चोर तो मैंने कभी भी कहीं देखा या सुना नहीं। (4)

धनं च मानं च तथेन्द्रियाणि, प्राणांश्च हृत्वा मम सर्वमेव।
पलायसे कुत्र धृतोऽद्य चौर, त्वं भक्तिदाम्नासि मया निरुद्धः॥ 5॥

छिनत्सि घोरं यमपाशबन्धं, भिनत्सि भीमं भवपाशबन्धम्।
छिनत्सि सर्वस्य समस्तबन्धं, नैवात्मनो भक्तकृतं तु बन्धम्॥ 6॥

मन्मानसे तामसराशिघोरे, कारागृहे दुःखमये निबद्धः।
लभस्व हे चौर! हरे! चिराय, स्वचौर्यदोषोचितमेव दण्डम्॥ 7॥

कारागृहे वस सदा हृदये मदीये
मद्भक्तिपाशदृढबन्धननिश्चलः सन्।
त्वां कृष्ण हे! प्रलयकोटिशतान्तरेपि
सर्वस्वचौर! हृदयान्नहि मोचयामि॥ 8॥

(परमपूज्य वल्लभाचार्य जी द्वारा विरचित)

हे चोर! मेरे धन–मान–इन्द्रियाँ–प्राण एवं सर्वस्व को हर कर, कहाँ भागे जा रहे हो? क्योंकि आज तो तुम भक्तिरूप–रज्जू से धारण कर, मेरे द्वारा रोक लिये गये हो। (5)

क्योंकि तुम, यमराज के भयंकर पाशबन्धन को तो काट देते हो, एवं संसार के भयंकर पाशबंधन को विदीर्ण कर देते हो, तथा सभी जनों के समस्त बन्धन को काट देते हो, किन्तु अपने प्रेमीभक्त के द्वारा रचे गये, अपने प्रेममय बन्धन को, तो तुम नहीं काट पाते हो। (6)

हे मेरा सर्वस्व चुराने वाले चोररूप–हरे! मैंने, आज तुम को अज्ञानरूप–अन्धकारसमुदाय से भयंकर एवं दुःखमय मेरे मनरूपी–कारागार में बाँध लिया है, अतः अपनी चोरीरूप–दोष के उचित दण्ड को ही, बहुत समय तक प्राप्त करते रहो॥ (7)

हे मेरा सर्वस्व चुराने वाले कृष्ण! मेरी भक्तिरूप–पाश के दृढ़बन्धन में निश्चल होकर, मेरे हृदयरूप–कारागार में सदैव निवास करते रहो, क्योंकि मैं तो तुम्हें अपने हृदयरूप–कारागार से, करोड़ों कल्पों में भी विमुक्त नहीं करूँगा। (8)

श्रीचौराष्टकम्

आदौ बकीप्राणमलौघचौरं, बाल्ये प्रसिद्धं नवनीतचौरम्।
व्रजे चरन्तं च मृदो हि चौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 1॥

विधेः सुरेन्द्रस्य च गर्वचौरं, गोगोपगोपीजनचित्तचौरम्।
श्रीराधिकाया हृदयस्य चौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 2॥

नागाधिराजस्य विषस्य चौरं, श्रीसूर्यकन्याखिलकष्टचौरम्।
गोपीजनाज्ञान-दुकूल-चौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 3॥

वत्सासुरादेर्बलमान - चौरं, पित्रोस्तथाबन्धनदुःखचौरम्।
कुब्जार्चनव्याज-मनोज-चौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 4॥

पहले पूतना के प्राण एवं पापराशि को चुराने वाले, बाल्यावस्था में माखन चुराने वाले, ब्रज में विचरण करते समय मृत्तिका चुरानेवाले, एवं प्रसिद्ध चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (1)

ब्रह्मा एवं इन्द्र के गर्व को चुरानेवाले, गो–गोप एवं गोपीजनों के चित्त को चुराने वाले, श्रीराधिका के हृदय को चुराने वाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (2)

सर्पराज कालियनाग के विष को चुरानेवाले, श्रीयमुनाजी के समस्त कष्ट को चुरानेवाले, एवं गोपीजनों के अज्ञानरूप–चीर को चुराने वाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (3)

वत्सासुर आदि दैत्यों के बल एवं अभिमान को चुरानेवाले, एवं कंस के कारागारस्थ माता–पिता के बन्धनरूप–दुःख को चुरानेवाले, तथा अपने पूजन के बहाने कुब्जा के मनोज को चुरानेवाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (4)

निशाचराणामथ जीवचौरं, जीवात्मनः कल्मषसंघचौरम्।
उपासकानां च विपत्तिचौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 5॥

सुहृत्सुदाम्नोह्यधनत्वचौरं, शोकस्य गत्वा विदुरस्य चौरम्।
कृष्णापटाकर्षकगर्वचौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 6॥

युद्धे हि पार्थस्य विमोहचौरं, पुरःस्थितानां च बलस्य चौरम्।
दिने च मायाबलसूर्य–चौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 7॥

चित्तस्य शीलस्य जनस्य चौरं, अनेकजन्मार्जितपापचौरम्।
दास्यं गतानां च समस्त–चौरं, चौराधिपं कृष्णमहं नमामि॥ 8॥

निशाचरों के जीवन को चुराने वाले, एवं जीवात्माओं के पातकपुञ्ज को चुरानेवाले, तथा अपने उपासकों की विपत्ति को चुराने वाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (5)

अपने मित्र सुदामा की निर्धनता को चुरानेवाले, विदुर के घर में जाकर उनके शोक को चुरानेवाले, एवं द्रौपदी के चीर को हरने वाले दुःशासन के गर्व को चुरानेवाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ । (6)

महाभारतयुद्ध में गीता–ज्ञान देकर, अर्जुन के विशालमोह को चुरानेवाले, एवं युद्धस्थल में अपने सामने खड़े हुए सैनिकों के बल को चुरानेवाले, तथा जयद्रथवध के दिन अपनी माया के बल से सूर्य को चुरानेवाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (7)

भक्तजनों के चित्त एवं शील को चुरानेवाले, एवं अनेक जन्मों के द्वारा उपार्जित पापों को चुरानेवाले, तथा अपने सेवकों के समस्त पाप–ताप चुराने वाले, चौराधिपति श्रीकृष्ण को मैं प्रणाम करता हूँ। (8)

श्रीगोविन्द-स्तोत्रम्

चिन्तामणिप्रकरसद्मसु कल्पवृक्ष-
लक्षावृतेषु सुरभीरभिपालयन्तम्।
लक्ष्मीसहस्रशतसम्भ्रमसेव्यमानं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 1॥

वेणुं क्वणन्तमरविन्ददलायताक्षं
बर्हावतंसमसिताम्बुदसुन्दरांगम्।
कन्दर्पकोटिकमनीयविशेषशोभं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 2॥

आलोलचन्द्रक-लसद्वनमाल्यवंशी-
रत्नांगदं प्रणयकेलिकलाविलासम्।
श्यामं त्रिभंगललितं नियतप्रकाशं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 3॥

मैं, आदि पुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जो गोलोक में चिन्तामणि –समुदाय से बने हुए, एवं लाखों कल्पवृक्षों से परिवेष्टित भवनों में कामधेनु–स्वरूपा अनन्त गैयाओं की स्नेहपूर्वक सर्वतोभाव से रक्षा करते रहते हैं, तथा लक्ष्मीस्वरूपा हजारों गोपांगनाओं के सैकड़ों प्रकार के विलासों द्वारा सेवित होते रहते हैं।(1)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जो अपने नित्य–वृन्दावन में नित्य ही वेणु बजाते रहते हैं, जिनके नेत्र कमलदल के समान विशाल हैं, जो मोरमुकुट धारण करते हैं, जिनका श्रीविग्रह श्याममेघ के समान मनोहर है, एवं जिनकी शोभा करोड़ों कामदेवों की अपेक्षा भी विशेष मनोहर है।(2)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जिनके मस्तकपर मोर मुकुट विराजमान है, गले में वनमाला, अधरपर वंशी, एवं भुजाओं में रत्नजटित बाजूबन्द शोभायमान हैं, एवं जिनका विलास स्नेह भरे परिहास की कला से युक्त है, तथा जिनका श्याम स्वरूप त्रिभंगललित बाँकी झाँकी से युक्त है, एवं जो एकरस रहने वाले प्रकाश से युक्त हैं।(3)

अंगानि यस्य सकलेन्द्रियवृत्तिमन्ति
पश्यन्ति पान्ति कलयन्ति चिरं जगन्ति।
आनन्दचिन्मयसदुज्ज्वलविग्रहस्य
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 4॥

अद्वैतमच्युतमनादिमनन्तरूप–
माद्यं पुराणपुरुषं नवयौवनं च।
वेदेषु दुर्लभमदुर्लभमात्मभक्तौ
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 5॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जिनका श्रीविग्रह सच्चिदानन्दमय एवं सदा उज्ज्वल है, अतएव जिनके प्रत्येक अंग, प्रत्येक इन्द्रियों की वृत्ति से युक्त होकर, चिरकाल तक अनेक ब्रह्माण्डों को देखते हैं, उनकी रक्षा करते हैं, एवं उनका नियमन करते रहते हैं, अर्थात् भगवान का हाथ भी देख सकता है, बोल सकता है, एवं नेत्र भी रक्षा कर सकते हैं, सुन सकते हैं, इसी प्रकार अन्य इन्द्रियाँ भी अन्य इन्द्रियों के कार्यों को कर सकती हैं। इसीलिए गीता (13/14) में उनको 'सर्वत: पाणिपादं तत् सर्वतोक्षशिरोमुखम्' इत्यादि रूपवाला कहा गया है।(4)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जो अद्वैतरूप से कहे जाते हैं, अर्थात् 'यह पृथ्वी में अद्वितीय राजा है' इस दृष्टान्त के अनुसार अनन्त ब्रह्माण्डों में जो अद्वितीय हैं। तात्पर्य — जिनके सामन या जिनसे अधिक कोई भी दूसरा नहीं है, एवं जो अपने स्वरूप–सामर्थ्य आदि से, कभी भी च्युत नहीं होते हैं, अथवा जिनके भक्तों का, प्रलयकाल में भी पतन नहीं होता, एवं जो अनादि–अनन्त रूपों वाले होकर भी, आदि स्वरूप कहलाते हैं, एवं पुराणपुरुष होकर भी, नित्य नवयौवन से युक्त बने रहते हैं, एवं जिनका ज्ञान वेदों में भी दुर्लभ है।(5)

पन्थास्तु कोटिशतवत्सरसंप्रगम्यो
वायोरथापि मनसो मुनिपुंगवानाम्।
सोऽप्यस्ति यत्प्रपदसीम्न्यविचिन्त्यतत्त्वे
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 6॥

एकोऽप्यसौ रचयितुं जगदण्डकोटिं
यच्छक्तिरस्ति जगदण्डचया यदन्तः।
अण्डान्तरस्थपरमाणुचयान्तरस्थं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 7॥

यद्भावभावितधियो मनुजास्तथैव
संप्राप्य रूपमहिमासनयानभूषाः।
सूक्तैर्यमेव निगमप्रथितैः स्तुवन्ति
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 8॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जो मार्ग, वायु एवं प्रधान-प्रधान मुनिजनों के मन के लिये भी, करोड़ों वर्षों के प्रयास से गम्य है, वह मार्ग, अचिन्त्य प्रभाववाले जिनके चरणारविन्दों के अग्रभाग में ही वर्तमान है, क्योंकि मणि, मंत्र एवं औषधियों का प्रभाव जिस प्रकार अचिन्त्य है, उसी प्रकार श्रीगोविन्द का तत्त्व भी अचिन्त्य है। अचिन्त्य-तत्त्व, तर्क से भी समझ में नहीं आ पाता है, अतः उसमें तर्क नहीं करना चाहिये।(6)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जिनकी शक्ति करोड़ों ब्रह्माण्डों की रचना करने के लिये समर्थ है, एवं अनन्त ब्रह्माण्डसमूह भी जिनके भीतर विराजमान हैं, अतः स्वरूपतः जो एक ही हैं, तथा जो ब्रह्माण्डान्तर्वर्ती परमाणुसमूह के भीतर भी स्थित रहते हैं।(7)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जिनके भाव से भावित बुद्धिवाले भावुक मनुष्यजन, जिनकी कृपा से, उन्हीं के समान रूप-महिमा-आसन-यान एवं वस्त्र-भूषण आदि को प्राप्त करके, वेदप्रसिद्ध पुरुषसूक्तों के द्वारा जिनकी स्तुति करते रहते हैं।(8)

आनन्दचिन्मयरसप्रतिभाविताभि–
स्ताभिर्य एव निजरूपतया कलाभिः।
गोलोक एव निवसत्यखिलात्मभूतो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥9॥

प्रेमाञ्जनच्छुरितभक्तिविलोचनेन
सन्तः सदैव हृदयेषु विलोकयन्ति।
यं श्यामसुन्दरमचिन्त्यगुणस्वरूपं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥10॥

रामादिमूर्तिषु कलानियमेन तिष्ठन्
नानावतारमकरोद्भुवनेषु किन्तु।
कृष्णः स्वयं समभवत् परमः पुमान् यो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 11॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जो प्राणीमात्र के आत्मास्वरूप होकर भी, अथवा गोलोक–निवासी अन्य प्रियवर्गों के परमश्रेष्ठ होने के नाते, जीवात्मा की तरह, उनके निकट रहकर भी आनन्दचिन्मयरस, अर्थात् परमप्रेममय उज्ज्वल नामक रस के द्वारा सराबोर स्वरूपवालीं, एवं निज स्वरूप होने के कारण, ह्लादिनीशक्ति की वृत्तिस्वरूपा गोपियों के साथ, गोलोकधाम में ही निवास करते हैं।(9)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ कि, जो गोविन्द यद्यपि गोलोक में ही निवास करते हैं, तथापि अचिन्त्यगुण स्वरूपवाले, श्यामसुन्दर विग्रहवाले, जिन गोविन्द को सन्तजन, प्रेम–नामक अञ्जन से रञ्जित, भक्तिरूप नेत्र के द्वारा, अपने–अपने हृदयों में सदैव सर्वत्र देखते रहते हैं।(10)

वे ही परिपूर्णतम पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण, कभी–कभी संसार में भी, अपने अंश से स्वयं अवतार लेते हैं, इस भाव को वर्णन करते हुए ब्रह्मा कहते हैं— मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, श्रीकृष्ण–नामक जो परमपुरुष अपनी कलाओं के नियम से, अर्थात् शक्तियों के परिमित प्रकाश के द्वारा, श्रीराम आदि मूर्तियों में स्थित होकर, भुवनों में अनेक अवतार धारण करते रहते हैं, किन्तु अट्ठाईसवें द्वापर के अन्तिम में, तो स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही, परिपूर्णतम रूप से प्रगट होते हैं। (11)

यस्य प्रभा प्रभवतो जगदण्डकोटि-
कोटिष्वशेषवसुधादि विभूतिभिन्नम् ।
तद्ब्रह्म निष्कलमनन्तमशेषभूतं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 12॥
माया हि यस्य जगदण्डशतानि सूते
त्रैगुण्यतद्विषयवेदवितायमाना
सत्वावलम्बि-परसत्त्व-विशुद्धसत्वं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 13॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, कोटि–कोटि ब्रह्माण्डों में, पृथ्वी आदि समस्त विभूतियों से भिन्न–अखण्ड–अनन्त एवं निखिल स्वरूप जो ब्रह्म है, वह ब्रह्म भी, अनेक अवतार लेने वाले परमप्रभावशाली जिन गोविन्द की प्रभारूप से कहा जाता है। तात्पर्य — ब्रह्म एवं श्रीकृष्ण स्वरूपतः एक ही तत्त्व हैं, तथापि विशिष्ट रूप से साक्षात् प्रगट होने के कारण, श्रीकृष्ण धर्मीरूप से कहे जाते हैं, एवं अविशिष्टरूप से प्रगट होने के कारण, ब्रह्म श्रीकृष्ण का धर्मरूप कहा जाता है, अतः सूर्य एवं सूर्य की प्रभा की तरह श्रीकृष्ण मण्डलस्थानीय हैं, एवं ब्रह्म उनकी प्रभास्थानीय है। प्रभा जिस प्रकार मण्डल के अधीन रहती है, उसी प्रकार ब्रह्म की सत्ता भी श्रीकृष्ण के अधीन है, अतएव गीता (14/27) में भी कहा है कि 'ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहम्' इत्यादि।(12)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, रजोगुण–तमोगुण–सत्त्वगुण ये तीनों गुण, एवं इन तीनों के विषय का प्रतिपादन करने वाले वेदों के द्वारा, जिसका विस्तार किया जाता है, ऐसी बहिरंगाशक्तिरूपा जिनकी माया, अनेक ब्रह्माण्डों की रचना करती रहती है, तो भी उस माया से उनका स्पर्श नहीं है, क्योंकि उनका स्वरूप तो रजोगुण–तमोगुण के आश्रयस्वरूप सत्वगुण से परे जो विशुद्धसत्वगुण है, अर्थात् रजोगुण–तमोगुण से रहित चित्शक्तिवृत्तिरूप जो विशुद्धसत्त्वगुण है, उस प्रकार के विशुद्धसत्त्ववाला है। कारण —श्रीकृष्ण में प्रकृति के सत्त्व आदि गुण नहीं रहते हैं, अतः श्रीविष्णुपुराण में कहा है कि 'सत्त्वादयो न सन्तीशे यत्र च प्राकृता गुणाः। स शुद्धः सर्वशुद्धेभ्यपुमानाद्यः प्रसीदतु।'(13)

आनन्दचिन्मयरसात्मतया मनःसु
यः प्राणिनां प्रतिफलन् स्मरतामुपेत्य।
लीलायितेन भुवनानि जयत्यजस्त्रं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 14॥

गोलोकनाम्नि निजधाम्नि तले च तस्य
देवी-महेश-हरि-धामसु तेषु तेषु।
ते ते प्रभावनिचया विहिताश्च येन
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 15॥

सृष्टिस्थितिप्रलयसाधनशक्तिरेका
छायेव यस्य भुवनानि बिभर्ति दुर्गा।
इच्छानुरूपमपि यस्य च चेष्टते सा
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 16॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, जो अपना स्मरण करने वाले प्राणियों के मन में उपस्थित होकर एवं आनन्द-चिन्मय-रसमय स्वरूप से प्रतिफलित होकर, अपने लीला-विलास के द्वारा, अनेक भुवनों को निरन्तर अपने वश में करते रहते हैं।(14)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, जिस गोविन्द ने गोलोक-नामक अपने धाम में, एवं उसके नीचे क्रमशः विराजमान वैकुण्ठधाम-शिवधाम एवं देवीधाम आदि में, वे वे लोकोत्तर प्रभावसमुदाय विस्तारित कर दिये हैं। इस श्लोक में देवी-महेश आदि धामों की गिनती, दाहिनी ओर से बायीं ओर माननी चाहिये, अन्यथा शास्त्रप्रसिद्ध धामों की रचना का क्रम नहीं बन पायेगा।(15)

मैं आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, संसार की उत्पत्ति, रक्षा एवं प्रलय करने की साधनशक्तिस्वरूपा अतुलनीय दुर्गादेवी, जिन गोविन्द की छाया की तरह अनुगत होकर, अनेक ब्रह्माण्डों का भरण-पोषण करती रहती है, तो भी वह दुर्गादेवी स्वतंत्रता के व्यवहार को छोड़कर, जिन गोविन्द की इच्छा के अनुसार ही चेष्टा करती है।(16)

क्षीरं यथा दधि विकारविशेषयोगात्
सञ्जायते न हि ततः पृथगस्ति हेतोः।
यः शम्भुतामपि तथा समुपैति कार्यात्
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 17॥

दीपार्चिरेव हि दशान्तरमभ्युपेत्य
दीपायते विवृतहेतुसमानधर्मा।
यस्तादृगेव हि च विष्णुतया विभाति
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 18॥

यः कारणार्णवजले भजति स्म योग-
निद्रामनन्तजगदण्डसरोमकूपः।
आधारशक्तिमवलम्ब्य परां स्वमूर्तिं
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 19॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, दुग्ध को जमानेवाले जामन के संबंध से, दुग्ध ही जिस प्रकार दधि के रूप में परिणत हो जाता है, एवं वह दधि अपने उपादानकारण–स्वरूप दुग्ध से पृथक् भी नहीं है, उसी प्रकार जो गोविन्द संसार का प्रलयरूप कार्य करने के लिये शंकर के रूप को प्राप्त कर लेते हैं।(17)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, जिस प्रकार एक दीपक की शिखा ही, दूसरी बत्ती का संयोग पाकर, दूसरे दीपक के रूप में परिणत हो जाती है, एवं अपने मूलभूत पहले दीपक के समान धर्म को ही प्रकाशित करती रहती है, उसी प्रकार जो गोविन्द, विष्णुरूप से प्रकाशित हो जाते हैं।(18)

मैं आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, अपने रोमकूपों में अनन्तब्रह्माण्डों को धारण करनेवाले जो गोविन्द, आधार–शक्तिरूप शेष–नामक अपनी दूसरी मूर्ति का आश्रय लेकर, कारणसमुद्र के जल में योगनिद्रा का सेवन करते हैं।(19)

यस्यैकनिश्वसितकालमथावलम्ब्य
जीवन्ति लोमविलजा जगदण्डनाथाः।
विष्णुर्महान् स इह यस्य कलाविशेषो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 20॥

भास्वान् यथाश्मशकलेषु निजेषु तेजः
स्वीयं कियत् प्रकटयत्यपि तद्वदत्र।
ब्रह्मा य एष जगदण्डविधानकर्ता
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 21॥

यत्पादपल्लवयुगं विनिधाय कुम्भ
द्वन्द्वे प्रणामसमये स गणाधिराजः।
विघ्नान् विहन्तुमलमस्य जगत्त्रसस्य
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 22॥

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, गोविन्द के अभिन्नस्वरूप जिन महाविष्णु के, एक श्वास लेने के समय का अवलंबन करके, अपने (महाविष्णु के) रोमकूपों में विद्यमान अनन्त ब्रह्माण्डाधिपति जीवित बने रहते हैं, वे महाविष्णु भी, जिन गोविन्द के कलाविशेष कहे जाते हैं।(20)

सूर्यदेव, सूर्यकान्तमणि के नाम से विख्यात अपने पत्थर के टुकड़ों में, अर्थात् सूर्यकान्तमणियों में जिस प्रकार अपने किञ्चित तेज को प्रकट कर देते हैं, अर्थात् उनके द्वारा दाह आदिक कार्य भी जिस प्रकार स्वयं करते हैं, उसी प्रकार जो गोविन्द, यहाँ पर ब्रह्मा होकर, अनेक ब्रह्माण्डों को बनाने वाले बन जाते हैं, मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ।(21)

मैं आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, पुराणप्रसिद्ध वे गणाधिराज (गणेश), जिन गोविन्द के दोनों पादपल्लवों को प्रणाम करते समय, अपने मस्तक के दोनों कुंभों पर धारण करके ही, इन तीनों लोकों के विघ्नों का विनाश करने के लिये समर्थ हो पाये हैं । कैमुत्यन्याय से श्रीकपिलदेव ने भी, माता देवहूति के प्रति भगवद्ध्यान वर्णन करते समय, श्रीगोविन्द के भजन–पूजन–स्तवन आदि को दृढ़ कर दिया है, यथा — वयत्पादनिःसृतसरित्प्रवरोदकेन तीर्थेन मूर्ध्न्यधिकृतेन शिवः शिवोऽभूत्' (भा0 3/28/22), अर्थात् जिन गोविन्द के चरणारविन्द से निकली हुई नदियों में श्रेष्ठ, श्रीगंगा के परमपावन जल को श्रद्धापूर्वक अपने मस्तकपर धारण कर, स्वयं मंगलमय श्रीमहादेवजी, और भी अधिक मंगलमय हो गये।(22)

अग्निर्मही गगनमम्बु मरुद्दिशश्च
कालस्तथात्ममनसीति जगत्त्रयाणि।
यस्माद्भवन्ति विभवन्ति विशन्ति यं च
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 23॥

यच्चक्षुरेष सविता सकलग्रहाणां
राजा समस्तसुरमूर्तिरशेषतेजाः।
यस्याज्ञया भ्रमति सम्भृतकालचक्रो
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 24॥

धर्मोऽथ पापनिचयः श्रुतयस्तपांसि
ब्रह्मादिकीटपतगावधयश्च जीवाः।
यद्दत्तमात्रविभवप्रकटप्रभावा
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 25॥

अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, समस्त दिशाएं, काल, आत्मा (जीव) एवं मन आदि इन द्रव्यों से बने हुए तीनों लोक भी, जिन गोविन्द से उत्पन्न होते हैं, पुष्ट होते हैं, एवं प्रलयकाल में जिन गोविन्द में ही प्रविष्ट हो जाते हैं, अतः मैं आदिपुरुष उन्हीं श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ।(23)

समस्त ग्रहों के राजा, एवं समस्त देवताओं की मूर्तिस्वरूप, तथा समस्त तेजोमय प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाला यह जो सूर्य है, वह भी जिन गोविन्द का नेत्रस्वरूप है, और जिनकी आज्ञा से कालचक्र को धारण कर, अहर्निश भ्रमण करता रहता है, अतः मैं तो आदिपुरुष उन्हीं श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ।(24)

श्रुति–शास्त्रोक्त धर्म, पापों का समुदाय, समस्त वेद, एवं सब प्रकार के तप, तथा ब्रह्मा से लेकर कीट–पतंग–पर्यन्त जीवगण भी, जिन गोविन्द के द्वारा दिये गये वैभव से ही अपने–अपने प्रभाव को प्रकाशित कर पाते हैं, मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ।(25)

यस्त्विन्द्रगोपमथवेन्द्रमहो स्वकर्म–
बन्धानुरूपफलभाजनमातनोति।
कर्माणि निर्दहति किन्तु च भक्तिभाजां
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 26॥

यं क्रोधकामसहजप्रणयादिभीति–
वात्सल्यमोहगुरुगौरवसेव्यभावैः।
सञ्चिन्त्य तस्य सदृशीं तनुमापुरेते
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥ 27॥

(ब्रह्म संहिता से)

मैं, आदिपुरुष उन श्रीगोविन्द का भजन करता हूँ कि, जो इन्द्रगोप (गहरे लाल रंग का एक बरसाती कीड़ा) को, अथवा इन्द्र को, अपने–अपने कर्मबन्धन के अनुरूप, फल का भागी बनाते रहते हैं, यही हर्ष की बात है।(26)

क्रोध, काम, सख्य, भय, वात्सल्य, मोह, गुरु के समान गौरव, और दास्यभाव आदि भावों के द्वारा, जिन गोविन्द का स्मरण करके, स्मरण करनेवाले जन, उस–उस भाव के अनुसार, तदनुरूप शरीर को प्राप्त कर चुके हैं, अतः मैं, तो आदिपुरुष उन्हीं श्रीगोविन्द भगवान् का भजन करता हूँ। इस स्तुति से ब्रह्मा के ऊपर प्रसन्न हुए श्रीगोविन्द, ब्रह्मा के प्रति बोले कि, धर्मानन्यान् परित्यज्य मामेकं भज विश्वसन्। यादृशी यादृशी श्रद्धा सिद्धिर्भवति तादृशी॥ (ब्र0सं0 5/61)। अन्य सभी धर्मों को छोड़कर, विश्वासपूर्वक केवल मेरा (श्रीकृष्ण का) ही भजन करो, क्योंकि जैसी–जैसी श्रद्धा होती है, वैसे–वैसी ही सिद्धि प्राप्त होती है।(27)

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीदामोदराष्टकम्

नमामीश्वरं सच्चिदानन्दरूपं,
लसत्कुण्डलं गोकुले भ्राजमानम्।
यशोदाभियोलूखलाद्धावमानं,
परामृष्टमत्यंततो द्रुत्य गोप्या॥ 1॥

रुदन्तं मुहुर्नेत्रयुग्मं मृजन्तं,
करांभोजयुग्मेन सातंकनेत्रम् ।
मुहुःश्वासकंप-त्रिरेखांककण्ठ,
स्थितग्रैवदामोदरं भक्तिबद्धम्॥ 2॥

मैं सच्चिदानन्दस्वरूप उन श्रीदामोदर भगवान् को नमस्कार करता हूँ कि, जो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर हैं, एवं सत्, चित्, आनन्द–स्वरूप श्रीविग्रह वाले हैं। जिनके दोनों कानों में दोनों कुण्डल शोभा पा रहे हैं, एवं जो स्वयं गोकुल में विशेष शोभायमान हैं, एवं जो यशोदा के भय से (माखनचोरी के समय), ऊखल (ओखली) के ऊपर से दौड़ रहे हैं, और माँ यशोदा ने भी जिनके पीछे शीघ्रतापूर्वक दौड़कर, जिनकी पीठ को पकड़ लिया है। (1)

मैं, भक्तिरूप–रज्जु में बँधनेवाले उन्हीं दामोदर भगवान् को नमस्कार करता हूँ कि, जो माता के हाथ में लठिया को देखकर, रोते–रोते अपने दोनों कर–कमलों से, अपने दोनों नेत्रों को बारम्बार पौंछ रहे हैं, एवं भयभीत नेत्रों से युक्त हैं, तथा निरंतर लंबे–लंबे श्वासों से काँपते हुए, तीन रेखाओं से अंकित जिनके कण्ठ में स्थित मोतियों के हार भी हिल रहे हैं। (2)

इतीदृक्स्वलीलाभिरानन्दकुण्डे,
स्वघोषं निमज्जन्तमाख्यापयन्तम्।
तदीयेशितज्ञेषु भक्तैर्जितत्वं,
पुनः प्रेमतस्तं शतावृत्ति वन्दे॥ 3॥

वरं देव! मोक्षं न मोक्षावधिं वा,
न चान्यं वृणेहं वरेशादपीह।
इदं ते वपुर्नाथ! गोपालबालं,
सदा मे मनस्याविरास्तां किमन्यैः?॥ 4॥

इदं ते मुखांभोजमत्यन्तनीलै,-
र्वृतं कुन्तलैः स्निग्धवक्रैश्च गोप्या।
मुहुश्चुम्बितं बिम्बरक्ताधरं मे,
मनस्याविरास्तामलं लक्षलाभैः॥5॥

मैं, उन्हीं दामोदर भगवान् को फिर भी प्रेमपूर्वक सैकड़ों बार प्रणाम करता हूँ कि, जो इस प्रकार की बाल्य–लीलाओं के द्वारा, अपने समस्त व्रज को, आनन्दरूप सरोवर में गोता लगवा रहे हैं, एवं अपने ऐश्वर्य को जाननेवाले ज्ञानियों के निकट, भक्तों के द्वारा अपने पराजय के भाव को प्रकाशित करते हैं। (3)

हे देव! आप सब प्रकार के वरदान देने में समर्थ हैं, तो भी मैं आपसे मोक्ष, अथवा मोक्ष का पराकाष्ठास्वरूप श्रीवैकुण्ठलोक, अथवा और वरणीय दूसरी किसी वस्तु की प्रार्थना नहीं करता हूँ। मैं तो केवल यही प्रार्थना करता हूँ कि, हे नाथ! मेरे हृदय में तो आपका यह बाल–गोपाल रूप श्रीविग्रह सदैव प्रगट होता रहे। इससे भिन्न दूसरे वरदानों से मुझे क्या प्रयोजन?। (4)

और हे देव! आपका यह जो मुखारविन्द अत्यन्त श्यामल, स्निग्ध, एवं घुँघराले केशसमूह से आवृत है, तथा बिंबफल के समान रक्तवर्ण के अधरोष्ठ से युक्त है, एवं माँ यशोदा जिसको बारंबार चूमती रहती है, वही मुखारविन्द, मेरे मन मन्दिर में प्रगट विराजमान होता रहे। दूसरे लाखों प्रकार के लाभों से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है। (5)

नमो देव दामोदरानन्त विष्णो!
प्रसीद प्रभो! दुःखजालाब्धिमग्नम्।
कृपादृष्टिवृष्ट्यातिदीनं बतानु,
–गृहाणेश! मामज्ञमेध्यक्षिदृश्यः॥ 6॥

कुबेरात्मजौ बद्धमूर्त्यैव यद्वत्,
त्वया मोचितौ भक्तिभाजौ कृतौ च।
तथा प्रेमभक्तिं स्वकां मे प्रयच्छ,
न मोक्षे ग्रहो मेऽस्ति दामोदरेह॥ 7॥

नमस्तेऽस्तु दाम्ने स्फुरदीप्तिधाम्ने,
त्वदीयोदरायाथ विश्वस्य धाम्ने।
नमो राधिकायै त्वदीयप्रियायै,
नमोऽनन्तलीलाय देवाय तुभ्यम्॥ 8॥

(श्री सत्यव्रत मुनि द्वारा कथित)

हे देव! हे दामोदर! हे अनन्त! हे सर्वव्यापक प्रभो! आपके लिये मेरा नमस्कार है। आप मेरे ऊपर प्रसन्न हो जाइये। मैं, दुःखसमूहरूप समुद्र में डूबा जा रहा हूँ। अतः हे सर्वेश्वर! अपनी कृपादृष्टिरूप अमृतवृष्टि के द्वारा अत्यन्त दीन, एवं मतिहीन मुझ को, अनुगृहीत कर दीजिये, एवं मेरे नेत्रों के सामने साक्षात् प्रगट हो जाइये। (6)

हे दामोदर! आपने ऊखल से बँधे हुए श्रीविग्रह के द्वारा ही, नलकूबर एवं मणिग्रीव नामक कुबेर–पुत्रों को, जिस प्रकार विमुक्त एवं भक्तियुक्त कर दिया था, उसी प्रकार मेरे लिये भी, अपनी प्रेमभक्ति दे दीजिये, क्योंकि मेरा आग्रह तो आपकी इस प्रेमभक्ति में ही है, किन्तु मोक्ष में नहीं है॥ 7॥

हे देव! प्रकाशमान दीप्तिसमूह के आश्रयस्वरूप आपके उदर में बँधी हुई रज्जु के लिये, एवं जगत् के आधारस्वरूप आपके उदर को भी मेरा बारंबार प्रणाम है। और आपकी परमप्रेयसी श्रीराधिका के लिए मेरा प्रणाम है, तथा अनन्त लीलावाले देवाधिदेव आपके लिये भी मेरा कोटिशः प्रणाम है॥ 8॥

▲ ▲ ▲ ▲

प्रार्थना

करारविन्देन पदारविन्दं, मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम्।
वटस्य-पत्रस्य पुटे शयानं, बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि॥ 1॥

श्रीकृष्ण! गोविन्द! हरे मुरारे! हे नाथ! नारायण! वासुदेव!।
जिह्वे पिबस्वामृतमेतदेव, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 2॥

विक्रेतुकामा किल गोपकन्या, मुरारिपादार्पितचित्तवृतिः।
दध्यादिकं मोहवशादवोचद्, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 3॥

गृहे – गृहे गोपवधू कदम्बाः सर्वे मिलीत्वा समवाप्य योगम्।
पुण्यानि नामानि पठन्ति नित्यं, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 4॥

सुखंशयाना निलये निजेपि नामानि विष्णोः प्रवदन्ति मर्त्याः।
ते निश्चितं तन्मयतां व्रजन्ति, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 5॥

जिह्वे सदैवं भज सुन्दराणि, नामानि कृष्णस्य मनोहराणि।
समस्त भक्तार्तिविनाशनानि, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 6॥

सुखावसाने इदमेव सारं, दुःखावसाने इदमेव ज्ञेयम्।
देहावसाने इदमेव जाप्य, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 7॥

श्रीकृष्ण राधावर गोकुलेश, गोपाल गोवर्धननाथ विष्णो।
जिह्वे पिबस्वामृतमेतदेव, गोविन्द ! दामोदर ! माधवेति॥ 8॥

जिह्वे रसज्ञे मधुरप्रियात्व, सत्यं हितं त्वां परमं वदामि।
आवर्णयेथा मधुराक्षराणि, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 9॥

त्वामेव याचे मम देहि जिह्वे, समागते दण्डधरे कृतान्ते।
वक्तव्यमेवं मधुरं सुभक्त्या, गोविन्द! दामोदर! माधवेति॥ 10॥

कार्तिक व्रते श्रीराधाकृष्णयोरष्टकालीय लीला-कीर्तनम्।

प्रथम-याम-कीर्तन

[निशान्तलीला भजन—श्रद्धा]

[6 दण्ड =2.24 मिनट; 3.22 से 5.46 मिनट तक]

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावग्निनिर्वापणं,
श्रेयः कैरवचन्द्रिकावितरणं विद्यावधूजीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं,
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्णसंकीर्तनम्॥ 1॥

नाम-माहात्म्य के विषय में, कलियुगपावनावतारी भगवान् श्रीचैतन्यमहाप्रभु की उक्ति तो सर्वोत्कृष्ट है, यथा —

इस मायामय जगत् में श्रीकृष्णसंकीर्तन ही विजय को प्राप्त होता है 1. यही चित्तरूपी-दर्पण का शोधन करने वाला है, 2. संसारस्वरूप महादावानल को मिटाने वाला है, 3. कल्याणरूपिणी कुमुदिनी के विकास के लिये चन्द्रिका का विस्तार करने वाला है, 4. विद्यारूप-वधू का जीवनस्वरूप है, 5. आनन्दरूपी-समुद्र का बढ़ाने वाला है, 6. पद-पद पर पूर्ण अमृत का आस्वाद कराने वाला है, एवं 7. बाहर-भीतर से सर्वतोभावेन अन्तःकरणपर्यन्त स्नान करा देता है, अर्थात् जीव के अन्तःकरण के समस्त पाप-ताप नष्ट कर देता है। इस प्रकार श्रीनामसंकीर्तन की सात भूमिकाएँ हैं। आचाण्डाल पामरपर्यन्त को, इन सात भूमिकाओं पर यथाधिकार पहुँचा देने के कारण, कर्म-ज्ञानादि साधनों की अपेक्षा, श्रीनामसंकीर्तन की ही इस जगत् में पूर्ण विजय है। 'परं विजयते'—पद से श्रीचैतन्यमहाप्रभु ने यह भी शिक्षा दी है कि — जैसे ज्ञान, कर्म आदिक साधन, भक्ति की सहायता के बिना दुर्बल रहते हैं, और अपना पूर्ण फल नहीं दे सकते किन्तु भक्तिबीज-श्रीनामसंकीर्तन ऐसा परापेक्षी नहीं है, अर्थात् यह कर्म, ज्ञान आदि की सहायता की अपेक्षा नहीं करता है, उनके बिना ही परं-केवलं विजयते। (1)

संकीर्तन हैते-पाप-संसार - नाशन।
चित्तशुद्धि, सर्वभक्तिसाधन-उद्‌गम॥

कृष्णप्रेमोद्‌गम, प्रेमामृत-आस्वादन।
कृष्णप्राप्ति, सेवामृत-समुद्रे मज्जन॥

(चैतन्यचरितामृत अ० 20, 13-14)

पीतवरण कलिपावन गोरा।
गाओयइ ऐछन भाव - विभोरा॥ 1॥

चित्तदर्पण - परिमार्जनकारी।
कृष्णकीर्तन जय चित्तविहारी॥ 2॥

हेला - भवदाव - निर्वापणवृत्ति।
कृष्णकीर्तन जय क्लेशनिवृत्ति॥ 3॥

श्रेयः -कुमुदविधु-ज्योत्स्नाप्रकाश।
कृष्णकीर्तन जय भक्ति-विलास॥ 4॥

विशुद्ध विद्यावधू - जीवनरूप।
कृष्णकीर्तन जय सिद्धस्वरूप॥ 5॥

आनन्दपयोनिधि - वर्धनकीर्ति।
कृष्णकीर्तन जय प्लावनमूर्ति॥ 6॥

पदे पदे पीयूष - स्वादप्रदाता।
कृष्णकीर्तन जय प्रेमविधाता॥ 7॥

भक्तिविनोद - स्वात्मस्नपनविधान।
कृष्णकीर्तन जय प्रेमनिदान॥ 8॥

रात्र्यन्ते त्रस्तवृन्देरित - बहुविरवैर्बोधितौ कीरशारी–
पद्यैर्हृद्यैरहृद्यैरपि सुखशयनादुत्थितौ तौ सखीभिः।
दृष्टौ हृष्टौ तदात्वोदित–रतिललितौ कक्खटीगीः –सशंकौ
राधाकृष्णौ सतृष्णावपि निजनिजधाम्न्याप्ततल्पौ स्मरामि॥ 1॥

(गोविन्दलीलामृत में 1/10)

मैं, उन श्रीराधा–कृष्ण का स्मरण करता हूँ कि, जो दोनों, रात्रि के अन्त में व दिवस हो जानेपर राधाकृष्ण की गुप्त–श्रृंगारमयी लीलाएँ अनधिकारीजनों के द्वारा भी जान ली जायँगीं इस कारण भयभीत हुई वृन्दादेवी के द्वारा, प्रेरित किये हुए अनेक प्रकार के पक्षियों की मधुरध्वनियों के द्वारा, तथा शुक-शारिका के द्वारा कर्णप्रिय होने से मनोहर, एवं वियोगजनक होने से अप्रियपद्यों के द्वारा जगाये गये हैं, एवं सुखमयी शय्या से उठे हुए जिन दोनों को श्रीललिता आदि अन्तरंग सखियों ने परस्पर हर्षित एवं तत्कालोचित–रति से मनोहर देखा है। उसके बाद जो दोनों, वहीं पर स्थित होकर, फिर भी विलास की तृष्णा से युक्त होकर भी 'कक्खटी'–नामक बानरी की बोली से शंकित होकर, अपने–अपने भवन में शैया पर पहुँच गये।

देखिया अरुणोदय, वृन्दादेवी व्यस्त हय,
कुञ्जे नाना रव कराइल।
शुक–शारी पद्य शुनि, उठे राधा–नीलमणि,
सखीगण देखि हृष्ट हैल॥
कालोचित सुललित, कक्खटिर रवे भीत,
राधाकृष्ण सतृष्ण हइया।
निज निज गृहे गेला, निभृते शयन कैला,
दुँहे भजि से लीला स्मरिया॥
एइ लीला स्मर आर गाओ कृष्णनाम।
कृष्णलीला प्रेमधन पाबे कृष्णधाम॥

द्वितीय-याम-कीर्तन

[प्रातः लीला भजन— साधु संगे अनर्थ निवृत्ति]
[6 दण्ड = 2.24 मिनट; 5.46 से 8.10 मिनट तक]

नाम्नामकारि बहुधा निजसर्वशक्ति-
स्तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः।
एतादृशी तव कृपा भगवन्! ममाऽपि,
दुर्दैवमीदृशमिहाजनि नाऽनुरागः ॥ 2 ॥

श्रीचैतन्यमहाप्रभु विषाद और दैन्य में कहते हैं कि —

हे भगवन्! जीवों की भिन्न-भिन्न रुचि को रखने के लिये ही तो, आपने अपने मुकुन्द, माधव, गोविन्द, दामोदर, घनश्याम, श्यामसुन्दर, यशोदानन्दन इत्यादि नाम रखे, और प्रत्येक नाम में अपनी संपूर्ण शक्ति भी स्थापित कर दी, एवं स्मरण के विषय में देश-काल-शुद्धाशुद्धी का भी नियम बन्धन तोड़ दिया। हाय प्रभो! आपकी तो जीवों पर ऐसी अहैतुकी कृपादृष्टि वृष्टि है, तथापि मेरा तो ऐसा दुर्भाग्य है कि आपके नाम में अनुराग उत्पन्न नहीं हुआ। (2)

अनेक लोकेर - वान्छा अनेक प्रकार।
कृपाते करिल अनेक नामेर प्रचार॥
खाइते - शुइते यथा - तथा नाम लय।
देश-काल-नियम नाहि, सर्वसिद्धि हय॥
सर्वशक्ति नामे दिला करिया विभाग।
आमार दुर्दैव, नामे नाहि अनुराग॥

(चैतन्यचरितामृत अ0 20,17-19)

तुहुँ दयासागर तारयिते प्राणी,
नाम अनेक तुया शिखाओलि आनि॥ 1॥

सकल शकति देइ नामे तोहारा,
ग्रहणे राखलि नाहि कालविचारा॥ 2॥

श्रीनामचिन्तामणि तोहारि समाना,
विश्वे बिलाओलि करुणा - निदाना॥ 3॥

तुया दया ऐछन परम उदारा।
अतिशय मन्द, नाथ ! भाग हमारा॥ 4॥

नाहि जनमल नामे अनुराग मोर।
भकतिविनोद - चित्त - दुःखे विभोर॥ 5॥

राधां स्नातविभूषितां ब्रजपयाहूतां सखीभिः प्रगे,
तद्गेहे विहितान्नपाकरचनां कृष्णाऽवशेषाऽशनाम्।
कृष्णं बुद्धमवाप्तधेनुसदनं निर्व्यूढगोदोहनं,
सुस्नातं कृतभोजनं सहचरैस्तां चाथ तं चाश्रये॥ 2॥

(गोविन्दलीलामृत में 2 /1)

मैं, उन श्रीमती राधिका का आश्रय लेता हूँ कि, जो प्रात:कालीन स्नान के अनन्तर अलंकृत हुई हैं, एवं व्रजेश्वरी श्रीयशोदा के द्वारा बुलाई गई हैं, तथा उन्हीं के घर में अपनी सखियों के साथ मिल–जुल कर, जिन्होंने श्रीकृष्णसेवार्थ रसोई बनाई है, और श्रीकृष्ण के भोजन कर लेने के बाद, जिन्होंने उनका प्रसाद सेवन किया है। एवं मैं, उन श्रीकृष्ण का आश्रय लेता हूँ कि, जिन्होंने प्रात:काल जागकर गोशाला में जा कर, सखाओं के सहित गोदोहन किया है, तथा भली प्रकार स्नान करके सखाओं के सहित भोजन किया है॥

राधा स्नात-विभूषित, श्रीयशोदा समाहूत,
सखीसंगे तद्गृहे गमन।
तथा पाक विरचन, श्रीकृष्णावशेषाशन,
मध्ये मध्ये दुँहार मिलन॥
कृष्ण निद्रा परिहरि, गोष्ठे गोदोहन करि,
स्नानाशन सहचर संगे।

एइ लीला चिन्ता कर, नामप्रेमे गरगर,
प्राते भक्तजन संगे रंगे॥
एइ लीला चिन्त आर कर संकीर्तन।
अचिरे पाइबे तुमि भाव उद्दीपन॥

तृतीय-याम-कीर्तन

[पूर्वाह्नलीलाभजन—निष्ठा भजन]
[6 दण्ड =2.24 मिनट; 8.10 से 10.34 मिनट तक]

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः॥ 3॥

श्रीचैतन्यमहाप्रभु कहते हैं कि —

अपने को तृण से भी नीचा समझकर, वृक्ष से भी सहनशील बनकर, स्वयं अमानी होकर, दूसरों को मान देनेवाला बनकर, सदैव श्रीहरिनाम-संकीर्तन करता रहे।(3)

उत्तम हञा आपनाके माने 'तृणाधम'।
दुइ प्रकारे सहिष्णुता करे वृक्षसम॥

वृक्ष येन काटिलेह किछुना बोलय।
शुखाइया मैले कारे पानी ना मागय॥

येइ ये मागये, तारे देय आपन धन।
घर्म - वृष्टि सहे, आनेर करये रक्षण॥

उत्तम हञा वैष्णव हबे निरभिमान।
जीवे सम्मान दिबे जानि 'कृष्ण'-अधिष्ठान॥

एइमत हञा येइ कृष्णनाम लय।
श्रीकृष्णचरणे ताँर प्रेम उपजय॥

(चैतन्यचरितामृत अ० 20, 22-26)

श्रीकृष्णकीर्तने यदि मानस तोहार।
परम यतने ताँहि लभ अधिकार॥ 1॥
तृणाधिक हीन, दीन, अकिन्चन, छार।
आपने मानबि सदा छाड़ि' अहंकार॥ 2॥
वृक्षसम क्षमागुण करबि साधन।
प्रतिहिंसा त्यजि', अन्ये करबि पालन॥ 3॥
जीवन - निर्वाहे आने उद्वेग ना दिबे।
पर - उपकारे निज - सुख पासरिबे॥ 4॥
हइलेओ सर्वगुणे गुणी महाशय।
प्रतिष्ठाशा छाड़ि' कर अमानी हृदय॥ 5॥
कृष्ण - अधिष्ठान सर्वजीवे जानि' सदा।
करबि सम्मान सबे आदरे सर्वदा॥ 6॥
दैन्य, दया, अन्ये मान प्रतिष्ठा - वर्जन।
चारि गुणे गुणी हइ करह कीर्तन॥ 7॥
भक्तिविनोद काँदि' बले प्रभु - पाय।
हेन अधिकार कबे दिबे हे आमाय॥ 8॥

पूर्वाह्णे धेनुमित्रैर्विपिनमनुसृतं गोष्ठलोकानुयातं,
कृष्णं राधाप्तिलोलं तदभिसृतिकृते प्राप्ततत्कुण्डतीरम्।
राधां चालोक्य कृष्णं कृतगृहगमनामार्ययार्कार्चनायै,
दिष्टां कृष्णप्रवृत्त्यै प्रहितनिजसखीवर्त्मनेत्रां स्मरामि॥ 3॥

(गोविन्दलीलामृत में 5/1)

मैं, उन श्रीकृष्णचन्द्र का स्मरण करता हूँ कि, जो पूर्वान्ह में गो–गण एवं मित्रों के सहित वृन्दावन में चल दिये हैं, एवं श्रीनन्द–यशोदा आदि व्रजवासी लोग जिनके पीछे–पीछे चल रहे हैं, तथा अपनी अनुनय विनय से व्रजवासियों को लौटाकर, श्रीराधिका की प्राप्ति के लिये जो सतृष्ण हो रहे हैं, अतएव श्रीराधिका के अभिसार के लिये जो श्रीराधाकुण्ड के तीर पर पहुँच गये हैं। मैं, उन श्रीमती राधिका का स्मरण करता हूँ कि, जो वन में जाते हुए श्रीकृष्ण को

देखकर, अपने घर चली जाती हैं, एवं जटिला–नामक अपनी सास के द्वारा जो सूर्यपूजन के निमित्त वन में भेजी गई हैं, तथा श्रीकृष्ण का वृतान्त जानने के लिये, अपने द्वारा भेजी हुई, अपनी सखियों के मार्ग में, जो अपने नेत्रों को प्रेरित करती रहती हैं।

धेनु सहचर संगे, कृष्ण वने याय रंगे,
गोष्ठजन अनुव्रत हरि।
राधासंग लोभे पुनः, राधाकुण्ड तट वन,
याय धेनु संगी परिहरि॥
कृष्णेर इंगित पाञा, राधा निज गृहे याञा,
जटिलाज्ञा लय सूर्यार्चने।
गुप्ते कृष्णपथ लखि, कतक्षणे आइसे सखी,
व्याकुलिता राधा स्मरि मने॥

चतुर्थ–याम कीर्तन

[मध्याह्नलीलाभजन— रुचि भजन]
[12 दण्ड= 4.48 मिनट; 10.34 से 3.22 मिनट तक]

न धनं न जनं न सुन्दरीं, कवितां वा जगदीश! कामये।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे, भवताद्भक्तिरहैतुकी त्वयि॥ 4॥

हे जगदीश! मैं, न धन चाहता हूँ, न जन चाहता हूँ, न सुन्दर कविता ही चाहता हूँ। चाहता हूँ केवल, हे प्राणेश्वर! आपके श्रीचरणकमलों में मेरी जन्म–जन्म में अहैतुकी भक्ति हो।(4)

धन, जन नाहि मागों - कविता सुन्दरी।
शुद्धभक्ति देह' मोरे कृष्ण! कृपा करि॥
अति दैन्ये पुनः मागे दास्यभक्ति–दान।
आपनाके करे संसारी–जीव अभिमान॥

(चैतन्यचरितामृत अ० 20, 30–31)

प्रभु ! तव पदयुगे मोर निवेदन।
नाहि मागि देह–सुख, विद्या, धन, जन॥ 1॥

नाहि मागि स्वर्ग आर मोक्ष नाहि मागि।
ना करि प्रार्थना कोन विभूतिर लागि'॥ 2॥

निजकर्म - गुण - दोषे ये ये जन्म पाइ।
जन्मे जन्मे येन तव नाम - गुण गाइ॥ 3॥

एइमात्र आशा मम तोमार चरणे।
अहैतुकी भक्ति हृदे जागे अनुक्षणे॥ 4॥

विषये ये प्रीति एबे आछये आमार।
सेइमत प्रीति हउक चरणे तोमार॥ 5॥

विपदे सम्पदे ताहा थाकुक समभावे।
दिने दिने वृद्धि हउक नामेर प्रभावे॥ 6॥

पशु - पक्षी ह'ये थाकि स्वर्गे वा निरये।
तव भक्ति रहु भक्तिविनोद–हृदये॥ 7॥

मध्याह्नेऽन्योन्यसंगोदित–विविधविकारादि–भूषाप्रमुग्धौ,
वाम्योत्कण्ठातिलोलौ स्मरमख–ललिताद्यालि–नर्माप्तशातौ।
दोलारण्यांबु–वंशीहृतिरतिमधुपानार्क–पूजादिलीलौ,
राधाकृष्णौ सतृष्णौ परिजनघटया सेव्यमानौ स्मरामि॥ 4॥

(गोविन्दलीलामृत में 8/1)

मैं, उन श्रीराधाकृष्ण का स्मरण करता हूँ कि, जो मध्याह्नकाल में परस्पर के संग से प्रगट हुए, अनेक प्रकार के सात्त्विक विकार रूप भूषणें से अत्यन्त मनोहर हो रहे हैं, एवं प्रेममयी कुटिलता तथा परस्पर मिलन की उत्कण्ठा से, जो अतिशय तृष्णायुक्त हो रहे हैं, एवं कन्दर्परूप–यज्ञ में श्रीललिता–विशाखा आदि सखियों के परिहासरूप शाकल्य से जो सुखी हो रहे हैं, एवं जो दोलालीला, वनविहार, जलविहार, वंशीचोरी, रमण, मधुपान, तथा सूर्यपूजा

आदि लीलाओं में लगे रहते हैं, और जो अपने अन्तरंग-सेवकसमुदाय के द्वारा समयानुसार सेवित होते रहते हैं॥

राधाकुण्डे सुमिलन, विकारादि विभूषण,
वाम्योत्कण्ठ मुग्धभावलीला।
सम्भोग नर्मादि रीति, दोला खेला वंशीहृति,
मधुपान सूर्यपूजा खेला॥
जलखेला वन्याशन, छल सुप्ति वन्याटन,
बहु लीलानन्दे दुइजने।
परिजन सुवेष्ठित, राधाकृष्ण सुसेवित,
मध्याह्नकालेते स्मरि मने॥

पंचम-याम-कीर्तन

[अपराह्नलीलाभजन—कृष्णाऽऽसक्ति]
[6 दण्ड= 2.24 मिनट; 3.22 से 5.46 मिनट तक]

अयि नन्दतनूज! किंकरं पतितं मां विषमे भवाम्बुधौ।
कृपया तव पादपंकजस्थित-धूलि-सदृशं विचिन्तय॥ 5॥

हे नन्दनन्दन! वस्तुत: मैं आपका नित्यकिंकर हूँ, किन्तु अब निज कर्मदोष से विषय संसार-सागर में पड़ा हूँ। काम, क्रोध, मत्सरादि ग्राह मुझे निगलने को दौड़ रहे हैं। दुराशा दुश्चिन्ता की तरंगों में इधर-उधर बह रहा हूँ। कुसंगरूप-प्रबलवायु और भी व्याकुल कर रहा है। ऐसी दशा में आपके बिना मेरा कोई आश्रय नहीं है। कर्म, ज्ञान, योग, तप आदिक तृण-गुच्छों के समान इधर-उधर तैर रहे हैं, पर क्या उनका आश्रय लेकर कोई संसार-सागर के पार जा सकता है? हाँ, कभी-कभी ऐसा तो होता है कि, संसार-सागर में डूबता हुआ जन, उनको भी पकड़ कर, अपने साथ डुबा लेता है। आपकी कृपा के बिना और कोई आश्रय नहीं हो सकता है। केवल आपका नाम ही ऐसी दृढ़ नौका है, जिसके आश्रय से यह जीव, संसारसिन्धु को पार कर सकता है, पर

उसका आश्रय मिले, यह भी आपकी कृपा पर निर्भर है। आप शरणागतवत्सल हैं, मुझ अनाश्रित को, अपने चरणकमलों में संलग्न रजकण के समान जानें, आपकी करुणा के बिना, मुझ साधनशून्य का, संसार से निस्तार का कोई उपाय नहीं है।(5)

तोमार नित्यदास मुञि, तोमा पासरिया।
पड़ियाछों भवार्णवे मायाबद्ध हञा॥
कृपा करि' कर मोरे पदधूलि-सम।
तोमार सेवक, करों तोमार सेवन॥
पुनः अति-उत्कण्ठा, दैन्य हइल उद्गम।
कृष्ण - ठाँइ माँगे प्रेम नामसंकीर्तन॥

(चैतन्यचरितामृत अ0 20, 33–35)

अनादि करम–फले, पड़ि' भवार्णव–जले,
तरिबारे ना देखि उपाय।
ए विषय–हलाहले, दिवानिशि हिया ज्वले,
मन कभु सुख नाहि पाय॥ 1॥
आशा–पाश शत शत, क्लेश देय अविरत,
प्रवृत्ति–ऊर्मिर ताहे खेला।
काम–क्रोध–आदि छय, बाटपाड़े देय भय,
अवसान हैल आसि' वेला॥ 2॥
ज्ञान–कर्म–ठग दुइ, मोरे प्रतारिया लइ',
अवशेषे फेले सिन्धुजले।
ए हेन समये बन्धु, तुमि कृष्ण कृपासिन्धु,
कृपा करि' तोल मोरे बले॥ 3॥
पतित किंकरे धरि', पादपद्म धूलि करि',
देह' भक्तिविनोदे आश्रय।
आमि तव नित्यदास, भुलिया मायार पाश,
बद्ध ह'ये आछि, दयामय॥ 4॥

श्रीराधां प्राप्तगेहां निजरमणकृते क्लृप्तनानोपहारां,
सुस्नातां रम्यवेशां प्रियमुखकमलालोकपूर्णप्रमोदाम्।
कृष्णं चैवापराह्ने व्रजमनुचलितं धेनुवृन्दैर्वयस्यैः,
श्रीराधालोकतृप्तं पितृमुखमिलितं मातृमृष्टं स्मरामि॥ 5॥

(गोविन्दलीलामृत में 19/1)

मैं, उन श्रीमती राधिका का स्मरण करता हूँ कि, जिन्होंने अपराह्नकाल में अपने घर पहुँच कर, भली प्रकार स्नान करके, रमणीय वेष धारण कर, अपने प्यारे श्यामसुन्दर के लिये, कर्पूरकेलि एवं अमृतकेलि आदि अनेक प्रकार के भोज्य उपहार बनाये हैं, एवं वन से व्रज में आते समय, प्रियतम श्रीकृष्ण के मुखारविन्द के दर्शन से, जिनको पूर्ण हर्ष प्राप्त हो रहा है। एवं मैं, उन श्रीकृष्ण का स्मरण करता हूँ कि, जो अपराह्न के समय गो–गण एवं सखाओं के सहित व्रज की ओर चल दिये हैं, एवं मार्ग में मिली हुई श्रीराधिका के दर्शन से तृप्त हो रहे हैं, तथा अपने पिता आदि व्रजवासियों से जो प्रेमपूर्वक मिल रहे हैं, एवं पश्चात् घर जा कर माँ यशोदा ने जिनको स्नान कराया है॥

श्रीराधिका गृहे गेला, कृष्ण लागि विरचिला,
नानाविध खाद्य उपहार।
स्नात रम्य वेश धरि, प्रियमुखेक्षण करि,
पूर्णानन्द पाइल अपार॥
श्रीकृष्णापराह्नकाले, धेनु मित्र लञा चले,
पथे राधामुख निरखिया।
नन्दादि मिलन करि, यशोदा मार्जित हरि,
स्मर मन आनन्दित हञा॥

श्रीराधिकायै नमः

गीतम्

राधे! जय जय माधवदयिते।
गोकुल–तरुणी मण्डल–महिते॥ध्रु0॥
दामोदर - रति - वर्धन - वेशे।
हरिनिष्कुट - वृन्दाविपिनेशे॥ 1॥
वृषभानुदधि - नवशशिलेखे।
ललितासखी! गुणरमितविशाखे॥ 2॥
करुणां कुरु मयि करुणाभरिते।
सनक सनातन - वर्णित - चरिते॥ 3॥

हे माधव – प्रिये! हे गोकुल–तरुणीपूजिते! हे कृष्ण की रतिवर्द्धन–वेशधारिणी ! हे नन्दनन्दन के गृहोद्यानरूप वृन्दावन की अधीश्वरि! हे श्रीराधिके! तुम्हारी जय हो जय हो।

श्रीवृषभानु महाराजरूप समुद्र से उदित नवचन्द्रकला रूपिणि! हे ललिता की प्रियसखी! हे विशाखा के लिए सुखकर सौहार्द–कारुण्य–कृष्णानुकूल्यादि गुणों के द्वारा विशाखा को वशीभूतकारणि! हे कृपापूर्णे ! हे सनक–सनन्दन–सनातन द्वारा वर्णित चरितोंवाली श्रीराधे! तुम्हारी जय हो जय हो। तुम मेरे प्रति करुणा करो।

श्रीकृष्णाय नमः

श्रीगीतम्

(श्रीरूप गोस्वामीपादकृत)

देव! भवन्तं वन्दे।
मन्मानस–मधुकरमर्पय निज, –पद–पंकज–मकरन्दे॥ ध्रु0॥
यद्यपि समाधिषु विधिरपि पश्यति, न तव नखाग्रमरीचिम्।
इदमिच्छामि निशम्य तवाच्युत! तदपि कृपाद्भुतवीचिम्॥
भक्तिरुदञ्चति यद्यपि माधव! न त्वयि मम तिलमात्री।

परमेश्वरता तदपि तवाधिक - दुर्घटघटन - विधात्री॥
अयमविलोलतयाद्य सनातन, कलिताद्भुत - रसभारम्।
निवसतु नित्यमिहामृतनिन्दनि, विन्दन् मधुरिमसारम्॥

हे भगवन् श्रीकृष्ण! मैं आपकी वन्दना करता हूँ। कृपया मेरे मनरूप-भ्रमर को अपने चरणकमलों के मकरन्द में लगा लीजिये, अर्थात् उसको अपने चरणारविन्दों का रस चखा दीजिये, जिससे वह अन्यत्र आसक्ति न करे। यद्यपि ब्रह्मा भी, समाधियों में भी, तुम्हारे चरणनखों के अग्रभाग की एक किरण को भी नहीं देख पाते हैं, तो भी हे अच्युत! तुम्हारी कृपा की आश्चर्यमयी तरंग को सुनकर, अर्थात् 'न शक्यः स त्वया द्रष्टुमस्माभिर्वा बृहस्पते! यस्य प्रसादं कुरुते स वै तं द्रष्टुमर्हति॥ अथापि ते देव! पदाम्बुजद्वयप्रसादलेशानुगृहीत एव।' (भा० 10/14/29) इत्यादि उक्तियों से यह जानकर कि, आपकी प्राप्ति केवल आपकी कृपा से ही साध्य है, यह बात सुनकर, मैं यह चाहता हूँ। हे माधव! यद्यपि तुम्हारे में मेरी तिलमात्र भी भक्ति प्रगट नहीं हो रही है, तो भी तुम्हारी परमेश्वरता तो अतिशय अघटित घटना का विधान करनेवाली है, उसी के द्वारा मेरा मनोरथ पूरा कर दीजिये। हे सनातन! तुम्हारे चरणारविन्द, अमृत का भी तिरस्कार करने वाले हैं, अतः मेरा मनरूप-मधुकर तृष्णारहित होकर, निश्चलतापूर्वक तुम्हारे चरणारविन्दों में ही नित्यनिवास करता रहे, एवं अद्भुतरस के भार को तथा माधुर्य के सार को प्राप्त करता रहे, मेरी यही प्रार्थना है। श्लेषपक्ष में — यह भावार्थ है कि, तुम्हारी कृपा श्रीसनातन गोस्वामी के द्वारा निर्णीत है।

षष्ठ-याम-कीर्तन

[सायंलीलाभजन—भाव]

[6 दण्ड =2.24 मिनट; 5.46 से 8.10 मिनट तक]

नयनं गलदश्रु - धारया वदनं गद्गदरुद्धया गिरा।
पुलकैर्निचितं वपुः कदा तव नामग्रहणे भविष्यति? ॥6॥

हे प्रभो! आपका नाम ग्रहण करते समय, मेरे नयन अश्रुधारा से, मेरा मुख गद्गद वाणी से, और मेरा शरीर पुलकावलियों से कब व्याप्त होगा? (6)

प्रेमधन बिना व्यर्थ दरिद्र जीवन।
'दास' करि' वेतन मोरे देह' प्रेमधन॥

(चैतन्यचरितामृत अ0 20, 37)

अपराध–फले मम, चित्त–भेल वज्रसम,
तुया नामे ना लभे विकार।
हताश हइये हरि, तब नाम उच्च करि,
बड़ दुःखे डाकि बार–बार॥ 1॥

दीन दयामय करुणा–निदान।
भावबिन्दु देइ राखह पराण॥ 2॥

कबे तव नाम–उच्चारणे मोर।
नयने झरब दरदर लोर॥ 3॥

गदगद स्वर कण्ठे उपजब।
मुखे बोल आध आध बाहिराब॥ 4॥

पुलके भरब शरीर हामार।
स्वेद–कम्प–स्तंभ हबे बारबार॥ 5॥

विवर्ण शरीरे हाराओबु ज्ञान।
नाम – समाश्रये धरबुँ पराण॥ 6॥

मिलब हामार किये ऐछे दिन।
रोओये भक्तिविनोद मतिहीन॥ 7॥

सायं राधां स्वसख्या निजरमणकृते प्रेषितानेकभोज्याँ,
सख्यानीतेश–शेषाशन–मुदितहृदां तां च तं च ब्रजेन्दुम्।
सुस्नातं रम्यवेशं गृहमनु जननीलालितं प्राप्तगोष्ठं,
निर्व्यूढोऽस्त्रालिदोहं स्वगृहमनु पुनर्भुक्तवन्तं स्मरामि॥ 6॥

(गोविन्दलीलामृत में 20/1)

मैं, उन श्रीमती राधिका का स्मरण करता हूँ कि, जिन्होंने सायंकाल में अपनी सखी के द्वारा, अपने प्रियतम श्रीकृष्ण के लिये, अनेक प्रकार की भोज्यवस्तु भेज दी हैं, पश्चात् उसी सखी के द्वारा लाये हुए, अपने स्वामी श्रीकृष्ण के प्रसाद पाने से जिनका हृदय हर्षित हो रहा है। मैं, उन श्रीकृष्ण का स्मरण करता हूँ कि, जिन्होंने गोचारण के अनन्तर वन से घर में आकर, भली प्रकार स्नान किया है, मनोहर वेष धारण किया है, तथा माँ यशोदा के द्वारा जिनके ऊपर लाड़–चाव–प्यार किया गया है। पश्चात् गोशाला में पहुँच कर जिन्होंने गोश्रेणी का दोहन किया है। उसके बाद नन्दभवन में जाकर जिन्होंने रात्रिभोजन किया है॥

श्रीराधिका सायंकाले, कृष्ण लागि पाठाइले,
सखीहस्ते विविध मिष्टान्न।
कृष्णभुक्त शेष आनि, सखी दिल सुख मानि,
पाञा राधा हइल प्रसन्न॥
स्नात रम्यवेश धरि, यशोदा लालित हरि,
सखासह गोदोहन करे।
नानाविध पक्क अन्न, पाञा हैल परसन्न,
स्मरि आमि परम आदरे॥

सप्तम–याम–कीर्तन

[प्रदोषलीलाभजन—प्रेम–विप्रलम्भ]
[6 दण्ड = 2.24 मिनट; 8.10 से 10.34 मिनट तक]

युगायितं निमेषेण चक्षुषा प्रावृषायितम्।
शून्यायितं जगत् सर्वं गोविन्दविरहेण मे॥ 7॥

हे सखि! गोविन्द के विरह से, मेरा निमेषमात्र काल भी युग के समान प्रतीत होता है, मेरी आँखों ने वर्षाऋतु का सा रूप धारण कर लिया है, और यह समस्त जगत् मुझे शून्य सा प्रतीत होता है।(7)

उद्वेगे दिवस ना याय, 'क्षण' हइल 'युग'-सम।
वर्षार मेघप्राय अश्रु वरिषे नयन॥

गोविन्द - विरहे शून्य हैल त्रिभुवन।
तुषानले पोड़े येन ना याय जीवन॥

(चैतन्यचरितामृत अ. 20, 40-41)

गाइते गाइते नाम कि दशा हइल।
'कृष्ण नित्यदास मुञि' हृदये स्फुरिल॥ 1॥
जानिलाम, मायापाशे ए जड़ - जगते।
गोविन्द - विरहे दुःख पाइ नाना मते॥ 2॥
आर ये संसार मोर नाहि लागे भाल।
काँहा याइ, कृष्ण हेरि - ए चिन्ता विशाल॥ 3॥
काँदिते काँदिते मोर आँखि बरिषय।
वर्षाधारा हेन चक्षे हइल उदय॥ 4॥
निमेष हइल मोर शतयुग सम।
गोविन्द विरह आर सहिते अक्षम॥ 5॥
शून्य धरातल, चौदिके देखिये, पराण उदास हय।
कि करि, कि करि, स्थिर नाहि हय, जीवन नाहिक रय॥ 6॥
व्रजवासिगण, मोर प्राण राख, देखाओ श्रीराधानाथे।
भकतिविनोद, मिनति मानिया, लओ हे ताहारे साथे॥ 7॥

(अधिकारिभेदे सप्तम गीत)

श्रीकृष्ण-विरह आर सहिते ना पारि।
पराण छाड़िते आर दिन दुइ चारि॥ 1॥
गाइते 'गोविन्द'-नाम उपजिल भावग्राम,
देखिलाम यमुनार कूले।
वृषभानुसुता-संगे, श्याम नटवर रंगे,
बाँशरी बाजाय नीपमूले॥ 2॥

देखिया युगल–धन, अस्थिर हइल मन,
ज्ञानहारा हइलुँ तखन।
कतक्षणे नाहि जानि, ज्ञान–लाभ हइल मानि,
आर नाहि भेल दर्शन॥ 3॥
सखि गो! केमते धरिब पराण।
निमेष हइल युगेर समान॥ 4॥
श्रावणेर धारा, आँखि बरिषय, शून्य भेल धरातल।
गोविन्द–विरहे, प्राण नाहि रहे, केमने बाँचिब बल॥ 5॥
भकतिविनोद, अस्थिर हइया, पुनः नामाश्रय करि'।
डाके, राधानाथ! दिया दर्शन, प्राण राख, नहे मरि॥ 6॥

राधां सालीगणां तामसित–सित–निशायोग्यवेशां प्रदोषे,
दूत्या वृन्दोपदेशादभिसृत–यमुनातीर–कल्पागकुञ्जाम्।
कृष्णं गोपैः सभायां विहितगुणिकलालोकनं स्निग्धमात्रा,
यत्नादानीय संशायितमथ निभृतं प्राप्तकुञ्जं स्मरामि॥

(गोविन्दलीलामृत में 21/1)

मैं, सखियों के सहित उन श्रीमती राधिका का स्मरण करता हूँ कि, जिन्होंने प्रदोषकाल में, कृष्णपक्ष एवं शुक्लपक्ष की रात्रियों में धारण करने योग्य वेष को धारण किया है, एवं वृन्दादेवी के उपदेश से जिन्होंने अपनी अंतरंग–दूती के साथ, यमुनातीरस्थ कल्पवृक्ष की निकुञ्ज में अभिसरण किया है। एवं मैं, उन श्रीकृष्ण का स्मरण करता हूँ कि, जिन्होंने श्रीनन्दजी की सभा में, समस्त गोपों के सहित, गुणीजनों के द्वारा दिखाई गई, अनेक कलाओं का अवलोकन किया है। पश्चात् स्नेहमयी माता के द्वारा, सभा से यत्नपूर्वक बुलवा कर, दुग्धपान करा कर, जिनका शयन कराया गया है। पश्चात् जो गुप्तरूप से संकेतकुञ्ज में पहुँच जाते हैं॥

राधा वृन्दा उपदेशे, यमुनोपकुलदेशे,
सांकेतिक कुञ्जे अभिसरे।
सितासित निशायोग्य, धरि वेश कृष्णभोग्य,
सखीसंगे सानन्द अन्तरे॥
गोपसभा माझे हरि, नानागुणकला हेरि,
मातृयत्ने करिल शयन।
राधासंग सोङरिया, निभृते बाहिर हइया,
प्राप्तकुञ्ज करिये स्मरण॥

अष्टम-याम-कीर्तन

[रात्रिलीलाभजन—प्रेमभजन-सम्भोग]
[12 दण्ड—4.48 मिनट; 10.34 से 3.22 मिनट तक]

आश्लिष्य वा पादरतां पिनष्टु मा-मदर्शनान्मर्महतां करोतु वा।
यथा तथा व विदधातु लम्पटो, मत्प्राणनाथस्तु स एव नाऽपरः॥ 8॥

वह लंपट अपनी पादसेवा में आसक्त, मुझ दासी को प्रगाढ़ आलिंगन से भींचे, किंवा अपने दर्शन न देकर, मुझे मर्माहत करते हुए पीड़ा भी पहुँचाये, या अपनी जो अभिरुचि हो सो करे, परन्तु वही मेरा प्राणनाथ है। उनके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है।(8)

आमि कृष्णपद-दासी, तें हो रससुखराशि,
आलिंगिया करे आत्मसाथ।
किबा ना देय दरशन, ना जाने मोर तनुमन,
तबु तें हो मोर प्राणनाथ॥

तावुत्कौ लब्धसंगौ बहुपरिचरणैर्वृन्दयाराध्यमानौ,
प्रेष्ठालीभिर्लसन्तौ विपिनविहरणैर्गानरासादिलास्यैः।
नानालीलानितान्तौ प्रणयिसहचरीवृन्दसंसेव्यमानौ,
राधाकृष्णौ निशायां सुकुसुमशयने प्राप्तनिद्रौ स्मरामि॥ 8॥

(गोविन्दलीलामृत में 22/1)

मैं, उन श्रीराधाकृष्ण का स्मरण करता हूँ कि, जो दोनों, रात्रि में पहले परस्पर मिलने के लिए उत्कण्ठित हो रहे हैं। पश्चात् जिनको परस्पर मिलन प्राप्त हो गया है, एवं वृन्दादेवी के द्वारा अनेक प्रकार की सेवाओं से जिनकी आराधना हो रही है। पश्चात् अपनी प्रियसखियों के सहित वनविहार, गायन, रासलीला आदि में किये गये नृत्यों से जो सुशोभित हो रहे हैं, तथा अनेक लीलाओं से परिश्रान्त होकर, जो प्रेमभरी सहचरीश्रेणी के द्वारा व्यंजन, शीतलजल, तांबूल, एवं पादसंवाहन आदि के द्वारा सेवित हो रहे हैं, पश्चात् मनोहर पुष्प-शैया पर जो शयन कर रहे हैं।

वृन्दा परिचर्या पाञा, प्रेष्ठालिगणेरे लञा,
राधाकृष्ण रासादिक लीला।
गीतलास्य कैल कत, सेवा कैल सखी यत,
कुसुमशय्याय दुँहे शुइला॥
निशाभागे निद्रा गेल, सबे आनन्दित हैल,
सखीगण परानन्दे भासे।
ए सुख-शयन स्मरि, भज मन राधा-हरि,
सेइ लीला प्रवेशेर आशे॥

हिन्दी–कीर्त्तन

भजन वही गाने चाहियें जो किसी शुद्ध भक्त द्वारा रचित हों या अनुमोदित हों। कपोल–कल्पित या भगवद्‌विमुख अशरणागत व्यक्ति द्वारा रचित या गाए गए, हरिभजन की तरह लगने वाले, भजन को गाने से निश्चित ही मंगल में सन्देह रहता है।

हे मेरे गुरुदेव करुणा सिन्धु करुणा कीजिये।
हूँ अधम, अधीन, अशरण, अब शरण में लीजिये॥
खा रहा गोते हूँ मैं, भव–सिन्धु के मंझधार में।
आसरा है दूसरा कोई, न इस संसार में॥
मुझमें है जप तप न साधन, और नहीं कुछ ज्ञान है।
निर्लज्जता है एक बाकी, और बस अभिमान है॥
पाप बोझे से लदी, नैया भंवर में जा रही।
नाथ दौड़ो अब बचा लो, जल्दी डूबी जा रही॥
आप भी यदि छोड़ दोगे, फिर कहाँ जाऊँगा मैं।
जन्म – दुःख से नाव कैसे पार कर पाऊँगा मैं॥
सब जगह मैंने भटक कर, अब शरण ली आपकी।
पार करना या न करना, दोनों मरज़ी आपकी॥
हे मेरे गुरुदेव करुणा सिन्धु करुणा कीजिये।
हूँ अधम, अधीन, अशरण, अब शरण में लीजिये॥

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीगुरु–चरणकमल भज मन,
गुरु–कृपा बिना नहीं कोई साधन बल, भज मन भज–अनुक्षण॥ 1॥
श्रीगुरु–चरणकमल भज मन,
मिलता नहीं ऐसा दुर्लभ जन्म, भ्रमत ही चौदह भुवन।
किसी को मिलते हैं अहोभाग्य से, हरिभक्तों के दर्शन॥ 2॥
श्रीगुरु–चरणकमल भज मन,
कृष्ण कृपा की आनन्द मूर्ति, दीनन करुणानिधान।
ज्ञान – भक्ति – प्रेम तीनों प्रकाशित, श्रीगुरु पतितपावन॥ 3॥
श्रीगुरु चरणकमल भज मन,
श्रुति–स्मृति इतिहास सभी मिले, देखत स्पष्ट प्रमाण।
तन – मन जीवन गुरु – पदे अर्पण, सदा श्रीहरिनाम रटन॥ 4॥

▲ ▲ ▲ ▲

और कौन है ऐसा प्रभु दयालु महान।
प्रेमदाता शिरोमणि पतितपावन॥ 1 ॥
गोलोकधाम में बैठत जो है।
भक्तों के चित्तहारी
नदीया में अब प्रकटे सो है।
अपने प्रेम–भिखारी॥ 2 ॥
भाव–मग्न सदा नाचत रंगे।
नाम अनुक्षण भक्तों के संगे
भ्रमत गौरहरि प्रेम तरंगे।
देखत जग जन पुलकित अंगे॥ 3 ॥
पापी–तापी–नीच छोड़त नांहि।
व्रज–प्रेम बांटत देखत जो ही
राधा माधव जू का देहो प्रसाद।
श्रीचैतन्य गोसाईं ॥ 4 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीगौर–गोपाल कीर्तन

सुन्दर लाला शचीर–दुलाला, नाचत श्रीहरि कीर्त्तन में।
भाले चन्दन तिलक मनोहर, अलका शोभे कपाल में॥ 1 ॥
शिरे चूड़ा दरश निराले, वन फूलमाला हिया पर दोले।
पहिरन, पीत–पीताम्बर शोभे, नूपुर रुणु–झुनु चरणन में॥ 2 ॥
कोई गायत है राधा–कृष्ण नाम,कोई गायत है हरिगुण गान।
मृदंग ताल मधुर रसाल, कोई गायत है रंग में॥ 3 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

जय गौरहरि जय गौरहरि जय गौरहरि जय गौरहरि ।
जय गौरहरि जय गौरहरि जय गौरहरि जय गौरहरि ॥
कीर्त्तनकारी, नदिया बिहारी, स्वयं अवतारी गौरहरि ।
भाव–रसधारी, पतित उद्धारी, भव दु:खहारी गौरहरि ॥
रूप रसाला, नयन विशाला, परम कृपाला गौरहरि ॥
दीन दयाला, प्रणतपाला, शचीर–दुलाला गौरहरि ॥

▲ ▲ ▲ ▲

जय जय राधे कृष्ण गोविन्द।
राधे गोविन्द, राधे गोविन्द ॥ 1 ॥

जय जय श्यामसुन्दर, मदनमोहन, वृन्दावनचन्द्र।
जय जय राधारमण, रासविहारी, श्रीगोकुलानन्द ॥ 2 ॥

जय जय रासेश्वरी, विनोदिनी, भानुकुलचन्द्र।
जय जय ललिता, विशाखा आदि यत सखीवृन्द ॥ 3 ॥

जय जय श्रीरूप मंजरी आदि मंजरी–अनंग।
जय जय पौर्णमासी, कुन्दलता जय वीरावृन्द ॥ 4 ॥

सबे मिलि' कर कृपा आमि अति मन्द।
कृपा करि' देह युगल चरणारविन्द ॥ 5 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

राधे कृष्ण गोविन्द, गोपाल केशव माधव।
गोविन्द केशव माधव, गोपाल केशव माधव ॥ 1 ॥

कृष्ण – कृष्ण मैं पुकारूँ, तेरे दर के सामने।
दिल तो मेरा हर लिया, गोविन्द–माधव–श्याम ने ॥ 2 ॥

खम्भे से प्रह्लाद को, तुमने बचाया था प्रभु।
द्रौपदी की लाज राखी, कौरव दल के सामने ॥ 3 ॥

वंशी वाले तेरी करुणा के भिखारी हैं प्रभु।
तेरी चर्चा हम करेंगे, हर बशर के सामने ॥ 4 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

राधे–राधे, राधे–राधे।
वृन्दावन विलासिनी, राधे – राधे ॥ 1 ॥
वृषभानुनन्दिनी राधे–राधे।
गोविन्दानन्दिनी, राधे – राधे ॥ 2 ॥
कानुमनोमोहिनी राधे–राधे।
अष्टसखीर शिरोमणि राधे – राधे ॥ 3 ॥
परम करुणामयी राधे–राधे।
प्रेम – भक्ति प्रदायिनी, राधे – राधे ॥ 4 ॥
ऐ बार मोरे दया करो, राधे–राधे।
अपराध क्षमा करो, राधे – राधे ॥ 5 ॥
सेवा अधिकार देओयो, राधे–राधे।
तोमार कांगाल तोमाय डाके राधे–राधे ॥ 6 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

मदन गोपाल शरण तेरी आयो।
चरण कमल की सेवा दीजो,
चेरो करि राखो घर जायो॥
धन्य धन्य मात पिता सुत बन्धु,
धन्य जननी जिन गोद खिलायो।
धन्य धन्य चरण चलत तीर्थ को,
धन्य गुरु जिन हरिनाम सुनायो।
जे नर विमुख भये गोविन्द सों,
जन्म अनेक महादुःख पायो॥
'श्रीभट्ट' के प्रभु दियो अभय–पद,
यम डरप्यो जब दास कहायो॥

▲ ▲ ▲ ▲

प्रभु मैं हूँ तेरे चरणों का दास।
तेरे चरण बिसरें न छूटे, बन्धन माया फाँस॥
तेरी माया मोहनी छाया, शक्ति अमिट अपार।
यह सब कौन, पार जो पावे, देव–असुर नरनार॥
योगी, ऋषि और तपस्वी, कितने जन्म बितावें।
बिना तुम्हारी कृपा अहैतुकी, कौन दरस तेरा पावे॥
पापी नहीं महा अपराधी, कीजिए कृपा कृपाल।
केवल है विश्वास तुम्हारो, हे नटवर गोपाल॥

▲ ▲ ▲ ▲

मोहन प्यारे हो कन्हैया, नाम अनुपम भावे।
नन्द के लाला, यशोदादुलाला, सब कोई जन गावे, कन्हैया॥ 1॥
राधारमण मदनमोहन प्रभु, यमुना – पुलिनबिहारी।
कृष्ण गोविन्द मुरलीमनोहर, गोवर्धन गिरिधारी, कन्हैया॥ 2॥
अघ–बक–पूतना–कंस के नाशक, राधाकुण्डतट वनचारी।
व्रजजनरन्जन गोपीप्रमोदन, चन्चल नटन, मुरारि, कन्हैया॥ 3॥
मधुर नाम अवतार तुम्हारा, दीनजनन आधार।
नाम–रूप में भेद न कोई, कीजिये कृपा मुरार, कन्हैया॥ 4॥
ऐसा और नहीं पापी जन, जैसा मैं हूँ नाथ।
निजजन शरण देहो करुणामय, कीजिये मोहे सनाथ॥ 5॥

▲ ▲ ▲ ▲

भज मन दीनदयाल, नटवर गोपाला,
गोपाला मुरलीवाला, गोपाला नन्दलाला। भज........
भीलनी के बेर, सुदामा के तन्दुल,
रुचि रुचि भोग लगायो, नटवर गोपाला। भज........
दुर्योधन के मेवा त्यागे, भूख लगी तब उठकर भागे,
साग विदुर घर खाये, नटवर गोपाला। भज........

ज़हर का प्याला, राणाजी ने भेजा,
अमृत दियो बनाय, नटवर गोपाला। भज........
सर्पों की पेटी, राणाजी ने भेजी,
माला दियो बनाय, नटवर गोपाला। भज........
द्रुपदसुता जब दुष्टों ने घेरी, राखि लाज करि न देरी,
आकर चीर बढ़ाय, नटवर गोपाला। भज........

▲ ▲ ▲ ▲

कृष्ण नाम तूँ भज ले मनवा, भवसागर तर जायेगा।
जो न तूने भजन किया, तो फिर पाछे पछतायेगा॥

क्या लेकर तू आया जगत में, क्या लेकर तू जायेगा।
मुट्ठी बांधे आया जगत में, हाथ पसारे जायेगा॥

धन दौलत और माल खज़ाना, संग नहीं कुछ जाना है।
इस दुनियाँ से रिश्ता तेरा, इकदिन सब छुट जाना है॥

दो दिन यहाँ पड़ा है मूरख, फिर सच्चे घर जायेगा।
जो न तूने भजन किया, तो फिर पाछे पछतायेगा॥

मानुष चोला पाया है तो, हरिनाम का जाप करो।
चरणभक्ति प्रभु मुझको देकर, मेरा भी उद्धार करो॥

माया मोह को छोड़कर मूरख, तू ऊपर उठ जायेगा।
कृष्णनाम तूँ भजले मनवा, भवसागर तर जायेगा॥

▲ ▲ ▲ ▲

हरि मैं दास तुम्हारो।
मुझे न अपने दिल से बिसारो॥
मैं दास तुम्हारो-----
भव जलधारा दुस्तरपारा।
डूब रहा हूँ पार उतारो॥

परम कृपाला, दीन दयाला।
करुणा करी निज नैन निहारो॥
मैं दास तुम्हारो––––
क्षमा कीजिये, निज–सेवा दीजिये।
मेरे अवगुण लाख हज़ारों॥
पतित का बन्धु तू है, मैं चरणों का चेरो।
दीनजनन भवबन्ध निवारो, मैं दास तुम्हारो॥

▲ ▲ ▲ ▲

व्रज–जन मनसुखकारी।
राधे–श्याम श्यामा–श्याम॥
मोर मुकुट मकराकृत कुण्डल, गल वैजयन्तीमाल।
चरणन नूपुर रसाल, राधे........
सुन्दर वदन कमलदल लोचन, बाँकी चितवनहारी।
मोहन वंशी विहारी। राधे ....
वृन्दावन में धेनु चरावे, गोपीजन मनहारी।
श्रीगोवर्धनधारी। राधे ....
राधा–कृष्ण मिलि अब दोऊ, गौर रूप अवतारी।
कीर्तन धर्म प्रचारी। राधे ....
तुम बिन मेरे और न कोई, नामरूप अवतारी।
चरणन में बलिहारी। राधे ....

▲ ▲ ▲ ▲

ओ मन! प्रेम से भजो श्यामराय।
प्रेम बिना जँही कछु नहीं भावे॥
मोहन मूर्ति झलकत जँही,
मुरली बजावत गोपी मन मोही।
मोरमुकुट सिरभूषण सोही॥ प्रेम ....

गोवर्धनधारी कुन्जबिहारी,
राधावल्लभ ब्रज हितकारी।
व्रजवासिन के प्रेमभिखारी॥ प्रेम ....
कौन जानत सो प्रेम की ओर,
आप विमोहित राधा मन चोर।
करुणा बिना नहीं दीखत ठौर॥ प्रेम ....

▲ ▲ ▲ ▲

प्रबल प्रेम के पाले पड़कर , हरि का नियम बदलते देखा।
अपना मान भले टल जाये, पर भक्त का मान न टलते देखा॥
जिनकी केवल कृपादृष्टि से, सभी सृष्टि को पलते देखा,
उनको गोकुल के गोरस पर, सौ–सौ बार मचलते देखा॥
जिनके चरण–कमल कमला के, करतल से न टलते देखा,
उनको ब्रज कराल कुन्जन में, कंटक पद पर चलते देखा।
जिनका ध्यान शुक – सनकादि से न सम्भलते देखा,
उनको ग्वाल – बाल संग में, लेकर गेंद उछलते देखा॥
जिनकी बंक भृकुटि के भय से, सागर सप्त उछलते देखा,
उनको यशोदाजी के भय से, सौ–सौ बार बिलखते देखा॥

▲ ▲ ▲ ▲

हरिनाम सुमर सुख पायेगा, मत भूल मनुष्य पछतायेगा,
यह तेरा मेरा झूठा है, तू हरि का है, हरि तेरा है।
हरिबोल से ही तर जायेगा, मत भूल मनुष्य पछतायेगा॥ 1॥
सुत मात पिता भ्राता बन्धु, इन सबसे बड़ा करुणासिन्धु।
जो अन्तिम साथ निभायेगा, मत भूल मनुष्य पछतायेगा॥ 2॥
धन जन यौवन पर फूल रहा, झूठे जीवन पर भूल रहा।
ये फूल तेरा कुम्हलायेगा, मत भूल मनुष्य पछतायेगा॥ 3॥

▲ ▲ ▲ ▲

अब तो माधव मोहे उबार।
दिवस बीते रैन बीते, बार बार पुकार॥ 1॥
नाव है मझधार भगवन्, तीर कैसे पाये।
घिरि है घनघोर बदली, पार कौन लगाये॥ 2॥
काम क्रोध समेत तृष्णा रही है पल–छिन घेर।
नाथ दीना–नाथ कृष्ण, मत लगाओ देर॥ 3॥
दौड़ कर आये बचाने, द्रौपदी की लाज।
द्वार तेरा छोड़कर, किस दर जाऊँ आज॥ 4॥

▲ ▲ ▲ ▲

अब तो हरिनाम लौ लागी।
सब जग को यह माखन चोरा, नाम धरयौ बैरागी॥ 1॥
कित छोड़ी वह मोहन मुरली, कित छोड़ी सब गोपी।
मूँड़ मुंड़ाय डोरी कटि बान्धी, माथे मोहन टोपी॥ 2॥
मात यशोमति माखन कारण, बान्धे जाको पाँव।
श्यामकिशोर भयो नव गौरा, चैतन्य जाको नाम॥ 3॥
पीताम्बर को भाव दिखावे, कटि कोपीन कसे।
गौर – कृष्ण की दासी मीरा, रसना कृष्ण बसे॥ 4॥

▲ ▲ ▲ ▲

आलि! म्हाँने लागे वृन्दावन नीको।
घर घर तुलसी ठाकुर पूजा, दरसन गोविन्द जी को॥ 1॥
आली! म्हाँने लागे वृन्दावन नीको।
निरमल नीर बहत जमुना में, भोजन दूध दही को।
रतन–सिंहासन आप बिराजै, मुकट धरयो तुलसी को॥ 2॥
आली! म्हाँने लागे वृन्दावन नीको।
कुन्जन कुन्जन फिरत राधिका, सबद सुणत मुरली को।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, भजन बिना नर फीको॥ 3॥

▲ ▲ ▲ ▲

अब मैं शरण तिहारी जी, मोहे राखो कृपानिधान।
अजामिल अपराधी तारे, तारे नीच सदान।
जल डूबत गजराज उबारे, गणिका चढ़ी विमान॥
और अधम तारे बहुतेरे, भाखत सन्त – सुजान।
कुब्जा नीच भीलनी तारी, जाने सकल जहान॥
कहँ लग कहूं गिणत नहिं आवे, थकि रहे वेद–पुराण।
मीरा दासी शरण तिहारी, सुनिये दोनों कान॥

▲ ▲ ▲ ▲

हे गोविन्द राखो शरण अब तो जीवन हारे।
नीर पीवन हेतु गयो सिन्धु के किनारे।
सिन्धु बीच बसत ग्राह चरण धरि पछारे॥ 1॥
चार प्रहर युद्ध भयो ले गयो मझधारे।
नाक कान डुबन लागे कृष्ण को पुकारे॥ 2॥
द्वारिका में शब्द भयो शोर भयो भारे।
शंख, चक्र, गदा, पद्म, गरुड़ ले पधारे॥ 3॥
सूर कहे श्याम सुनो शरण मैं तिहारे।
अब की बेर पार करो हे नन्द के दुलारे॥ 4॥

▲ ▲ ▲ ▲

सोई रसना जो हरिगुन गावै।
नैनन की छबि यहै चतुरता, जो मुकुन्द–मकरन्दहि ध्यावै॥ 1॥
निर्मल चित्त तौ सोई साँचो, कृष्ण बिना जिय और न भावै।
श्रवनन की जु यहै अधिकाई, सुनि हरि–कथा सुधा–रस पावै॥ 2॥
कर तेई जे स्यामहि सेवैं, चरननि चलि वृन्दावन जावै।
सूरदास जैये बलि ताके, जो हरि जू सों प्रीति बढ़ावै॥ 3॥

▲ ▲ ▲ ▲

रे मन , कृष्णनाम करि लीजै।
गुरु के वचन अटल करि मानहि, साधु समागम कीजै॥ 1॥
पढ़िये गुनिये भगति भागवत, और कहा कथि कीजै।
कृष्ण–नाम बिनु जन्म बादिही, बिरथा काहे कीजै॥ 2॥
कृष्णनाम रस बह्यो जात है, तृष्णावन्त है पीजै।
सूरदास हरिसरन ताकिये, जनम सफल करि लीजै॥ 3॥

▲ ▲ ▲ ▲

जो सुख होत गोपालहि गाये।
सो सुख होत न जप तप कीन्हें, कोटिक तीर्थ नहाये॥ 1॥
दिये लेत नहिं चार पदारथ, चरन–कमल चित लाये।
तीनि लोक तृन सम करि–लेखत, नन्द–नन्दन उर आये॥ 2॥
वंशीवट, वृन्दावन, यमुना, तजि वैकुण्ठ न जाये।
सूरदास हरि को सुमिरन करि, बहुरि न भव–जल आये॥ 3॥

▲ ▲ ▲ ▲

सब तजि भजिए नन्दकुमार।
और भजे तैं काम सरै नहिं, मिटै न भव – जंजाल॥ 1॥
जिहिं जिहिं जौनि जन्म धारयौ, बहुत जोरयौ अघ कौ भार।
तिहि काटन कौं समरथ हरि कौं, तीछन नाम–कुठार॥ 2॥
वेद, पुरान, भागवत, गीता, सब कौ यह मत सार।
भव–समुद्र हरि–पद–नौका, बिनु कोऊ न उतारै पार॥ 3॥
यह जिय–जानि, इन्हीं छिन भजि, दिन बीते जात असार।
सूर पाइ यह समौ लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार॥ 4॥

▲ ▲ ▲ ▲

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जिन तनु दियो ताहि विसरायो, ऐसौ नमक – हरामी ॥ 1 ॥
भरि भरि उदर विषय को धायो, जैसे सूकर–ग्रामी।
हरिजन छाँड़ि हरि विमुखन की, निशि–दिन करत गुलामी ॥ 2 ॥
पापी कौन बड़ो जग मोते सब पतितन में नामी।
सूर पतित को ठौर कहाँ है, तुम बिन श्रीपति स्वामी ॥ 3 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

भजो रे मन, कृष्ण–नाम सुखदाई।
कृष्ण–नाम के दो अक्षर में, सब सुख शान्ति समाई ॥ 1 ॥
कृष्ण – नाम लेत मुख से, भवसागर तर जाई।
कृष्ण–नाम भजले मन मूरख, बनत बनत बन जाई ॥ 2 ॥
कृष्ण–नाम के कारण बन गई, पागल मीराबाई।
गणिका गिद्ध अजामिल तारे, तारे सदन कसाई ॥ 3 ॥
जूठे बेरन में शबरी के, भर गई कौन मिठाई।
मीठे समझ के ना प्रभु खाये, प्रेम की थी अधिकाई ॥ 4 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

छाँड़ि मन, हरि–विमुखन को संग।
जिनके संग कुबुद्धि उपजत है, परत भजन में भंग ॥
कहा होत पय पान कराये, विष नहिं तजत भुजंग।
कागहि कहा कपूर चुगाये, स्वान न्हवाये गंग ॥
खर को कहा अरगजा–लेपन, मरकट भूषण अंग।
गज को कहा न्हवाय सरितन, बहुरि धरै खहि छंग ॥
पाहन पतित बाँस नहीं बेधत, रीतो करत निषंग।
सूरदास खल कारी कामरि, चढ़त न दूजो रंग ॥

▲ ▲ ▲ ▲

जगत में कोई नहिं तेरा रे।
छाड़ वृथा अभिमान, त्याग दे मेरा – मेरा रे॥ 1॥

काल कर्म बस जग–सराय, बिच कीन्हा डेरा रे।
इस सराय में सभी मुसाफिर, रैन–बसेरा रे॥ 2॥

जिस तन को तू सदा सँवारे, साँझ–सवेरा रे।
इक दिन मरघट पड़े, भस्म का होकर ढेरा रे॥ 3॥

मात – पिता, भ्राता, सुत–बान्धव, नारी चेरा रे।
अन्त न होय सहाय, काल जब दैवे घेरा रे॥ 4॥

जग का सारा भोग सदा, कारन दुःख केरा रे।
भज मन हरि का नाम, पार हो भव–जल बेरा रे॥ 5॥

दीनदयालु भक्तवत्सल, हरि मालिक तेरा रे।
दीन होय उनके चरनों में, कर ले डेरा रे॥ 6॥

▲ ▲ ▲ ▲

दुर्जन संग कबहूँ नहिं कीजै।
दुर्जन – मिलन सदा दुखदाई, तिनसों पृथक रहीजै॥ 1॥

दुर्जन की मीठी बानी सुनि, तनिक प्रतीति न कीजै।
छाड़िय विष सम ताहि निरन्तर, मनहिं थान जनि दीजै॥ 2॥

दुर्जन संग कुमति अति उपजै, हरि मारग मति छीजै।
छूटै प्रेम – भजन श्रीहरि को, मन विषयन में भीजै॥ 3॥

जिनसे सकल शान्ति सुख मन के, सिर धुनि–धुनिकर मीजै।
मन अस दुर्जन दुखनिधि परिहरि, सत–संगत रति कीजै॥ 4॥

▲ ▲ ▲ ▲

नित नहाने हरि मिलें, तो जल जन्तु होइ।
फल, मूल खाकर हरि मिलें, तो बहुत बादुर बदराइ ॥ 1 ॥

तृण खाकर हरि मिलें, तो बहुत मृगी अजा।
स्त्री छोड़कर हरि मिलें, तो बहुत रहे हैं खोजा ॥ 2 ॥

दूध पीकर हरि मिलें, तो बहु वत्स बाला।
मीरा कहे बिना प्रेम से, नहिं मिले नन्दलाला ॥ 3 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

धन्य कलि तेरा तमाशा, दुःख लगे और हाँसी,
सच्चा कहे तो मारे लट्ठा, झूठा जगत् भुलाये।
गोरस गली गली फिरे, सुरा बैठत बिकाये ॥ 1 ॥

दूध दुह कर कुत्ता पाले, बछड़ा रहे भूखा।
साले को उत्तम खिलावे, बाप न पावे रूखा ॥ 2 ॥

घर की बौहरी प्रीत ना पावे, चित्त चुराये दासी।
धन्य कलि तेरा तमाशा, दुःख लगे और हाँसी ॥ 3 ॥

चोर को छोड़े, साध को बाँधे, पथिक को लगाये फाँसी।
धन्य कलि तेरा तमाशा, दुःख लगे और हाँसी ॥ 4 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

नादान समझ ले जी में तू, इक रोज तो तुझको जाना है।
यह मानुष जन्म दोबारा लेकर, फिर तुझको नहीं आना है ॥

तू कहता मेरा मेरा है, यह मोह माया का घेरा है।
उठ जाग अभी सवेरा है, नहीं फिर पीछे पछताना है।

दुनियाँ से प्रीत उठा ले तू, ईश्वर से प्रीत बढ़ा ले तू ॥
भगवान का नाम जरा ले तू, नाम से प्रीत बढ़ाना है।

▲ ▲ ▲ ▲

यशोमति – स्तन्यपायी, श्रीनन्दनन्दन।
इन्द्रनीलमणि, ब्रज – जनेर जीवन॥
श्रीगोकुल – निशाचरी, पूतना–घातन।
दुष्ट तृणावर्त्त–हन्ता, शकट भन्जन॥
नवनीतचोर, दधिहरण कुशल।
यमल–अर्जुन भन्जी, गोविन्द गोपाल॥

▲ ▲ ▲ ▲

दामोदर वृन्दावन, गोवत्स–राखाल।
वत्सासुरान्तक हरि, निजजनपाल॥
बकशत्रु, अघहन्ता, ब्रह्मविमोहन।
धेनुक–नाशन कृष्ण, कालियदमन॥
पीताम्बर शिखिपिच्छधारी, वेणुधर।
भाण्डीरकानन–लील, दावानल हर॥

▲ ▲ ▲ ▲

नटवर गुहाचर, शरतविहारी।
वल्लभीवल्लभ देव, गोपीवस्त्रहारी॥
यज्ञ पत्नीगण प्रति, करुणार सिन्धु।
गोवर्धनधृक माधव, व्रजवासि–बन्धु॥
इन्द्रदर्पहारी, नन्दरक्षिता, मुकुन्द।
श्रीगोपीबल्लभ रास–क्रीड़, पूर्णानन्द॥

▲ ▲ ▲ ▲

कलियुगपावन विश्वम्भर , गौड़चित्तगगन–शशधर॥
कीर्तन–विधाता, परप्रेमदाता , शचीसुत पुरटसुन्दर॥

▲ ▲ ▲ ▲

कृष्णचैतन्य अद्वैत प्रभु नित्यानन्द,
गदाधर श्रीनिवास मुरारि मुकुन्द।
स्वरूप–रूप–सनातन–पुरी–रामानन्द॥

▲ ▲ ▲ ▲

निताइ गौरांग, निताई गौरांग,
प्रेम दाता शिरोमणि, निताई गौरांग।
अब की बार दया करो, निताई गौरांग,
अपराध क्षमा करो, निताइ गौरांग।
सेवा अधिकार देओ, निताइ गौरांग॥

▲ ▲ ▲ ▲

जय गोद्रुमपति गोरा।
निताइ – जीवन, अद्वैतेर धन,
वृन्दावन – भाव – विभोरा।
गदाधर–प्राण, श्रीवास–शरण,
कृष्णभक्तमानस – चोरा॥

▲ ▲ ▲ ▲

(जय) मोर मुकुट पीताम्बरधारी।
(जय) मुरलीधर गोवर्धनधारी॥
श्रीराधामाधव कुन्जबिहारी, मुरलीधर गोवर्धनधारी।
(जय) यशोदानन्दन कृष्ण मुरारी, मुरलीधर गोवर्धनधारी।
(जय) गोपीजनवल्लभ वंशीविहारी, मुरलीधर गोवर्धनधारी॥

▲ ▲ ▲ ▲

कृष्ण गोविन्द हरे। गोपीवल्लभ शौरे॥ 1॥
श्रीनिवास दामोदर श्रीराम मुरारे।
नन्दनन्दन माधव नृसिंह कंसारे॥ 2॥

▲ ▲ ▲ ▲

राधावल्लभ माधव श्रीपति मुकुन्द,
गोपीनाथ मदनमोहन रास – रसानन्द।
आनन्द–सुखद–कुन्ज–विहारी–गोविन्द॥

▲ ▲ ▲ ▲

गोविन्द हरे, गोपाल हरे। जय जय प्रभु दीन दयाल हरे।
नन्दलाल हरे घनश्याम हरे। चित्त चोर यशोदा लाल हरे॥
जगदीश हरे जगन्नाथ हरे। जय मात यशोदा के लाल हरे॥
जय राम हरे जय कृष्ण हरे। जय जय शचीनन्दन गौर हरे॥

▲ ▲ ▲ ▲

राम कृष्ण वासुदेव मदनमोहन हरि हरि।
राम कृष्ण वासुदेव श्रीगोविन्द हरि हरि।
राम कृष्ण वासुदेव गोपीनाथ हरि हरि।
राम कृष्ण वासुदेव नित्यानन्द हरि हरि।
राम कृष्ण वासुदेव श्रीगौरांग हरि हरि।

▲ ▲ ▲ ▲

हमारे व्रज के रखवाले, कन्हैया राधिकारानी।
कन्हैया राधिकारानी, कन्हैया राधिकारानी॥ 1॥
हमारे नैनों के तारे, कन्हैया राधिकारानी।
सहारा बे – सहारों के, कन्हैया राधिकारानी॥ 2॥

▲ ▲ ▲ ▲

जय यशोदानन्दन कृष्ण गोपाल गोविन्द।
जय मदनमोहन हरि अनन्त मुकुन्द॥ 1॥
जय अच्युत माधव राम वृन्दावनचन्द्र।
जय मुरलीवदन श्याम गोपीजनानन्द॥ 2॥

▲ ▲ ▲ ▲

जय गोविन्द जय गोपाल, केशव माधव दीन दयाल।
श्यामसुन्दर कन्हैयालाल, गिरिवरधारी नन्ददुलाल॥ 1॥
अच्युत केशव श्रीधर माधव,गोपाल गोविन्द हरि।
यमुना पुलिन में वंशी बजाय, नटवर वेशधारी॥ 2॥

▲ ▲ ▲ ▲

कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण हे॥ 1॥
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण रक्षमाम्।
कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण पाहिमाम्॥ 2॥
राम राघव राम राघव राम राघव रक्षमाम्।
कृष्ण केशव कृष्ण केशव कृष्ण केशव पाहिमाम्॥ 3॥

▲ ▲ ▲ ▲

यशोदा मैया की जै, नन्द बाबा की जै, बोलो लड्डू गोपाल की जै जै जै।
यशोदा मैया की जै, नन्द बाबा की जै, बोलो नन्द के लाला की जै जै जै॥
राधा रानी की जै, महारानी की जै, बोलो बरसाने वाली की जै जै जै।
गिरिधारी की जै, बनवारी की जै, वृषभानु दुलारी की जै जै जै॥
राधा कुण्ड की जै, श्याम कुण्ड की जै, गिरिराज गोवर्धन की जै जै जै।

▲ ▲ ▲ ▲

राधे श्याम भजो, श्रीकृष्ण भजो , मन मेरे, कट जायेंगे बन्धन तेरे।
राधे श्याम भजो, श्रीकृष्ण भजो , मन मेरे, कट जायेंगे बन्धन तेरे॥
जिसने कृष्ण नाम गुण गाया , उसके संकट पास नहीं आया।
ऋषियों ने कहा, वेदों ने कहा , मन मेरे, कट जायेंगे संकट तेरे॥
तूने हीरा सा जनम पाया और विषयों के बीच में गंवाया।
राधेश्याम न जपिया मन मेरे , कैसे जायेंगे संकट तेरे॥
राधेश्याम भजो श्रीकृष्ण भजो ....

▲ ▲ ▲ ▲

राधे-श्याम चरण सुखदायी, भजन करो भाई, ये जीवन दो दिन का।
ये जीवन दो दिन का, ये जीवन दो दिन का॥ राधे-श्याम चरण.........
ये जीवन है माटी का ढेला। बूँद पड़े गल जाई, पता भी न पाई,
ये जीवन दो दिन का॥ राधे-श्याम चरण.........
ये जीवन है जंगल की लकड़ी। आग लगे जल जाई, पता भी न पाई,
ये जीवन दो दिन का॥ राधे-श्याम चरण.........
ये जीवन है कपूर की टिकिया। हवा लगे उड़ जाई पता भी न पाई,
ये जीवन दो दिन का॥ राधे श्याम चरण सुखदायी।

▲ ▲ ▲ ▲

ये प्रेम सदा भरपूर रहे, गुरुदेव तुम्हारे चरणों में।
यह अरज़ मेरी मंजूर रहे, गुरुदेव तुम्हारे चरणों में॥
जीवन की मैंने सौंप दी है, अब डोर तुम्हारे हाथों में।
उद्धार पतन अब मेरा है, गुरुदेव तुम्हारे चरणों में॥
संसार असार है सार नहीं, बाकी न रही अब भूख कहीं।
मैं हूँ संसार के बंधन में, संसार तुम्हारे चरणों में॥
आँखों में सदा यह ध्यान रहे, और मन चरणों में लगा रहे।
यह अन्त समय की अरज़ी है, गुरुदेव तुम्हारे चरणों में॥
यह बार-बार विनय करता हूँ, आगे तुम्हारी मरज़ी है।
यह माँग सभी भक्तों की है, गुरुदेव तुम्हारे चरणों में॥

▲ ▲ ▲ ▲

श्रीगौरहरि कीर्त्तन

जय शचीनन्दन जय गौरहरि।
गदाधर प्राणधन संकीर्तन विहारी॥
जय शचीनन्दन जय गौर हरि।
विष्णु प्रिया प्राणधन नदिया विहारी॥
जय शचीनन्दन गौर गुणाकर।
प्रेम परशमणि भाव रस सागर॥

▲ ▲ ▲ ▲

विरह कीर्तन

कहाँ कृष्ण प्राणनाथ मुरलीवदन
कहाँ जाउँ कहाँ पाऊँ व्रजेन्द्रनन्दन।
काहरे कहिब कथा केबा जाने मोर दुःख,
व्रजेन्द्रनन्दन बिना फाटे मोर बुक॥

▲ ▲ ▲ ▲

नन्द के आनन्द भयो जय कन्हैया लाल की।
हाथी दीन्हें, घोड़ा दीन्हें और दीन्हीं पालकी॥
रतन दीन्हें, हार दीन्हें, गैया ब्याई हालकी।
कंठा और कढूला दीन्हें, मुक्ता दीन्हीं माल की॥
कढ़े दीन्हें, छड़ें दीन्हीं, बिन्दी दीन्हीं भाल की।
सुरमा दिये, दर्पण दिये, कंघी दीन्हीं बाल की॥
जय यशोदा लाल की, जय दाऊ दयाल की।
जय बोलो गोपाल की॥

▲ ▲ ▲ ▲

ओ मइया तेरे द्वारे यशोदा तेरे द्वारे
बाला जोगी आयो, बाला जोगी आयो
अंग विभूति गले रुद्रमाला
शेष नाग लिपटायो। ओ मैया.........
बाँको तिलक भाल चन्द्रमा
घर घर अलख जगायो। ओ मैया.........
लेकर भिक्षा चली नंदरानी कंचन थाल भरायो
लो भिक्षा जोगी जाओ आसन पर
मेरो बालक डरायो। ओ मैया.........
न चहिये तेरी दौलत दुनियाँ,
न ये कंचन माया
अपने बालक को दर्शन करादे मइया
मैं दर्शन को आया। ओ मैया.........
श्रीकृष्ण शरणं मम बोलो श्रीकृष्ण शरणं मम,
पंच देव परिक्रमा करके शिंगी नाद बजायो
सूरश्याम बलिहारी कन्हैया
जुग जुग जियो तेरो जायो। ओ मैया.........

▲ ▲ ▲ ▲

राधे तेरे चरणों की यदि धूल ही मिल जाये,
सच कहता हूँ मेरी तकदीर बदल जाये।
सुनते हैं तेरी महिमा दिन–रात बरसती है,
एक बूँद जो मिल जाये, मन की कली खिल जाये।
राधे तेरे चरणों की..........
मेरा मन बड़ा चञ्चल है, कैसे तेरा भजन करूँ,
जितना इसे समझाऊँ, उतना ही मचल जाये।
राधे तेरे चरणों की..........

राधे मन से गिराना ना, चाहे कुछ भी सज़ा देना,
एक बार जो गिर जाये, मुश्किल ही संभल पाये।
राधे तेरे चरणों की..........
राधे इस जीवन की बस एक तमन्ना है,
तुम सामने हो मेरे, मेरा दम ही निकल जाये।
राधे तेरे चरणों की यदि धूल ही मिल जाये॥

▲ ▲ ▲ ▲

राधा नाम परम सुखदाई।
लहर–लहर श्रीश्यामा जु की, मन में मेरे समाई॥
रट–रट राधा जनम बिताऊँ, ब्रज गोपिन कूँ शीश नवाऊँ।
महिमा कहि नहिं जई, राधा नाम परम सुखदाई।
ब्रज त्यज कै मैं कहिं नहिं जाऊँ, रसिक संतन के दर्शन पाऊँ।
जग से प्रीति हटाई, राधा नाम परम सुखदाई॥

▲ ▲ ▲ ▲

श्री राम–नवमी

आज अवधपुरी आनन्द छायो।
घर घर मंगलचार बधाई, कौशल्या रानी सुत जायो॥
शुभ नक्षत्र पुनर्वसु नौमी, चैत्रमास सब भांति सुहायो।
भौमवार वर मध्य दिवस के, श्रीरघुवीर जनम तब पायो।।
निगमागम जाकी महिमा को, गावत गावत पार न पायो।
सो महाराज काज भक्तन के, नृप दशरथ को कुंवर कहायो॥
जाके दरशन को सुर तरसें, ताहि धाय लै कण्ठ लगायो।
नारायण अपनी भक्ति को, जग में प्रगट प्रभाव दिखायो॥

▲ ▲ ▲ ▲

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौशल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी॥
लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुज चारी।
भूषण बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥
कह दुई कर जोरि अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुन ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता॥
करुना सुखसागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता॥
ब्रह्माण्ड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै॥
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै॥
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा॥
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा॥

▲ ▲ ▲ ▲

चारों ललवा प्रकट भये आज, अवध में लडुवा बँटे।
लडुवा बँटे मीठे मेवा बँटे झीनी झीनी उड़े रे गुलाल।
बँदनवार बँधावो मोरी बहना परदे लगावो जरी हार॥
मोतियन चौक पुरावो मोरी बहिना, सुवरण कलश सजाय।
केसर कस्तूरी की भर दो तलैया बरसा दो मूसलाधार॥
गैया के दूध की खीर घुटावो ब्राह्मण जिमावो अपार।
छटी पुजावो गीत सब गावो मोहरों की कर दो उछाल॥

▲ ▲ ▲ ▲

ठुमक चलत रामचन्द्र बाजत पैजनियाँ,
ठुमक, ठुमक, ठुमक, ठुमक॥
खिलखिलात उठत धाये गिरत भूमि लटपटाये।
धायें मायें गोद लेत दसरथ की रनियाँ॥
विद्रुम से अरुण अधर बोलत मृदु वचन मधुर।
सुन्दर नासिका बीच लटकत लटकनियाँ॥
मेवा मोदक रसाल, मन भावे से लेयो लाल।
और लेयो रुचिर पान कञ्चन झुनझुनियाँ।
तुलसीदास अति आनन्द निरख के मुखारविन्द।
रघुवर की छवि समान, रघुवर मुखवनियाँ॥

▲ ▲ ▲ ▲

कभी कभी भगवान को भी भक्तों से काम पड़े।
जाना था गंगा पार प्रभु केवट की नाव चढ़े॥
अवध छोड़ प्रभु वन को धाये, सियाराम लखन गंगा तट आये।
केवट मन ही मन हरसाये, घर बैठे प्रभु दरशन पाये।
हाथ जोड़कर प्रभु के आगे केवट मगन खड़े॥ जाना था........
प्रभु बोले तुम नाव चलाओ, पार हमें केवट पहुँचाओ,
केवट बोला सुनो हमारी, चरण धूलि की महिमा भारी।
मैं गरीब नैया मोरी, नारी न होय पड़े॥ जाना था........
केवट दौड़ के जल भर लाये, चरण धो, चरणामृत पाये,
वेद ग्रन्थ जिनके यश गावें, केवट उनको नाव चढ़ावे।
बरसे फूल गगन से ऐसे, भक्त के भाग बड़े॥ जाना था........
चली नाव गंगा की धारा, सियाराम लखन को पार उतारा,
प्रभु देने लगे नाव उतराई, केवट बोला नहीं रघुराई।
पार किया मैंने प्रभु तुमको, अब तुम मोहे पार करो। जाना था........

▲ ▲ ▲ ▲

जग में सुन्दर हैं दो नाम चाहे कृष्ण कहो या राम,
माखन ब्रज में एक चुरावे, एक बेर भीलनी के खावे।
प्रेम भाव से भरे अनोखे दोनों के हैं काम॥ जग में सुन्दर ......
एक हृदय में प्रेम बढ़ावे, एक ताप संताप मिटावे।
दोनों सुख के सागर हैं, दोनों पूरण काम॥ जग में सुन्दर .....
एक ने पापी कंस संहारे, एक दुष्ट रावण को मारे।
दोनों दीन के दुःख हैं हरते दोनों बल के धाम॥ जग में सुन्दर .....
एक राधिका के संग राजे, एक जानकी संग विराजे।
चाहे सीताराम कहो, चाहे बोलो राधे श्याम॥ जग में सुन्दर .....
दोनों हैं घट–घट के वासी, दोनों है आनन्द प्रकाशी।
राम श्याम के दिव्य भजन से मिलता है विश्राम॥ जग में सुन्दर .....

▲ ▲ ▲ ▲

मंगला–कीर्तन

जागो वंशीवारे ललना जागो मेरे प्यारे।
रजनी बीती भोर भयो है घर–घर खुले किवारे।
गोपी दही मथत सुनियत हैं कंगना के झनकारे॥
उठौ लालजी भोर भई है सुर–नर ठाड़े द्वारे।
गोप–ग्वाल सब करत कोलाहल जय–जय शब्द उचारे॥
माखन रोटी हाथ में लीन्हीं गौअन के रखवारे।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर शरण आईयाँ कूँ तारे॥

▲ ▲ ▲ ▲

गोविन्द-दामोदर स्तोत्र

गोविन्द मेरी यह प्रार्थना है भूलूं न मैं नाम कभी भी तुम्हारा,
निष्काम होके मैं दिन–रात गाऊँ, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति–हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥
माता यशोदा हरि को जगावे, जागो उठो मोहन नैन खोलो।
द्वारे खड़े गोप बुला रहे हैं, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति – हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥
नारी, धराधाम, सुबन्धु प्यारे, सन्मित्र, सद्बान्धव, द्रव्य सारे।
कोई न साथी, हरि को पुकारो, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति – हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥
नाता भला क्या जग से हमारा, आये यहाँ क्यों, कर क्या रहे हैं।
सोचो–विचारो, हरि को पुकारो, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति – हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥
प्यारे जरा तो मन में विचारो, क्या साथ लाये, क्या ले चलोगे।
जावे सदा संग यही पुकारो, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति – हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥
देहान्त काले, तुम सामने हो, वंशी बजाते, मनको लुभाते।
गाता यही मैं, तन नाथ त्यागूँ, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति – हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥
सच्चे सखा हैं, हरि ही हमारे, माता–पिता शील सुबन्धु प्यारे।
भूलो न भाई, दिन–रात गाओ, गोविन्द दामोदर माधवेति।
गोविन्द दामोदर माधवेति – हे कृष्ण हे यादव हे सखेति॥

▲ ▲ ▲ ▲

हे कृष्ण हे यादव हे सखेति, गोविन्द दामोदर माधवेति।
डारि मथानी दधि में किसी ने, तब ध्यान आयो दधि चोर का ही॥
गद–गद कंठ पुकारती है, गोविन्द दामोदर माधवेति।
हे कृष्ण हे यादव हे सखेति, गोविन्द दामोदर माधवेति।

है लीपती आँगन नारि कोई, गोविन्द आवे मम् गृह खेले।
ध्यानस्थ में यही पद गा रही है, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
माता यशोदा हरि को जगावे, जागो उठो मोहन नैन खोलो।
द्वारे खड़े ग्वाल बुला रहे हैं, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
विद्यानुरागी निज पुस्तकों में, अर्थानुरागी धन संचयों में।
ये ही निराली ध्वनि गा रहे हैं, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
ले के करों में दोहनि अनोखी, गौ दुग्ध काढ़े अबला नवेली।
गौ दुग्ध धारा संग गा रही है, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
जागे पुजारी हरि मन्दिरों में, जाके जगावें हरि को सवेरे।
हे क्षीर सिन्धु अब नेत्र खोलो, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
सोया किसी का सुत पालने में, डोरी करों से जब खींचती है।
हो प्रेम मग्ना उसने पुकारा, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
रोया किसी का सुत पालने में, हो प्रेम मग्ना उसने पुकारा।
रोवो न गावो प्रभु संग मेरे, गोविन्द दामोदर माधवेति॥
कोई नवेली पति का जगावे, प्राणेश जागो अब नींद त्यागो।
बेला यही है हरि गीत गावो, गोविन्द दामोदर माधवेति॥

▲ ▲ ▲ ▲

श्याम! म्हाने चाकर राखो जी।
गिरधारी लाल चाकर राखो जी॥
चाकर रहसूँ बाग लगासूँ, नित उठ दरसण पासूँ।
वृन्दावन की कुञ्ज गलिन में तेरी लीला गांसू॥
चाकरी में दरसण पाऊँ, सुमिरण पाऊँ खरची।
भाव भगति जागीरी पाऊँ, तीनू बाताँ सरसी॥
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे, गल वैजन्ती माला।
वृन्दावन में धेनु चराये, मोहन मुरली वाला॥
हरे–हरे नित बाग लगाऊँ, बिच–बिच राखूँ क्यारी।
सांवरिया के दरसण पाऊँ, पहर कुसम्बी साड़ी॥

जोगी आया जोग करण कूँ, तप करणो संन्यासी।
हरि भजन कूँ साधु आया, वृन्दावन के वासी॥
मीरा के प्रभु गहर गंभीरा, सदा रहो जी धीरा।
आधी रात प्रभु दरसण दीन्हें, प्रेम नदी के तीरा॥

▲ ▲ ▲ ▲

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो ना कोई रे॥
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई रे॥
तात, मात, भ्रात, बन्धु, आपनो न कोई रे॥
छाँड़ि दई कुल की कानि कहा करिहैं कोई रे।
संतन ढिंग बैठि–बैठि लोक लाज खोई रे॥
चूनरी के कीये टूक ओढ़ लीनी लोई रे।
मोती मूंगे उतार वनमाला पोई रे॥
अंसुवन जल सींचि–सींचि प्रेम बेलि बोई रे।
अब तो बेलि फैल गई आनन्द फल होई रे॥
दूध की मथनियाँ बड़े प्रेम से बिलोई रे।
माखन जब काढ़ि लीन्हों छाछ पावै कोई रे॥
भगति देखि राज भई जगत देखि रोई रे।
दासी मीरा लाल गिरिधर तारो अब मोही रे॥

▲ ▲ ▲ ▲

श्याम तुझे पाने का, मेरे मोहन तुझे पाने का सत्संग ही बहाना है।
सब दुःख कट जायेंगे, सारे दुःख मिट जायेंगे।
सांवरे को पाने का सत्संग ही बहाना है।
किसने जन्म दिया कान्हा किसने पाला है।
देवकी ने जन्म दिया यशोदा ने पाला है।
नंद जी की गोदी में मेरे श्याम का ठिकाना है।

कहाँ–कहाँ देखा तुझे कहाँ कहाँ पाया है।
ग्वालों में देखा तुझे, गोपियों में पाया है।
वृन्दावन की गलियों में मेरे श्याम का ठिकाना है।
कौरवों में देखा तुझे, पाण्डवों में पाया है।
अर्जुन के रथ के ऊपर मेरे श्याम का ठिकाना है।
भक्तों के हृदय में मेरे श्याम का ठिकाना है।
श्याम तुझे पाने का सत्संग ही बहाना है।

▲ ▲ ▲ ▲

ब्रज के पद

वृन्दावन सों वन नहीं, नन्दगाँव सों गाँव।
वंशीवट सों वट नहीं, कृष्ण नाम सों नाम॥

मेरी भव बाधा हरो राधा नागरि सोय।
जा तन पै झाँई पड़े श्याम हरित द्युति होय॥

राधा मेरी स्वामिनी, मैं राधे को दास।
जनम–जनम मोहे दीजियो, श्रीवृन्दावन को वास॥

सब द्वारन कौ छाँड़ के, मैं आयो तेरे द्वार।
श्रीवृषभानु की लाड़ली, जरा मेरी ओर निहार॥

वृन्दावन के वृक्ष कों मरम न जाने कोय।
डाल–डाल और पात–पात में श्रीराधे–राधे होय॥

राधा राधा नाम को , जो सपने में जो लेत।
ताकूँ मोहन साँवरो, झट अपनों कर लेत॥

चलो सखी वहाँ चालिये जहाँ बसत ब्रजराज।
गोरस बेचत हरि मिलें एक पन्थ दो काज॥

बृज चौरासी कोस में, चार गाँव निज धाम।
वृन्दावन और मधुपुरी, बरसानों नन्दगांव॥

मुक्ति कहत गोपाल सों मेरी मुक्ति बताए।
ब्रज रज उड़ मस्तक लगे मुक्ति मुक्त ह्वै जाय॥

जय जय श्रीराधारमण, जय जय नवलकिशोर।
जय गोपी चितचोर प्रभु, जय जय माखनचोर॥

ब्रज रज में ये रज मिलि, रज में यमुना नीर।
धन्य भाग्य वा जीव के, जो जामें तजे शरीर॥

राधा राधा कहत ही सब व्याधा मिट जाय।
कोटि जनम की आपदा, नाम लिये सों जाय॥

▲ ▲ ▲ ▲

हरि बोल मेरी रसना घड़ी–घड़ी,
व्यर्थ बिताती है क्यों जीवन मुख मन्दिर में पड़ी–पड़ी॥
हरि बोल ....
जाग उठे तेरी ध्वनि सुनकर, इस काया की कड़ी–कड़ी॥
हरि बोल ....
नित्य निकाल गोविन्द नाम की, श्वास–श्वास से लड़ी–लड़ी॥
हरि बोल ....
बरसा दे प्रभु नाम सुधारस, बिन्दु–बिन्दु से झड़ी–झड़ी॥
हरि बोल ....

▲ ▲ ▲ ▲

हरि से लागि रहो रे भाई! तेरी बनत–बनत बन जायी।
अंका तरे बंका तरे, तरे सुजन कसाई।
शुआ पढ़ाके गणिका तरे, तरे मीराबाई॥
हरि से लागि रहो रे भाई ....
ऐसी भक्ति कर रे मित्र, छोड़ कपट चतुराई।
सेवा, वन्दन और दीनता, सहजे मिले यदुराई॥
हरि से लागि रहो रे भाई ....

▲ ▲ ▲ ▲

पार करेंगे नैया रे, भज कृष्ण कन्हैया,
कृष्ण कन्हैया, दाऊजी के भैया।
कृष्ण कन्हैया, बंशी बजैया, माखन चुरैया रे,
भज कृष्ण कन्हैया॥ 1॥
कृष्ण कन्हैया, गिरवर उठैया,
कृष्ण कन्हैया रास रचैया॥ 2॥ पार करेंगे ....
मित्र सुदामा तन्दुल लाये, गले लगा प्रभु भोग लगाये,
कहाँ रहे हो भैया रे॥ 3॥ भज....
अर्जुन का रथ रण में हाँका, सांवलिया गिरिधारी बाँका,
कालीनाग नथैया रे॥ 4॥ भज....
द्रुपदसुता जब दुष्टों ने घेरी, राखि लाज, करि न देरी,
आ गये चीर बढ़ैया रे॥ 5॥ भज.....

▲ ▲ ▲ ▲

कृष्ण जिनका नाम है, गोकुल जिनका धाम है,
ऐसे श्रीभगवान् को बारम्बार प्रणाम है॥ 1॥
यशोदा जिनकी मैया हैं, नन्दजी बपैया हैं,
ऐसे श्रीगोपाल को, बारम्बार प्रणाम है॥ 2॥
राधा जिनकी प्यारी हैं, कृष्णजी मुरारि हैं,
ऐसे श्रीघनश्याम को, बारम्बार प्रणाम है॥ 3॥

लूट लूट दधि माखन खायो, ग्वालबाल संग धेनु चरायो,
ऐसे लीलाधाम को, बारम्बार प्रणाम है ॥ 4 ॥
द्रुपदसुता की लाज बचायो, गज और ग्राह के फन्द छुड़ायो,
ऐसे कृपाधाम को, बारम्बार प्रणाम है ॥ 5 ॥
कुरु–पाण्डव को युद्ध मचायो, अर्जुन को उपदेश सुनायो,
ऐसे दीन–नाथ को, बारम्बार प्रणाम है ॥ 6 ॥

▲ ▲ ▲ ▲

जय माधव, मदन मुरारि, राधे श्याम श्यामा–श्याम,
जय केशव, कलिमलहारी। राधे श्याम.....
सुन्दर–कुण्डल नैन विशाला, गल सोहे वैजन्तीमाला,
या छवि की बलिहारी। राधे श्याम.....
कबहुँ लूट–लूट दधि खायो, कबहुँ मधुवन रास रचायो,
नाचत विपिनबिहारी। राधे श्याम.....
ग्वालबाल संग धेनु चराई, वन वन भ्रमत फिरे यदुराई,
काँधे कामर कारी। राधे श्याम.....
चुरा चुरा नवनीत जो खायो, व्रज–वनितन पै नाम धरायो,
माखनचोर मुरारि। राधे श्याम.....
इक दिन मान इन्द्र को मारो, नख ऊपर गोवर्धन धारो,
नाम पड़ो गिरिधारी। राधे श्याम.....
दुर्योधन को भोग न खायो, रूखो साग विदुर घर खायो,
ऐसे प्रेम पुजारी। राधे श्याम.....
करुणा कर द्रौपदी पुकारी, पट में लिपट गये बनवारी,
निरख रहे नर नारी। राधे श्याम.....

▲ ▲ ▲ ▲

कृपा करो हम पर श्यामसुन्दर, हे भक्तवत्सल कहाने वाले।
तुम्हीं हो धनु–शर चलाने वाले, तुम्हीं हो मुरली बजाने वाले॥ 1॥
कृपा करो ....

तुम्हें पुकारा था द्रौपदी ने, बचाया प्रह्लाद को तुम्हीं ने।
तुम्हीं हो खम्बे से आने वाले, तुम्हीं हो साड़ी बढ़ाने वाले॥ 2॥
कृपा करो.......

तुम्हीं ने व्रज से प्रलय हटाया, समुद्र पे सेतु बाँध बंधाया।
ओ जल पे पत्थर तराने वाले, ओ नख पे गिरिवर उठाने वाले॥ 3॥
कृपा करो ......

उधर सुदामा गरीब ब्राह्मण, इधर भी था वो भक्त विभीषण।
उसे भी लंका दिलाने वाले, इस पर भी त्रिलोकी लुटाने वाले॥ 4॥
कृपा करो ....

हे कौशल्या सुत, यशोदानन्दन,दया करो हे शची के नन्दन।
छुड़ा दो मेरे भी जग के फन्दे, ओ गज के फन्दे छुड़ाने वाले॥ 5॥
कृपा करो ....

▲ ▲ ▲ ▲

करो हरि का भजन प्यारे, उमरिया बीती जाती है।
उमरिया बीती जाती है, उमरिया बीती जाती है॥ 1॥ करो हरि का ...
पूर्व, शुभ कर्म करि आया, मानुष तन धरणी पर पाया।
फिर विषयों में मन भरमाया, मौत नहीं याद आती है॥ 2॥ करो हरि का ...
बालापन सब खेल में खोया, यौवन काम क्रोध वश होया।
वृद्ध समय जब आलस आयो, आशा मन को सताती है॥ 3॥ करो हरि का ...
कुटुम्ब परिवारा, सुत और दारा, स्वप्न सम देखो यह जग सारा।
माया मोह का जाल बिछाया, नहीं यह संग जाती है॥ 4॥ करो हरि का ...
जो हरि चरणन में चित लावे, सो भव सागर से तर जावे।
कृष्णानन्द, सो भक्ति पद पावे, वेद–पुराण सुनाती हैं॥ 5॥ करो हरि का ...

▲ ▲ ▲ ▲

नगर संकीर्तन के प्रारम्भ में जय-ध्वनि व वन्दना के बाद मठ के आचार्यदेव, परम पूज्यपाद त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी जो संकीर्तन करते हैं :-

जय दाओ जय दाओ [अर्थात् जय दीजिए जय दीजिए]
पतितपावन गुरुदेवेर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय गुरुदेवेर, जय दाओ जय दाओ
जय गुरुदेव बोले, जय दाओ जय दाओ
श्रीमाधव गोस्वामी विष्णुपादेर, जय दाओ जय दाओ
पतितपावन प्रभुपादेर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय प्रभुपादेर, जय दाओ जय दाओ
जगद्गुरु प्रभुपादेर, जय दाओ जय दाओ
जय प्रभुपाद बोले, जय दाओ जय दाओ
गौर किशोर दास बाबाजीर, जय दाओ जय दाओ
भक्तिविनोद ठाकुरेर, जय दाओ जय दाओ
जगन्नाथ दास बाबाजीर, जय दाओ जय दाओ
बलदेव विद्याभूषणेर, जय दाओ जय दाओ
विश्वनाथ चक्रवर्तीर, जय दाओ जय दाओ
नरोत्तम ठाकुरेर, जय दाओ जय दाओ
श्यामानंद प्रभुवरेर, जय दाओ जय दाओ
श्रीनिवास आचार्येर, जय दाओ जय दाओ
कृष्णदास कविराजेर, जय दाओ जय दाओ
रूपानुग गुरुवर्गेर, जय दाओ जय दाओ
श्रीस्वरूप दामोदरेर, जय दाओ जय दाओ
गौरांगेर भक्त वृन्देर, जय दाओ जय दाओ
श्रीवास पण्डितेर, जय दाओ जय दाओ
गौरशक्ति गदाधरेर, जय दाओ जय दाओ
नामाचार्य हरिदासेर, जय दाओ जय दाओ

सीतापति श्रीअद्वैतेर, जय दाओ जय दाओ
पतितपावन नित्यानन्देर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय नित्यानन्देर, जय दाओ जय दाओ
जय नित्यानन्द बोले, जय दाओ जय दाओ
पतितपावन श्रीगौरांगेर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय श्रीगौरांगेर, जय दाओ जय दाओ
जय श्रीगौरांग बोले, जय दाओ जय दाओ
निताइ–गौरांग बोले, जय दाओ जय दाओ
निताइ–गौरांग, निताइ–गौरांग
एइ बार आमाय दया करो, निताइ–गौरांग
अपराध क्षमा करो, निताइ–गौरांग
सेवा अधिकार दियो, निताइ–गौरांग
नित्यानन्द हे! गौरहरि हे!
कहाँ नित्यानंद! कहाँ गौरहरि!
कहाँ नित्यानंद! कहाँ गौरहरि!
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

भक्त–वत्सल श्रीनृसिंह भगवान के प्रकट दिवस पर मठ के आचार्यदेव, परम पूज्यपाद त्रिदण्डि स्वामी श्री श्रीमद् भक्ति बल्लभ तीर्थ गोस्वामी महाराज जी श्रीनृसिंह देव जी की व श्रीगुरु–वैष्णवों की संकीर्तन के साथ जो कृपा प्रार्थना करते हैंः–

श्रीनृसिंह देव जी की स्तुति

इतो नृसिंहः ! परतो नृसिंहो ! यतो यतो यामि ततो नृसिंहः ।
बहिर्नृसिंहो ! हृदये नृसिंहो ! नृसिंहमादिं शरणं प्रपद्ये ॥
नमस्ते नरसिंहाय प्रह्लादाह्लाददायिने ।
हिरण्यकशिपोर्वक्षः शिलाटंकनखालये ॥
वागीशा यस्य वदने लक्ष्मीर्यस्य च वक्षसि ।
यस्यास्ते हृदये संवित् तं नृसिंहमहं भजे ॥
श्रीनृसिंह जय नृसिंह जय जय नृसिंह ।
प्रह्लादेश ! जय पद्मामुखपद्म – भृंग ॥

जय दाओ, जय दाओ,
नरसिंह देवेर, जय दाओ जय दाओ
शुभ आविर्भाव तिथिवरार, जय दाओ जय दाओ
आविर्भाव महोत्सवेर, जय दाओ जय दाओ
भक्ति–विघ्न विनाशनेर, जय दाओ जय दाओ
सर्व–विघ्न विनाशनेर, जय दाओ जय दाओ
भकत–वत्सल हरिर, जय दाओ जय दाओ
प्रह्लाद महाराजेर, जय दाओ जय दाओ
पतित पावन गुरुदेवेर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय गुरुदेवेर, जय दाओ जय दाओ
जय गुरुदेव बोले, जय दाओ जय दाओ
श्रीमाधव गोस्वामी विष्णुपादेर, जय दाओ जय दाओ

पतित पावन प्रभुपादेर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय प्रभुपादेर, जय दाओ जय दाओ
जय प्रभुपाद बोले, जय दाओ जय दाओ
गौर किशोर दास बाबाजीर, जय दाओ जय दाओ
भक्ति विनोद ठाकुरेर, जय दाओ जय दाओ
जगन्नाथ दास बाबाजीर, जय दाओ जय दाओ
बलदेव विद्याभूषणेर, जय दाओ जय दाओ
विश्वनाथ चक्रवर्तीर, जय दाओ जय दाओ
नरोत्तम ठाकुरेर, जय दाओ जय दाओ
श्यामानंद प्रभुवरेर, जय दाओ जय दाओ
श्रीनिवास आचार्येर, जय दाओ जय दाओ
कृष्णदास कविराजेर, जय दाओ जय दाओ
रूपानुग गुरुवर्गेर, जय दाओ जय दाओ
रघुनाथ दास गोस्वामीर, जय दाओ जय दाओ
गोपाल भट्ट गोस्वामीर, जय दाओ जय दाओ
श्रीजीव गोस्वामीर, जय दाओ जय दाओ
रघुनाथ भट्ट गोस्वामीर, जय दाओ जय दाओ
सनातन गोस्वामीर, जय दाओ जय दाओ
श्रीरूप गोस्वामीर, जय दाओ जय दाओ
श्रीस्वरूप दामोदरेर, जय दाओ जय दाओ
गौरांगेर भक्त वृन्देर, जय दाओ जय दाओ
श्रीवास पण्डितेर, जय दाओ जय दाओ
गौरशक्ति गदाधरेर, जय दाओ जय दाओ
नामाचार्य हरिदासेर, जय दाओ जय दाओ
सीतापति श्रीअद्वैतेर, जय दाओ जय दाओ
पतितपावन नित्यानन्देर, जय दाओ जय दाओ
करुणामय नित्यानन्देर, जय दाओ जय दाओ
जय नित्यानन्द बोले, जय दाओ जय दाओ
पतित पावन श्रीगौरांगेर, जय दाओ जय दाओ

करुणामय श्रीगौरांगेर, जय दाओ जय दाओ
जय श्रीगौरांग बोले, जय दाओ जय दाओ
निताइ–गौरांग बोले, जय दाओ जय दाओ
निताइ–गौरांग––निताइ–गौरांग
एइ बार आमाय दया करो, निताइ–गौरांग
अपराध क्षमा करो, निताइ–गौरांग
सेवा अधिकार दाओ, निताइ–गौरांग
जय दाओ जय दाओ
श्रीराधा मदन मोहनेर, जय दाओ जय दाओ
श्रीराधा गोविन्देर, जय दाओ जय दाओ
श्रीराधा गोपीनाथेर, जय दाओ जय दाओ
श्रीराधा माधवेर, जय दाओ जय दाओ
गुरुदेव प्राणधनेर, जय दाओ जय दाओ
राधे–राधे–गोविन्द जय जय
कानु मन–मोहिनी, राधे राधे
गोविन्दानन्दिनी,राधे राधे
वृषभानुनन्दिनी, राधे राधे
वृन्दावन विलासिनी, राधे राधे
अष्टसखीर शिरोमणि, राधे राधे
प्रेम भक्ति प्रदायिनी, राधे राधे
परम करुणामयी, राधे राधे
अपराध क्षमा करो, राधे राधे
सेवा अधिकार दाओ, राधे राधे
कृपा करो कृपामयी, राधे राधे
तोमार कांगाल तोमाय डाके, राधे राधे
राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे।
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे॥
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

श्रीनाम–ध्वनियाँ

1– जय शचीनन्दन जय गौरहरि, गदाधर प्राणधन नदिया–विहारी।

2– जय शचीनन्दन गौरगुणाकर। प्रेम–पारसमणि भाव–रस–सागर॥

3– जय श्रीराधे जय नन्दनन्दन, जय जय गोपी जन–मन रन्जन।

4– गोविन्द जय जय गोपाल जय जय।
राधारमण हरि गोविन्द जय जय॥

5– जय राधे, जय राधे राधे, जय राधे जय श्रीराधे।
जय कृष्ण जय कृष्ण कृष्ण, जय कृष्ण जय श्रीकृष्ण॥

6– बोल हरि बोल हरि हरि हरि बोल, केशव माधव गोविन्द बोल।

7– श्रीराधाबल्लभ कुन्जबिहारी, मुरलीधर गोवर्धनधारी।

8– श्यामसुन्दर मदनमोहन–वृन्दावनविहारी।
हरि वृन्दावनविहारी गोवर्धन गिरिधारी।

9– राधे कृष्ण, गोविन्द, गोपाल, केशव, माधव।

10– श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव।

11– नन्द के आनन्द भयो, जय कन्हैयालाल की।

12– राधे राधे राधे जय जय जय श्रीराधे।

13– राधे राधे गोविन्द, गोविन्द राधे।

14– जय श्रीश्यामा, जय श्रीश्याम, जय जय श्रीवृन्दावनधाम।

15– जय जय राधा रमण गिरिधारी, गिरिधारी श्याम बनवारी।

16– मेरे राधा रमण गिरिधारी, गिरिधारी श्याम बनवारी।

17– जै जै गोपाला, गोपाला, मुरली मनोहर नन्दलाला।

18– जय जय राधा रमण हरिबोल जय जय राधा रमण हरि बोल॥

सत्ययुग का महामन्त्र

नारायणपरावेदा नारायणपराक्षराः ।
नारायणपरामुक्ति नारायणपरागतिः ॥

त्रेतायुग का महामन्त्र

राम नारायणानन्त मुकुन्द मधुसूदन।
कृष्ण केशव कंसारे हरे वैकुण्ठ वामन॥

द्वापरयुग का महामन्त्र

हरे, मुरारे, मधुकैटभारे, गोपाल, गोविन्द–मुकुन्द–शौरे।
यज्ञेश नारायण कृष्ण विष्णो, निराश्रयं मां जगदीश रक्ष।

कलियुग का महामन्त्र

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

पंचतत्व

श्रीकृष्णचैतन्य प्रभु नित्यानन्द।
श्रीअद्वैत गदाधर श्रीवासादि गौरभक्तवृन्द।

श्रीनाम-महिमा

चेतोदर्पणमार्जनं भवमहादावाग्निनिर्वापणं
श्रेयःकैरवचन्द्रिकावितरणं विद्यावधूजीवनम्।
आनन्दाम्बुधिवर्धनं प्रतिपदं पूर्णामृतास्वादनं
सर्वात्मस्नपनं परं विजयते श्रीकृष्णसंकीर्तनम्॥ 1॥

—श्री चैतन्य महाप्रभु

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्य्यायां कलौ तद्धरिकीर्त्तनात् ॥

—श्रीमद्भागवत

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्त्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंगः परं ब्रजेत् ॥

—श्रीमद्भागवत

ध्यायन् कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्च्चयन्।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ संकीर्त्त्य केशवम्॥

—श्री पद्मपुराण

ॐ आऽस्य जानन्तो नाम चिद्विवक्तन् महस्ते।
विष्णो सुमतिं भजामहे ॐ तत्सत्॥

—ऋगवेद प्रथम मंडल १५६ सुक्त

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥

—वृहन्नारदीय पुराण

भजनेर मध्ये श्रेष्ठ नवविधा भक्ति,
कृष्णप्रेम कृष्णदिते धरे महाशक्ति।
तारमध्ये सर्व-श्रेष्ठ नाम-संकीर्तन,
निरपराधे नाम लैले पाय प्रेमधन॥

—श्रीचैतन्यचरितामृत

गो-कोटि-दानं ग्रहणे खगस्य, प्रयाग-गंगोदक कल्पवासः
यज्ञायुतं मेरु-सुवर्ण-दानं, गोविन्द-नाम्नः न समं शतांशै॥

—श्रीस्कन्द पुराण

श्री श्रीगुरु गौरांगौ जयतः

दैनिक वन्दना

सपरिकर–श्रीहरि–गुरु–वैष्णव वन्दना

वन्देऽहं श्रीगुरोः श्रीयुतपदकमलं श्रीगुरून् वैष्णवांश्च,
श्रीरूपं साग्रजातं सहगण - रघुनाथान्वितं तं सजीवम्।
साद्वैतं सावधूतं परिजनसहितं कृष्णचैतन्यदेवं,
श्रीराधाकृष्णपादान् सहगण–ललिता श्रीविशाखान्वितांश्च॥ 1॥

श्रीगुरुदेव–प्रणाम

ॐ अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥ 2॥

श्रील माधव गोस्वामी महाराज–प्रणाम

नम ॐ विष्णुपादाय रूपानुग प्रियाय च।
श्रीमते भक्तिदयितमाधवस्वामी - नामिने॥

कृष्णाभिन्न–प्रकाश–श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे।
क्षमागुणावताराय गुरवे प्रभवे नमः॥

सतीर्थप्रीतिसद्धर्म - गुरुप्रीति - प्रदर्शिने।
ईशोद्यान - प्रभावस्य प्रकाशकाय ते नमः॥

श्रीक्षेत्रे प्रभुपादस्य स्थानोद्धार - सुकीर्तये।
सारस्वत गणानन्द - सम्वर्धनाय ते नमः॥ 3 ॥

श्रील प्रभुपाद–प्रणाम

नम ॐ विष्णुपादाय कृष्णप्रेष्ठाय भूतले।
श्रीमते भक्तिसिद्धान्त–सरस्वतीति नामिने॥

श्रीवार्षभानवीदेवीदयिताय कृपाब्धये।
कृष्णसम्बन्धविज्ञानदायिने प्रभवे नमः॥

माधुर्योज्वलप्रेमाढ्य-श्रीरूपानुगभक्तिद।
श्रीगौरकरुणाशक्तिविग्रहाय नमोऽस्तुते ॥
नमस्ते गौरवाणी श्रीमूर्त्तये दीनतारिणे।
रूपानुगविरुद्धापसिद्धान्त - ध्वान्तहारिणे ॥ 4 ॥

श्रील गौरकिशोर–प्रणाम

नमो गौरकिशोराय साक्षाद्वैराग्यमूर्त्तये ।
विप्रलम्भरसाम्भोधे! पादाम्बुजाय ते नमः ॥ 5 ॥

श्रीलभक्तिविनोद–प्रणाम

नमो भक्तिविनोदाय सच्चिदानन्द-नामिने।
गौरशक्तिस्वरूपाय रूपानुगवराय ते ॥ 6 ॥

श्रील जगन्नाथदास बाबाजी–प्रणाम

गौराविर्भावभूमेस्त्वं निर्देष्टा सज्जनप्रियः।
वैष्णवसार्वभौम-श्रीजगन्नाथाय ते नमः ॥ 7 ॥

श्रीवैष्णव प्रणाम

वाञ्छाकल्पतरुभ्यश्च कृपासिन्धुभ्य एव च।
पतितानां पावनेभ्यो वैष्णवेभ्यो नमो नमः ॥ 8 ॥

श्रीगौरांगमहाप्रभु–प्रणाम

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेमप्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्यनाम्ने गौरत्विषे नमः ॥ 9 ॥

श्रीसम्बन्धाधिदेव प्रणामः

जयतां सुरतौ पंगोर्मम मन्दमतेर्गती।
मत्सर्वस्वपदाम्भोजौ राधामदनमोहनौ ॥ 10 ॥

श्रीअभिधेयाधिदेव–प्रणाम

दीव्यद्वृन्दारण्यकल्पद्रुमाधः, श्रीमद्रत्नागारसिंहासनस्थौ।
श्रीश्रीराधा-श्रीलगोविन्ददेवौ, प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥ 11 ॥

श्रीप्रयोजनाधिदेव-प्रणाम

श्रीमान् रासरसारम्भी वंशीवटतटस्थितः।
कर्षण् वेणुस्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥ 12 ॥

श्रीतुलसी प्रणाम

वृन्दायै तुलसीदेव्यै प्रियायै केशवस्य च।
विष्णुभक्तिप्रदे देवि! सत्यवत्यै नमो नमः ॥ 13 ॥

श्रीगुरु-परम्परा

कृष्ण हैते चतुर्मुख, हय कृष्ण-सेवोन्मुख, ब्रह्मा हैते नारदेर मति।
नारद हइते व्यास, मध्व कहे व्यासदास, पूर्णप्रज्ञ पद्मनाभ-गति ॥
नृहरि माधव-वंशे, अक्षोभ्य परमहंसे, शिष्य बलि' अंगीकार करे।
अक्षोभ्येर शिष्य जय-तीर्थ नामे परिचय, ताँर दास्ये ज्ञानसिन्धु तरे॥
ताँहा हैते दयानिधि, ताँर दास विद्यानिधि, राजेन्द्र हइल ताँहा ह'ते।
ताँहार किंकर जय - धर्म नामे परिचय, परम्परा जान भालमते॥
जयधर्म-दास्ये ख्याति, श्रीपुरुषोत्तम यति, ताँ' ह' ते ब्रह्मण्यतीर्थ सूरि।
व्यासतीर्थ ताँर दास, लक्ष्मीपति व्यासदास, ताँहा ह' ते माधवेन्द्रपुरी॥
माधवेन्द्रपुरीवर, शिष्यवर श्रीईश्वर, नित्यानन्द, श्रीअद्वैत विभु।
ईश्वरपुरीके धन्य, करिलेन श्रीचैतन्य, जगद्गुरु गौरमहाप्रभु॥
महाप्रभु श्रीचैतन्य, राधा-कृष्ण नहे अन्य, रूपानुग जनेर जीवन।
विश्वम्भर प्रियंकर, श्रीस्वरूपदामोदर, श्रीगोस्वामी रूप-सनातन ॥
रूपप्रिय महाजन, जीव-रघुनाथ हन, ताँर प्रिय कवि कृष्णदास।
कृष्णदास प्रियवर, नरोत्तम सेवापर, याँर पद विश्वनाथ आश ॥
विश्वनाथ भक्तसाथ, बलदेव जगन्नाथ, ताँर प्रिय श्रीभक्तिविनोद।
महाभागवतवर, श्रीगौरकिशोरवर, हरिभजनेते याँर मोद ॥

श्रीवार्षभानवीवरा, सदा सेव्य-सेवापरा, ताँहार दयितदास नाम।
ताँहार परम प्रेष्ठ, रूपानुगजन श्रेष्ठ, माधव गोस्वामी गुणधाम ॥
श्रीभक्तिदयित ख्याति, सतीर्थ सज्जने प्रीति, दीन हीन अगतिर गति।
एइ सब हरिजन, गौरांगेर निज जन, ताँदेर उच्छिष्टे मोर मति ॥

श्रीगुरुदेवाष्टकम्

संसारदावानललीढलोक - त्राणाय कारुण्यघनाघनत्वम्।
प्राप्तस्य कल्याणगुणार्णवस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 1 ॥

महाप्रभोः कीर्तन नृत्यगीत - वादित्रमाद्यन्मनसो रसेन।
रोमाञ्चकम्पाश्रुतरंगभाजो, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम् ॥ 2 ॥

श्रीविग्रहाराधननित्यनाना, श्रृंगारतन्मन्दिरमार्ज्जनादौ।
युक्तस्य भक्तांश्च नियुन्जतोऽपि, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 3 ॥

चतुर्विधश्रीभगवत्प्रसाद - स्वाद्वन्नतृप्तान् हरिभक्तसंघान।
कृत्वैव तृप्तिं भजतः सदैव, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 4 ॥

श्रीराधिकामाधवयोरपार - माधुर्यलीलागुणरूपनाम्नाम्।
प्रतिक्षणास्वादनलोलुपस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 5 ॥

निकुन्जयूनो रतिकेलिसिद्ध्यै, या यालिभिर्युक्तिरपेक्षणीया।
तत्रातिदाक्षादतिवल्लभस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 6 ॥

साक्षाद्धरित्वेन समस्तशास्त्रै - रुक्तस्तथा भाव्यत एव सद्भिः।
किन्तु प्रभोर्यः प्रिय एव तस्य, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 7 ॥

यस्य प्रसादाद् भगवत्प्रसादो, यस्याप्रसादान्न गतिः कुतोऽपि।
ध्यायंस्तुवंस्तस्य यशस्त्रिसन्ध्यं, वन्दे गुरोः श्रीचरणारविन्दम्॥ 8 ॥

श्रीमद्गुरोरष्टकमेतदुच्चै -र्ब्राह्मे मुहूर्त्ते पठति प्रयत्नात्।
यस्तेन वृन्दावननाथसाक्षात् , सेवैव लभ्या जनुषोऽन्त एव ॥ 9 ॥

श्रीवैष्णव वन्दना

वृन्दावनवासी यत वैष्णवेर गण।
प्रथमे वन्दना करि सबार चरण॥ 1॥
नीलाचलवासी यत महाप्रभुर गण।
भूमिते पड़िया वन्दों सभार चरण॥ 2॥
नवद्वीपवासी यत महाप्रभुर भक्त।
सभार चरण वन्दों हैया अनुरक्त॥ 3॥
महाप्रभुर भक्त यत गौड़ देशे स्थिति।
सभार चरण वन्दों करिया प्रणति॥ 4॥
ये-देशे ये-देशे वैसे गौरांगेर गण।
ऊर्ध्वबाहु करि' वन्दों सबार चरण॥ 5॥
हइयाछेन हइबेन प्रभुर यत दास।
सभार चरण वन्दों दन्ते करि घास॥ 6॥
ब्रह्माण्ड तारिते शक्ति धरे जने-जने।
ए वेद-पुराणे गुण गाय येबा शुने॥ 7॥
महाप्रभुर गण सब पतितपावन।
ताइ लोभे मुइँ पापी लइनु शरण॥ 8॥
वन्दना करिते मुइँ कत शक्ति धरि।
तमो-बुद्धि दोषे मुइँ दम्भ मात्र करि॥ 9॥
तथापि मूकेर भाग्य मनेर उल्लास।
दोष क्षमि मो-अधमे कर निज दास॥ 10॥
सर्ववान्छासिद्धि हय, यमबन्ध छुटे।
जगते दुर्लभ हैया प्रेमधन लुटे॥ 11॥
मनेर वासना पूर्ण अचिराते हय।
देवकीनन्दन दास एइ लोभे कय॥ 12॥